तूफान

आचार्य चतुरसेन





मूल्य : दो रुपये

तूफान

पांचवां खण्ड

१

सत्रहवीं शताब्दी में पहली बार भारत का ब्रिटेन से सम्पर्क हुआ। यह संपर्क दो परस्पर-विरोधी संस्कृतियों का परस्पर टकराना-मात्र था। उन दिनों समूचा ब्रिटेन अर्धसभ्य किसानों का उजाड़ देश था। उनकी झोंपड़ियां नरसलों और सरकण्डों की बनी होती थीं, जिनके ऊपर मिट्टी या गारा लगाया हुआ होता था। घास-फूस जलाकर घर में आग तैयार की जाती थी, जिससे सारी झोंपड़ी में धुआं भर जाता था। धुएं को निकलने को कोई राह ही न होती थी। उनकी खुराक जौ, मटर, उड़द, कन्द और दरख्तों की छाल तथा मांस थी। उनके कपड़ों में जुएं भरी होती थीं। आबादी बहुत कम थी, जो महामारी और दरिद्रता के कारण आए दिन घटती जाती थी। शहरों की हालत गांवों से कुछ अच्छी न थी। शहरवालों का बिछौना भुस से भरा एक थैला होता था। तकिये की जगह लकड़ी का एक गोल टुकड़ा। शहरी लोग जो खुशहाल होते थे चमड़े का कोट पहनते थे। गरीब लोग हाथ-पैरों पर पुआल लपेटकर सरदी से जान बचाते थे। न कोई कारखाना था, न कारीगर। न सफाई का इन्तजाम, न रोगी होने पर चिकित्सा की व्यवस्था। सड़कों पर डाकू फिरते थे और नदियां तथा समुद्री मुहाने समुद्री डाकुओं से भरे रहते थे। उन दिनों दुराचार का तमाम यूरोप में बोलबाला था और आतशक-सिफलिस की बीमारी आम थी। विवाहित या अविवाहित, गृहस्थ, पादरी, यहां तक कि पोप दसवें लुई तक भी इस रोग से बचे न थे। पादरियों का बोलबाला था। ये पादरी बड़े दुराचारी होते थे। प्रसिद्ध था कि इन पादरियों

ने इंगलैंड की एक लाख स्त्रियों को भ्रष्ट किया था। कोई पादरी बड़े से बड़ा अपराध करने पर भी केवल थोड़े-से जुर्माने की सज़ा पाता था। मनुष्य-हत्या करने पर उसे केवल छः शिलिंग आठ पैंस—लगभग पांच रुपये—जुर्माना देना पड़ता था। ढोंग-पाखण्ड, जादू-टोना उनका व्यवसाय था।

सत्रहवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में लंदन नगर इतना गंदा था, और वहां के मकान इस कदर भद्दे थे कि उसे मुश्किल से शहर कहा जा सकता था। सड़कों की हालत ऐसी थी कि पहियेदार गाड़ियों का चलना खतरे से खाली न था। लोग लद्दू टट्टुओं पर दायें-बायें पालनों में असबाब की भांति लदकर यात्रा करते थे। उन दिनों तेज़ से तेज़ गाड़ी इंगलैंड में तीस से पचास मील का सफर एक दिन में तय कर सकती थी। अधनंगी स्त्रियां जंगली और भद्दे गीत गाती फिरती थीं और पुरुष कटार घुमा-घुमाकर लड़ाई के नाच नाचा करते थे। लिखना-पढ़ना बहुत कम लोग जानते थे। यहां तक कि बहुत-से लार्ड अपने हस्ताक्षर भी नहीं कर सकते थे। बहुधा पति कोड़ों से स्त्रियों को पीटा करते थे। अपराधी को टिकटिकी से बांधकर और पत्थर मार-मारकर मार डाला जाता था। औरतों की टांगों को सरे-बाज़ार शिकंजों में कसकर छोड़ दिया जाता था। शाम होने के बाद लंदन की गलियां सूनी, डरावनी और अंधेरी हो जाती थीं। उस समय कोई जीवट का आदमी ही घर से बाहर निकलने का साहस कर सकता था। उसे लुट जाने या गला काटे जाने का भय था। फिर उसके ऊपर खिड़की खोलकर कोई भी गंदा पानी तो फेंक ही सकता था। गलियों में लालटेनें थीं ही नहीं। लोगों को भयभीत करने के लिए टेम्स के पुराने पुल पर अपराधियों के सिर काटकर लटका दिए जाते थे। धार्मिक स्वतन्त्रता न थी। बादशाह के सम्प्रदाय से भिन्न दूसरे किसी सम्प्रदाय के गिरजे में जाकर उपदेश सुनने की सज़ा मौत थी। ऐसे अपराधियों के घुटनों को शिकंजों में कसकर तोड़ दिया जाता था। स्त्रियों को लकड़ियों के शहतीरों से बांधकर समुद्र के किनारे पर छोड़ देते थे कि धीरे-धीरे बढ़ती हुई समुद्र की लहरें उन्हें निगल जाएं। बहुधा उनके गालों को लाल लोहे से दागकर अमेरिका निर्वासित कर दिया जाता था। उन दिनों इंगलैंड की रानी भी गुलामों के व्यापार में लाभ का भाग लेती थी।

इंगलैंड के किसान की अवस्था उस ऊदबिलाव के समान थी जो नदी के किनारे मांद बनाकर रहता हो। कोई ऐसा धंधा-रोज़गार न था कि जिससे वर्षा न होने की सूरत में किसान दुष्काल से बच सकें। उस समय समूचे इंगलिस्तान की आबादी पचास लाख से अधिक न थी। जंगली जानवर हर जगह फिरते थे। सड़कों की हालत बहुत खराब थी। बरसात में तो सब रास्ते ही बन्द हो जाते थे। देहात में प्रायः लोग रास्ता भूल जाते थे और रात-रात-भर ठण्डी हवा में ठिठुरते फिरते थे। दुराचार का दौरदौरा था। राजनीतिक और धार्मिक अपराधों पर भयानक अमानुषिक सजाएं दी जाती थीं।

यह दशा केवल ब्रिटेन की ही न थी, समूचे यूरोप की थी। प्रायः सब देशों में वंश-क्रम से आए हुए एकतन्त्र, स्वेच्छाचारी, निरंकुश राजा राज्य करते थे। उनका शासन-सम्बन्धी मुख्य सिद्धान्त था—हम पृथ्वी पर ईश्वर के प्रतिनिधि हैं, और हमारी इच्छा ही कानून है। जनता की दो श्रेणियां थीं। जो कुलीन थे वे ऊंचे समझे जाते थे, जो जन्म से नीच थे वे दलितवर्गी थे। ऐसा एक भी राजा न था जो प्रजा के सुख-दुःख से सहानुभूति रखता हो। विलास और शानोशौकत ही में वे मस्त रहते थे। वे अपनी सब प्रजा की जानोमाल के स्वामी थे। राजा होना उनका जन्मसिद्ध अधिकार था। उनकी प्रजा को बिना सोचे-समझे उनकी आज्ञा का पालन करना ही चाहिए। फ्रांस का चौदहवां लुई ऐसा ही बादशाह था। यूरोप में वह सबसे अधिक काल तक तख्त-नशीन रहा। वह औरंगज़ेब से बारह वर्ष पूर्व गद्दी पर बैठा और उसके मरने के आठ वर्ष बाद तक गद्दी पर बैठा रहा। पूरे बहत्तर वर्ष। वह सभ्य, बुद्धिमान और महत्त्वाकांक्षी था, और चाहता था कि फ्रांस दुनिया का सबसे अधिक शक्ति-सम्पन्न राष्ट्र बन जाए। परन्तु जब-जब वह फ्रांस की शक्ति और उन्नति की बात सोचता था, तब-तब वह फ्रांस की जनता के सम्बन्ध में नहीं, केवल अपने और अपने सामन्तों के सम्बन्ध में। वह अपने ही को राज्य कहता था, और यह उसका तकिया-कलाम बन गया था। उसने अपनी दरबारी तड़क-भड़क से सारे संसार को चकित कर दिया था और फ्रांस सारे तत्कालीन सभ्य संसार में फैशन के लिए प्रसिद्ध हो गया था। उसने प्रजा पर भारी-भारी टैक्स लगाए थे तथा गरीब प्रजा की गाढ़ी कमाई से बड़े-बड़े

राजमहल बनाए थे। उसने वर्साई और पेरिस की वह शान बनाई कि जिसकी उपमा यूरोप में न थी। उसने अजेय सेना का संगठन किया था, जिसे यूरोप के सब राष्ट्रों ने मिलकर बड़ी ही कठिनाई से परास्त किया। सन् १७१५ में जब वह मरा तो पेरिस अपनी शान, फैशन, साहित्य, सौन्दर्य और बड़े-बड़े महलों तथा फव्वारों से सुसज्जित था और फ्रांस यूरोप की प्रधान राजनीतिक और सैनिक शक्ति बन गया था। परन्तु सारा देश भूखा और असन्तुष्ट था।

उस काल यूरोप में फ्रांस का मुख्य प्रतिद्वन्द्वी आस्ट्रिया था जिसके राजा हाशवुर्ग राजवंश के थे। पवित्र रोमन साम्राज्य के सम्राट का गौरवपूर्ण पद इसी राजवंश को प्राप्त था। यद्यपि इस पद के कारण आस्ट्रिया के राजाओं की शक्ति में कोई वृद्धि नहीं हुई थी पर उनका सम्मान और प्रभाव तथा प्रभुत्व समूचे यूरोप में था।

उस समय जर्मनी न कोई एक राष्ट्र था, न एक राज्य का नाम ही जर्मनी था। तब जर्मनी लगभग तीन सौ साठ छोटे-छोटे राज्यों में विभक्त था, जिनमें तनिक भी राजनीतिक एकता न थी। वे नाममात्र को आस्ट्रिया के धर्मसम्राट की अधीनता मानते थे।

यही दशा इटली की थी। इटली का राष्ट्र है, यह कोई न जानता था। वहां भी अनेक छोटे-छोटे स्वतन्त्र राज्य थे, जिनके राजा निरंकुश स्वेच्छाचारी थे। जनता को शासन में कहीं कोई अधिकार प्राप्त न था।

स्पेन इस काल में यूरोप का सबसे अधिक समर्थ राज्य था। पन्द्रहवीं-सोलहवीं शताब्दी में ही उसने अमेरिका में उपनिवेश स्थापित करके अपनी अपार समृद्धि बढ़ा ली थी। स्पेन के राजा यूरोप के अनेक देशों के अधिपति थे।

पोलैण्ड सोलहवीं शताब्दी तक यूरोप का एक समर्थ राज्य था। सत्रहवीं शताब्दी में पीटर के अभियानों ने उसे जर्जर और अव्यवस्थित कर दिया था और फिर वहां किसी शक्तिशाली केन्द्रीय शासन का विकास नहीं हो पाया।

स्वीडन, डेनमार्क, नार्वे, हालैण्ड, और स्विटज़रलैण्ड का विकास अभी हुआ ही न था। अभी ये देश पिछड़े हुए थे।

आज का सोवियत रूस संसार का सबसे बड़ा और समर्थ प्रजातन्त्र है। आज उसका एक छोर बाल्टिक सागर से पैसिफिक सागर

तक फैला हुआ है और दूसरा आर्कटिक सागर से भारत और चीन की सीमाओं को छू रहा है। परन्तु उन दिनों वह एक छोटा-सा प्रदेश था, जो मास्को नगर के आस-पास के इलाकों तक ही सीमित था और जिसका अधिकांश भाग जंगल था। समुद्र से उसका सम्बन्ध विच्छिन्न था। एक भी समुद्र-तट उसके पास न था। तब बाल्टिक सागर का सारा तट स्वीडन के बादशाह के अधीन था और काला सागर तथा कास्पियन सागर-तट का सारा दक्षिणी भूभाग तातारी और तुर्क राजाओं और सरदारों के अधिकार में था।

चौदहवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में पीटर ने जार के सिंहासन पर बैठकर रूस की कायापलट करने का उपक्रम किया। उन दिनों रूस में लोग लम्बी-लम्बी दाढ़ियां रखते और ढीले-ढाले लबादे पहनते थे। एक दिन उसने अपने सब दरबारियों को अपने दरबार में बुलाया, और सबकी दाढ़ी अपने हाथ से मूंड दी और चुस्त पोशाकें पहना दीं। उसने स्वीडन के बादशाह के हाथों से बाल्टिक तट छीन लिया और समुद्र-तट पर अपनी नई राजधानी सेण्ट पीटर्सबर्ग बसाई जो आज लेनिनग्राड के नाम से विख्यात है।

परन्तु यह महान सुधारक पीटर भी उन दोषों से मुक्त न था, जो उन दिनों संसार के बादशाहों में थे। वह स्वेच्छाचारी था, वह जो चाहता वही करता था। उसकी आज्ञा पालन करने में किसे कितना कष्ट झेलना पड़ेगा, इसकी उसे परवाह न थी।

उन दिनों भारत मुगल-प्रताप से तप रहा था। संसार के सबसे बड़े और सबसे धनी बादशाह शाहजहां और औरंगजेब पचास-पचास साल सिंहासन पर विराजमान रह चुके थे। अकबर और जहांगीर के महान सांस्कृतिक प्रभाव भारत में पनप चुके थे। अकबर की उदारता, जहांगीर का न्याय-शासन, शाहजहां की सुख-समृद्धि और तत्कालीन भारत के कला-कौशल ने भारत को इस युग में एक नया मोड़ दिया था। दिल्ली और आगरा के किले बन चुके थे। ताजमहल अपनी धवल छटा से चन्द्र-ज्योत्स्ना को उज्ज्वल कर रहा था। कुतुब की लाट ऊंचा सिर उठाए गौरव-गाथा कह रही थी। फतहपुर सीकरी का नगर यद्यपि सो रहा था, पर एक शान उसकी भी थी। आगरा और दिल्ली के बाद जयपुर, मथुरा, अजमेर, पटना, काशी आदि दर्जनों नगर बड़ी-

बड़ी अट्टालिकाओं से सुसज्जित और आश्चर्यकारक धन वैभव से परिपूर्ण बसे हुए थे।

जब औरंगजेब ने सिंहासन पर कदम रखा था, उस समय भारत में उत्तर से दक्षिण तक और पूर्व से पश्चिम तक चारों ओर अलौकिक सुख-समृद्धि व्याप रही थी। इस समय दादू, कबीर और नानक ने धर्म में एक महत्वपूर्ण समन्वय का वातावरण उत्पन्न कर दिया था। सूर और तुलसी, रहीम और रसखान, मीरा और ताज एक अविच्छिन्न साहित्य की रसधार बहा रहे थे।

शाहजहां का स्वर्ण-रत्न-भण्डार संसार भर में अद्वितीय था। तीस करोड़ की सम्पदा तो उसे अकेले गोलकुण्डा ही से प्राप्त हुई थी। उसके धनागार में दो गुप्त हौज़ थे, एक में सोने और दूसरे में चांदी का माल रखा जाता था। इन हौज़ों की लम्बाई सत्तर फुट और गहराई तीस फुट थी। ये हौज़ चोरदरवाज़े से ही खुलते और बन्द होते थे। उसने ठोस सोने की एक मोमबत्ती, जिसमें गोलकुण्डा का सबसे बहुमूल्य हीरा जड़ा था और जिसका मूल्य एक करोड़ रुपया था, मक्का में काबा की मस्ज़िद में भेंट की थी। दुनिया का कोई इतिहासज्ञ शाहजहां की धन-दौलत का अनुमान नहीं लगा सका है। लोग कहते थे, उसके पास इतना धन था कि फ्रांस और पर्शिया के दोनों महाराज्यों के कोष मिलाकर भी उसकी बराबरी नहीं कर सकते थे। सोने के ठोस पायों पर बने हुए तख्त-ताऊस में दो मोर मोतियों और जवाहरात के बने थे। इसमें पचास हज़ार मिसकाल हीरे, मोती, और दो लाख पच्चीस मिसकाल शुद्ध सोना लगा था, जिसकी कीमत सत्रहवीं शताब्दी में तिरेपन करोड़ रुपये आंकी गई थी। इससे पूर्व इसके पिता जहांगीर के खज़ाने में एक सौ छियानवे मन सोना तथा डेढ़ हज़ार मन चांदी, पचास हज़ार अस्सी पौंड बिना तराशे जवाहरात, एक सौ पौंड लालमणि, एक सौ पौंड पन्ना और छः सौ पौंड मोती थे। शाही फौज के अफसरों की दो हज़ार तलवारों की मूठें रत्नजटित थीं। दीवाने-खास की एक सौ तीन कुर्सियां चांदी की तथा पांच सोने की थीं। तख्त-ताऊस के अलावा तीन ठोस चांदी के तख्त और थे, जो प्रतिष्ठित राजवर्गीजनों के लिए थे। इनके अतिरिक्त सात रत्नजटित सोने के छोटे तख्त और थे। बादशाह के हमाम में जो टब सात फीट लम्बा

और पांच फीट चौड़ा था उसकी कीमत दस करोड़ रुपये थी। शाही महल में पच्चीस टन सोने की तश्तरियां और बर्तन थे तथा पचास टन चांदी के बर्तन थे। वर्नियर कहता है कि बेगमें और शाहज़ादियां तो हर वक्त जवाहरात से लदी रहती थीं। जवाहरात किश्तियों में भरकर लाए जाते थे। नारियल के बराबर बड़े-बड़े लाल छेद करके वे गले में डाले रहती थीं। वे गले में रत्न, हीरे व मोतियों के हार, सिर में लाल व नीलम-जड़ित मोतियों का गुच्छा, बांहों पर रत्नजटित बाजूबन्द और दूसरे गहने नित्य पहने रहती थीं।

२

रात बहुत अंधेरी थी और सर्दी भी कड़ाके की थी। ठंडी हवा तीर की भांति चल रही थी। ऐसी अवस्था में तीन अभागे कैदी टावर आफ लण्डन के तहखाने में अपने जीवन की शेष अन्तिम घड़ियां गिन रहे थे। तहखाने की भूमि की गच गीली थी, और उसपर कोई फर्श न था। सील की दुर्गन्ध से उस अन्धकारमय तहखाने का पूरा वातावरण दूषित हो रहा था। तीनों ही कैदी पृथक्-पृथक् पत्थर की संगीन दीवारों में लगे लोहे के कुंडों से मोटी-मोटी ज़ंजीरों द्वारा बंधे थे। कैदियों में एक रेवरेण्ड क्रेनमर आर्कबिशप आफ कैण्टरबरी था। दूसरा बिशप रिडले और तीसरा उसका भाई बिशप लैटिमर था। तीनों को धार्मिक कोर्ट से पीड़ा देकर जीवित जला देने का दण्ड मिला था। तीनों पर पोप के चर्च के विरुद्ध प्रचार करने, नास्तिकता फैलाने तथा धर्म-विरोध के संगीन अपराध थे। इसके अतिरिक्त इनके कुछ और भी अपराध थे, जो अदालत द्वारा प्रमाणित नहीं किए गए थे। कैण्टरबरी के आर्कबिशप क्रेनमर ने तो रानी मेरी की माता कैथेराइन को हेनरी अष्टम से तलाक दिलाया था। इस तलाक का पोप ने बहुत विरोध किया था जिसपर हेनरी आठवें ने पोप के अधिकारों की इंगलैण्ड में समाप्ति करके इसी क्रेनमर को आर्कबिशप बनाया था, और उसीने कैथेराइन को तलाक देने की अनुमति दी थी। इस घटना से पोप का इंगलैण्ड से सम्बन्ध छूट गया था, और राजा ही इंगलैण्ड के

ईसाई धर्म का नेता बन गया था। उन दिनों पोप तथा दूसरे पादरी बड़े धनलोलुप और व्यभिचारी हो गए थे। इसलिए सर्वसाधारण उनके प्रति विद्रोही हो उठे थे। जर्मनी का प्रसिद्ध सुधारक पादरी मार्टिन लूथर भी इंगलैण्ड आ चुका था, जिससे वहां नए प्रोटेस्टेण्ट धर्म की स्थापना हो गई थी। पोप से सम्बन्ध-विच्छेद करके हेनरी अष्टम ने प्रोटेस्टेण्ट मत को प्रश्रय दिया और क्रेनमर को लेकर धार्मिक सिद्धान्तों में अनेक रद्दोबदल किए थे। रिडले और लैटिमर उसके सहायक थे। इन्होंने मिलकर छः नियमों का एक कानून पार्लियामेंट से पास करवाया था और प्रोटेस्टेण्ट धर्म की उन्नति का प्रशस्त मार्ग खोल दिया। उन दिनों इंगलैण्ड में छः सौ से ऊपर विहार और मठ थे, जहां अथाह सम्पदा भरी पड़ी थी, जिनसे ये पादरी खूब मौज-मज़ा करते थे। हेनरी ने इन सबको खत्म कर उस धन को हथिया लिया था। इन सब कामों में टामस क्रेनमर ने हेनरी का बहुत हाथ बंटाया था। इसलिए हेनरी ने उसे कैण्टरबरी का आर्कबिशप बना दिया था। उसने दो भारी काम किए थे—प्रथम तो यह कि उसने रानी कैथेराइन को तलाक देने की अनुमति दे दी थी। दूसरे बाइबिल का अंग्रेज़ी अनुवाद किया था और उसे सब गिरजाघरों में रखवा दिया था। रोमन कैथोलिकों की नज़र में ये दोनों भयानक अपराध थे।

हेनरी अष्टम डीलडौलवाला बलिष्ठ पुरुष था। घुड़सवारी, तीरंदाज़ी, कुश्ती तथा संगीत में उसे बहुत रुचि थी। वह ठाट-बाट से रहता था, पर मिज़ाज का झक्की और सख्त था। उसने अपने आठ विवाह किए। उसकी पहली स्त्री कैथेराइन थी, जो वास्तव में हेनरी के भाई आर्थर की विधवा थी। यह विवाह उसने पोप की अनुमति से किया था। पर कैथेराइन की उम्र अधिक थी; फिर उसके पुत्र नहीं हुआ, केवल एक संतान 'मेरी' ही थी। इस कारण हेनरी ने कैथेराइन को तलाक देकर एनबोलीन से विवाह कर लिया था। इससे भी एक लड़की हुई जो आगे चलकर रानी एलिज़ाबेथ के नाम से प्रसिद्ध हुई। एनबोलीन से विवाह किए अभी तीन वर्ष ही व्यतीत हुए थे कि हेनरी उससे नाराज़ हो गया और उसपर दुराचार का दोष लगाकर उसका सिर कटवा लिया। अब उसने तीसरा विवाह जेन सीमोर से किया, जो एक पुत्र प्रसव करके मर गई। वह पुत्र एडवर्ड षष्ठम के नाम से

प्रसिद्ध हुआ। अब उसने विवाह ऐन आफ क्लीव्ज़ से किया, परन्तु वह सुन्दर नहीं थी। इसलिए उसको तलाक देकर कैथेराइन हावर्ड से विवाह किया जो एनबोलीन की सम्बन्धिनी थी। पर वह दुराचारिणी सिद्ध हुई और उसका भी सिर काट लिया गया। अब हेनरी ने छठा विवाह कैथेराइन पार से किया, जिसने हेनरी की मृत्यु के बाद दूसरा विवाह कर लिया।

हेनरी के बाद उसका पुत्र एडवर्ड षष्ठम गद्दी पर बैठा जो प्रोटेस्टेण्ट था। उसने भी अनेक परिवर्तन धर्म में किए। गिरजाघरों से मूर्तियां हटा दी गईं तथा पादरियों को विवाह की आज्ञा दे दी गई। प्रार्थना की नई पुस्तक अंग्रेजी में तैयार की गई जिसके अनुसार प्रार्थना करना अनिवार्य ठहरा दिया गया। एडवर्ड क्षय रोग से शीघ्र ही मर गया। जब वह मर रहा था तो ड्यूक आफ नार्थम्बरलैण्ड तथा बिशप क्रेनमर ने उससे कहा था कि उसके पश्चात् उसकी बहन मेरी, जो पक्की रोमन कैथोलिक थी, उसके किए पर पानी फेर देगी। उनकी सलाह से एडवर्ड ने वसीयतनामा लिख दिया कि उसके बाद लेडी जेन ग्रे सिंहासन की स्वामिनी हो। परन्तु जेन ग्रे के भाग्य में केवल नौ दिन ही राज्य करना लिखा था। अन्ततः मेरी रानी बनी और उसने पहली कलम से जेन ग्रे का कुल्हाड़े से सिर कटवा लिया और दूसरी कलम से अपनी मां तथा अपने धर्म के कट्टर शत्रु कैण्टरबरी के आर्कबिशप टामस क्रेनमर और उसके दोनों साथी बिशप रिडले और लैटिमर को जीता जलाने का दण्ड दिया, जिसकी प्रतीक्षा में ये तीनों अभागे कैदी टावर आफ लण्डन के अंधेरे कारागार में जीवन के अंतिम क्षण व्यतीत कर रहे थे।

टावर आफ लण्डन का नाम सुनकर सहसा प्राचीन समय की अनेक रोमांचकारी घटनाओं की स्मृति उदय हो उठती है। रोमन सम्राट जूलियस सीज़र ने जिस स्थान पर अपने विजयकाल में दुर्ग-निर्माण किया था, उसी स्थान पर सन् १०७९ में विजयी विलियम ने इस 'टावर' नामक दुर्ग की नींव डाली थी। उन दिनों नगर-रक्षा का मुख्य साधन दुर्ग बनाना या कोट खींचना होता था। विलियम ने इस टावर का निर्माण नगर-रक्षा तथा नगर की देखभाल दोनों ही अभिप्राय से किया था। इसीसे उसने नगर की दीवार गिराकर यह स्थान निकाला

था। लण्डन टावर लगभग अस्सी बीघा भूमि में बना था। उस काल में यह दुर्ग और राजप्रासाद था। बाद में वह राजबन्दियों का कारागार बना दिया गया। खतरनाक राजविद्रोही ही वहां बन्द किए जाते थे, और उनके सिर कुल्हाड़े से काटे जाते या उन्हें जीता जलाया जाता था। बन्दीगृह में उन्हें घोर यन्त्रणा देने के निमित्त विविध पीड़ादायक यन्त्र रखे गए थे। यहां के टावर हिल नामक मैदान में इतिहास-प्रसिद्ध सर साइमन बरली का तथा राजमन्त्री इडली का कुल्हाड़े से सिर काटा जा चुका था और लेडी जेन ग्रे और उसके पति ड्यूक आफ नार्थम्बरलैण्ड का शिरच्छेद तो अभी ही हुआ था, जिसका रक्त अभी सूखा भी न था। जिस खिड़की पर से लेडी जेन ग्रे ने अपने पति का शिरच्छेद देखा था, वह मानो अब भी उस घटना की मौन साक्षी थी। ऐसा ही खूनी वह टावर आफ लण्डन था जिसके मध्य भाग में सेण्ट जान का वह विशाल गिरजा मूक मौन पड़ा था, जहां अभागे बन्दी अपनी अंतिम प्रार्थना करते थे। उसकी दीवारों में जब हवा टकराती थी तो मानो जीवित पुरुष की गर्दन पर कुल्हाड़े के वार की ध्वनि निकलती थी।

३

ज्योंही अर्धरात्रि व्यतीत हुई और सेण्ट जान के घण्टे ने बारह पर चोट की, एक शोकपूर्ण जुलूस धीमी गति से हारबरगेट के अंधकारपूर्ण दालान से चला। सबसे आगे चार प्रधान रक्षक दो-दो की कतार में निकले, जो काले रेशम का चोगा पहने हुए थे। इनके हाथ में बड़े-बड़े सफेद क्रास थे। इसके बाद बारह पादरी इस अनुक्रम से निकले। ये सब भी टखने तक लटकती काली पोशाक पहने थे तथा सिर पर चौड़े छज्जे की टोपियां थीं। प्रत्येक के हाथ में जलती हुई पतली मोमबत्तियां थीं। इनके पीछे पादरी का सहायक नंगे सिर सफेद चोगा पहने आया, जिसके वस्त्र पर सामने की ओर लाल क्रास बना था। वह एक बड़े घण्टे को इधर-उधर हिलाता और बजाता चल रहा था। इसके पीछे दो युवा पादरी श्वेत परिधान में नंगे सिर चल रहे थे। प्रत्येक के हाथ में एक-एक जलती हुई पतली मोमबत्ती चांदी के आधारों

में लगी हुई थी। इनके पीछे एक बूढ़ा पादरी सिर पर टोपी पहने था। इसके बाद दो पोप साधु स्तोत्र पढ़ते हुए और करुण गीत गाते चल रहे थे। इसके बाद चार साधु थे, जिनकी कलाइयों में लम्बी मालाएं लटकी हुई थीं। वे जरी काम के एक चंदोवे के चारों छोर पकड़े हुए थे, और उसके नीचे प्रधान धर्माचार्य चल रहा था, जिसका चोगा गहरे लाल रंग का था और पोशाक सफेद थी। इसके बाद चर्च का अधिकारी और उसके अन्य साथी थे, जिनके पीछे दो जीसूइट साधु स्तोत्र-पाठ करते चल रहे थे। इसके बाद फरसेवालों की लम्बी कतार थी, और उनके बाद तीनों कैदी इकहरी पंक्ति में एक के बाद दूसरा नंगे पैर एक बोरेनुमा ढीला वस्त्र पहने चल रहे थे। उनके दोनों ओर एक-एक साधु धीरे-धीरे करुण गीत गाता चल रहा था, जिसका आशय यह था, 'अभागे, तुझे अति विलम्ब हो गया, स्वर्ग के द्वार बन्द हो चुके, अब तू स्वर्ग में प्रवेश नहीं कर सकता। पश्चात्ताप कर। पश्चात्ताप ही तेरा सहारा है।' कैदियों के पीछे धनुर्धरों की एक टोली थी। ये धनुर्धर रानी के शरीर-रक्षक थे, और उसने उन्हें खास तौर पर भेजा था।

ज्योंही जुलूस रोमिश चर्च के सामने पहुंचा, ओटो-डाफे का विराट् जुलूस उसमें आ मिला। यह पवित्र इतवार का दिन था। ओटो-डाफे अपराधियों का सामूहिक भीषण प्रदर्शन था, जिसे एक धर्म-समारोह का रूप दिया गया था। इसका संचालन ईसाई साधु कर रहे थे, जिनका एक झुण्ड आगे-आगे चल रहा था। उनके पीछे पश्चात्ताप करनेवाले थे, जो बिना आस्तीन के काले कोट पहने नंगे पैर चल रहे थे। उनके हाथों में एक-एक मोमबत्ती थी। उनके पीछे वे पश्चात्तापकर्ता थे, जो जलाए जाने के ठीक क्षण पर पश्चात्ताप करके बच गए थे। उनके काले वस्त्रों पर औंधे मुंह की जलती हुई मशालें अंकित थीं। इनके पीछे वे अपराधी थे, जो शपथपूर्वक धर्म-सिद्धान्त स्वीकार करने के बाद उससे मुकर गए थे। इनके वस्त्रों पर, छाती पर कुत्ते, सांप, प्रेत आदि के भयानक चित्र थे, जिनके मुंह फैले हुए थे।

प्रत्येक कैदी के साथ इन्क्विज़ीशन का एक आदमी चल रहा था और जिन्हें आग में जलाया जाना था उनके साथ एक-एक जीसूइट साधु चल रहा था जो उन्हें निरन्तर पश्चात्ताप करने को प्रेरित कर

रहा था। इनके बाद दण्ड-परिषद् के घुड़सवार थे। उनके पीछे यन्त्रणागृह के आदमी खच्चरों पर थे। सबके अन्त में यंत्रणागृह का प्रधान सफेद घोड़े पर सवार था जिसके आगे-पीछे दो-दो आदमी काली टोपी पर हरा फीता लगाए चल रहे थे।

वधस्थल एक विस्तृत मैदान को घेरकर बनाया गया था, जिसमें एकसाथ ही दो-तीन हज़ार आदमियों को जलाया जा सकता था। उसके एक छोर पर अपराधी थे और दूसरे पर पादरी-साधु और यन्त्रणागृह के आदमी।

पहले कुछ स्तुति-स्तोत्र पढ़े गए और तब एक पादरी मृत्यु-मंच पर आया। उसने अपराधियों को अंतिम दंडाज्ञा सुना दी तथा जिन्हें मृत्यु-दण्ड देना था उन्हें जल्लादों और यंत्रणागृह के प्रधान को सौंप दिया। उसने प्रभु ईसा मसीह के सम्मुख यह भी घोषणा की कि धर्माचार्य न अपराधी के रक्त को स्पर्श करेगा, न उसके प्राणनाश का उसपर दायित्व है। और तब अपराधी ज़ंजीरों में कसकर सिविल जज के सम्मुख उपस्थित किए गए। उसने प्रत्येक से पूछा कि वह किस मजहबी विश्वास के साथ मरना चाहता है। जिन्होंने चर्च आफ रोम के प्रति विश्वास के साथ मरने की इच्छा प्रकट की, उनके लिए आज्ञा हुई कि उन्हें पहले फांसी दी जाए, और तब उन्हें जलाया जाए। और जिन्होंने ऐसा विश्वास प्रकट नहीं किया, उन्हें जीवित जला देने की आज्ञा दी गई।

अब अपराधी पृथक्-पृथक् गिरोहों में वधस्थल पर ले जाए गए। वहां उतने ही वधयूप गाड़े गए थे, जितने अपराधियों को जीवित जलाया जानेवाला था। मुनकिरों को पहले फांसी देकर उनकी लाशों को जलाने के लिए लाया गया। जिन्होंने प्रतिज्ञा करके अस्वीकार किया था, उन्हें जीवित ही जलाए जाने के लिए ज़ंजीरों से कसकर वधयूपों से जीवित ही बांध दिया गया। तब प्रत्येक के पास एक जीसूइट पादरी ने जाकर पश्चात्ताप करने और चर्च की शरण आने की चेतावनी दी और कुछ धर्मसूत्र पढ़े। और अंत में उन्हें प्रेतों के सुपुर्द कर दिया, जो उनके कथनानुसार उनके अति समीप उपस्थित थे, और उनकी आत्मा को नरक में ले जाने को तैयार थे। इसके बाद एक भारी शोर उठा और दर्शकों की भीड़ ने चिल्लाकर कहा, 'कुत्तों की दाढ़ी में आग लगाओ।' और यह कार्य आनन-फानन ही हो गया।

सैकड़ों लोग जलती हुई मशालें ले-लेकर दौड़ चले, और उन्होंने असहाय पीड़ितों की दाढ़ियां झुलसा दीं। वे तब तक जलती मशालें उनके चेहरों पर लगाए रहे, जब तक कि उनके मुंह झुलसकर काले स्याह न हो गए। यह देखकर दर्शकों की भीड़ ने जोर से हर्ष-ध्वनि की। अंत में यूप के चारों ओर एकत्रित ईंधन में आग लगाई गई। परन्तु वधयूप के साथ जंजीरों से बंधे हुए पीड़ित-जन आग की लपटों से बहुत ऊंचे थे। आग की लपटें केवल उनके आधे अंगों तक ही पहुंच पाती थीं और इस प्रकार वे जलाए नहीं जा रहे थे, धीमे-धीमे भूने जा रहे थे। पीड़ितों की वेदनापूर्ण तीव्र चीत्कार से वातावरण भर गया था। वे चिल्ला रहे थे, 'ईश्वर के लिए दया करो। दया करो सज्जनो—ईश्वर के लिए।' हज़ारों की संख्या में सभी आयु के स्त्री-पुरुष इस प्रकार का अनगिनत आर्तनाद सुन रहे थे, और प्रसन्न हो रहे थे।

४

परंतु टावर आफ लण्डन के अभागे कैदियों की अग्नि-शैय्या सबसे पृथक् रची गई थी। ज्योंही वे वधस्थल पर पहुंचे, प्रत्येक कैदी को दो साधु पृथक्-पृथक् वधयूपों के निकट ले गए। उनके शरीर कसकर ज़ंजीरों से बंधे हुए थे।

सबसे पहले टामस क्रेनमर को लिया गया। वह चर्च आफ इंगलैंड का मुख्य और प्रतिष्ठित पादरी था। वह विद्वान, सुधारक और दृढ़ प्रकृति का प्रौढ़ पुरुष था। वधयूप से उसे बांधने के बाद एक रोमन चर्च के प्रधान ने उसके निकट आकर उसे भयभीत करते हुए कहा, 'अब भी समय है, अपने विचार बदल लो, अपनी जीवन-रक्षा कर लो; पश्चात्ताप करो और जीवन का आनन्द प्राप्त करो। पवित्र पिता पोप तुमपर कृपालु हैं उन्होंने मुझे तुम्हारे पास भेजा है।' पर क्रेनमर ने उसे ठोकर मारकर पीछे धकेल दिया और कहा, 'दूर हो जाओ, पोप के भेड़ियो, मुझसे दूर रहो। तुम प्रभु ईसा के नाम और धर्म पर कलंक-रूप हो। दूर हो जाओ, और उसीके पास जाओ जिसने तुम्हें यहां मेरे पास भेजा है। मैं तुम्हारे घृणित सिद्धान्त सुनना

नहीं चाहता। यहां से दूर हो, मुझे अधिक कष्ट न दो।'

ज्योंही जीसूइट पादरी वहां से हटा, क्रेनमर ने अपने चारों ओर उपस्थित भीड़ को सम्बोधन करके कुछ कहना चाहा। इसपर तुरन्त वोनर की आज्ञा से उसके मुंह में बर्छी घुसेड़ दी गई। अब एक असभ्य, सहानुभूतिशून्य, भद्दा-सा व्यक्ति, जिसके बलिष्ठ भुजदण्ड थे, एक घृणित मुस्कान के साथ आगे बढ़ा। उसका नाम बुलकिट था और वह पेशेवर जल्लाद था। वह एक चुस्त जाकेट और चमड़े के भूरे दस्ताने पहने था। उसके भुजदण्ड और सीना नंगे थे, जो लाल बालों से भरे थे। उसकी लाल दाढ़ी और लाल-लाल आंखें बीभत्स और भयानक आकृति में वृद्धि कर रही थीं। उसके एक हाथ में लम्बा त्रिशूल था और दूसरे में एक भारी हथौड़ा। एक जोड़ा छोटी संडासी उसकी कमरपेटी में खुसी थी। उसके पीछे मौगर और नाइटगाल थे, जो उसके सहायक थे।

इस समय एक भयानक सन्नाटा वातावरण में छा रहा था। सब कोई सांस रोककर आगे क्या होने वाला है, यह देख रहे थे। प्रत्येक की आखें पीड़ित व्यक्ति पर थीं। बुलकिट और मौगर ने पकड़कर क्रेनमर को नंगा किया। तब वे उसे घसीटकर वधयूप के निकट ले गए, जिसे क्रेनमर ने आग्रहपूर्वक चूम लिया। अब जल्लाद ने अपने सहायकों की मदद से उसे वधस्तम्भ के साथ जंजीरों से कस दिया। इस बार उसने कुछ कहने की चेष्टा की, इसपर बुलकिट ने उसकी कनपटियों पर हथौड़े से करारी चोटें कीं। क्रेनमर ने मन्द स्वर से कहा, 'मित्र, तुम मुझे इस चोट से बचा भी सकते थे।' फिर उसने जैसे अपने ही अन्तर से कहा, 'हे ईश्वर, मेरी पीड़ा को हर, क्योंकि मेरी हड्डियां दर्द से चूर-चूर हो रही हैं।' इस बीच मौगर और नाइटगाल ने वधयूप के नीचे सूखी लकड़ियों का ढेर लगा दिया था। क्रेनमर निरन्तर प्रार्थना कर रहा था। उसके होंठ निरन्तर हिल रहे थे। जब सब कुछ तैयार हो गया तो एक बार वह पूरी शक्ति से चिल्लाया, 'हे पिता, तू मुझे अपने राज्य में प्रविष्ट कर और आशीर्वाद दे कि इस अग्नि में पवित्र होकर मैं सच्चे ईसाई की मौत मरूं। शक्ति दे कि तेरे निकट आने की प्रसन्नता में जल मरूं।' फिर उसने चारों ओर खड़ी भीड़ से शक्ति-भर चिल्लाकर कहा, 'विदा मित्रो!

मेरे लिए प्रार्थना करो, मेरे लिए...' उसके मुंह से रक्त निकलने लगा और शब्द रुक गए।

इसी समय नाइटगाल ने मशाल लेकर ईंधन में आग लगा दी। लकड़ियां सुलगने लगीं। एक बार धुएं से पीड़ित व्यक्ति का शरीर ढक गया, केवल उसके कष्ट से सांस लेने का मर्मर शब्द सुनाई दे रहा था। अब चिता जल उठी। ज्वाला की लपटें लपलपाती हुई ऊपर उठीं और उसका पीला कांपता प्रकाश सेण्ट पीटर गिरजे की खिड़कियों पर फैल गया। दूर सामने टावर की भूरी दीवारें चमक रही थीं। परन्तु लपटें अभी अभागे पीड़ित के निकट नहीं पहुंची थीं। पश्चिमी हवा के तेज़ झोंके आग के साथ खेल रहे थे। कुछ क्षण में लपटों ने पीड़ित को छू लिया और अब उसका कष्ट आरम्भ हो गया। वह अभी तक बिना कराहे सब कुछ सह रहा था, परन्तु अब तो भयानक आग की लपटें उसे चारों ओर से घेरती आ रही थीं। असह्य वेदना से वह तड़प गया। उसने अपनी गर्दन पीछे ले जाकर वधयूप के आगे शरीर ले जाने की चेष्टा की, पर ज़ंजीरों से जकड़ा रहने के कारण लाचार हो गया। अब उसका साहस जवाब दे गया और उसकी आंखें बाहर निकल आईं। शरीर ऐंठ गया, बाल खड़े हो गए, आकृति विकृत हो गई। इस समय वह मृत्यु की पीड़ा को सहन कर रहा था। वह ज़ोर लगाकर अपने हाथ छाती पर ले गया, उसने अपने कन्धे सिकोड़े और नाखून मास में गाड़ दिए। यह एक भीषण थर्रा देने वाला दृश्य था। भीड़ से एक रोमांचकारी सिसकारी उठी। परन्तु वह जलाया नहीं जा रहा था, भूना जा रहा था। लपटें अभी तक भी उसके आधे अंग तक ही पहुंची थीं। पूरा ज़ोर लगाकर उसने कहा, 'भले आदमियो, सहायता करो। ईश्वर के लिए और अधिक ईंधन डालो, आग को मेरे सीने तक आने दो।' ये उसके अन्तिम शब्द थे। देर तक उसके होंठ हिलते रहे। नाइटगाल और उसके साथियों ने और लकड़ियां डालीं। और फिर उसका आधा भाग बिलकुल जलकर कोयला हो गया। उसका सिर पीछे को लटक गया। एक अस्पष्ट असह्य आर्तनाद उसके कण्ठ से निकला, जो वातावरण में गूंज गया और उसके प्राणपखेरू ने इस नश्वर शरीर से मुक्ति पाई।

अब लैटिमर और रिडले की बारी थी, जो बड़े धैर्य और साहस के साथ अपने गुरु और साथी के इस असह्य अवर्णनीय बलिदान और रोमांचकारी मृत्यु को देख रहे थे। वे यह भी समझ रहे थे, यही यन्त्रणा कुछ क्षणों के बाद हमें भी दी जाएगी। परन्तु ज्योंही उन्हें वधयूप से बांधा गया और उनके चारों ओर ईंधन रखा गया, उनका एक मित्र एक थैली बारूद भरकर ले आया और उसे रिडले की गर्दन में बांध दिया।

'आह मित्र, इसे तो मैं ईश्वर के हाथ भेजी जानकर ग्रहण करता हूं, परन्तु क्या मेरे भाई के लिए तुम्हारे पास थोड़ी और है?' रिडले ने मित्र से कहा।

'हां महाशय।'

'तो मित्र, देर न करो, उसे समय पर ही दे दो।'

इतने में इंधन में आग लगा दी गई। तब लैटिमर ने चिल्लाकर कहा, 'प्रसन्न होओ मास्टर रिडले, आज हम ईश्वर की कृपा से ऐसी रोशनी इंगलैंड में प्रज्वलित कर रहे हैं, जैसीकि, मैं विश्वास करता हूं, पहले कभी नहीं जली होगी।'

'ओ स्वर्गीय पिता, मैं अपनी आत्मा तुझे सौंपता हूं,' रिडले चिल्लाया। पहले लैटिमर मुक्त हुआ, क्योंकि आग उसकी गर्दन में लटकती हुई बारूद की थैली तक पहुंच गई और धड़ाके के साथ क्षण-भर में उसके शरीर की धज्जियां उड़ गईं।

रिडले के दुर्भाग्य से जो लकड़ियां उसके नीचे जलाई गई थीं कुछ मोटी थीं। उन्होंने धीरे-धीरे आग पकड़ी, और धीरे-धीरे उसके पैर जलने लगे। वह अस्पष्ट वेदना से तड़प उठा और चिल्लाया, 'मैं जल नहीं रहा हूं, ईश्वर के लिए मेरे ऊपर दया करो, आग तेज़ करो भाइयो।'

इसपर उसके बहनोई ने थोड़ा ईंधन और डाला, पर तब भी लपटें उसके ऊपरी अंगों तक नहीं पहुंचीं। तब फिर किसीने बहुत-सा सूखा ईंधन डाला। अब लपटों ने उसे घेर लिया और बारूद ने अपना काम पूरा किया।

इंगलैंड की रानी एलिज़ाबेथ, अपने रंगमहल के खास कमरे में बैठी खूब चाव से अपना बनाव-श्रृंगार कर रही थी। उसकी दरबारी लेडियां एक से बढ़कर एक भड़कीली पोशाकें पहने अपनी अधनंगी देह की छटा दिखाती हुई उसे घेरे खड़ी थीं। दासियां रानी का श्रृंगार कर रही थीं। कोई उसके सुन्दर सुनहरी केशों को खास फैशनेबल तरीके से बना रही थी। इस बात की उसे सावधानी रखनी पड़ती थी कि रानी का एक भी बाल न टूटने पाए। एक बाल टूटने पर ही रानी उसे मृत्युदण्ड दे सकती थी। रानी एलिज़ाबेथ का ऐसा ही दबदबा था। आज वह प्रसिद्ध सोमवार की रात थी, जिसकी प्रतीक्षा बड़े चाव से सारे इंगलैंड के वजहदार बड़े लोग कर रहे थे। रात के नौ बजे थे। इस समय लंदन की गलियां अंधेरी और सूनी हो रही थीं। हज़ारों आदमी जाड़े से ठिठुरते हुए टांगों में पुआल लपेटे, लकड़ी का तकिया लगाए, पुआल के बिछौने पर, सील और गन्दगी से भरी अंधेरी और तंग कोठरियों में भूखे और प्यासे जीवन का भोग भोग रहे थे। कठिन जाड़े से कांपते हुए असंख्य भिखारी और दरिद्र-परिवार बिना घरबार जहां-तहां आसरा देख रात काट रहे थे। पर इससे क्या, सेंट जेम्स पैलेस इस समय जगमग हो रहा था। आज वहां महोत्सव था। यह महोत्सव आर्मेडा पर विजय प्राप्त करने के उपलक्ष्य में हो रहा था।

आर्मेडा एक युद्ध का बेड़ा था, जिसे स्पेन के राजा फिलिप द्वितीय ने इंगलैंड पर आक्रमण करने के लिए तैयार किया था। इस बेड़े में १३० जहाज़ थे, जिनमें कई तो बहुत बड़े-बड़े थे। इनमें आठ हज़ार नाविक, बीस हज़ार समुद्री सैनिक, दो हज़ार से अधिक तोपें तथा छः मास तक के लिए पर्याप्त गोलाबारूद आदि युद्ध-सामग्री और खाद्य-सामग्री संचित थी। यह स्पेन का अजेय बेड़ा था, जिसका कप्तान ड्यूक आफ मेडीना सेडोनिया था।

स्पेन और इंगलैंड का झगड़ा बहुत पुराना था। इन दिनों स्पेन यूरोप का सबसे समर्थ राज्य था। सन् १५८० में स्पेन और पुर्तगाल के राजसिंहासन मिल जाने के कारण स्पेन के राजा फिलिप द्वितीय की शक्ति और भी बढ़ गई थी क्योंकि अब पूर्वीय और पश्चिमीय

समुद्रों के व्यापार उसके हाथ में आ गए थे। फिर भी फिलिप को इंगलैंड पर आक्रमण करने का साहस न होता था। इसके कारण थे। प्रथम तो वह इंगलैंड की रानी एलिज़ाबेथ के बुद्धि-कौशल को भलीभांति जानता था। दूसरे, इस काल इंगलैंड में अनेक असाधारण साहसी नाविक उपस्थित थे, जिन्होंने समुद्र में ऐसा आतंक उपस्थित कर दिया था कि दुनिया में वे 'समुद्री कुत्ते' के नाम से प्रसिद्ध हो गए थे। इनमें अत्यन्त प्रसिद्ध था सर फ्रांसिस ड्रेक। यह सर्वप्रथम अंग्रेज़ नाविक था, जिसने सारे संसार की परिक्रमा की थी और लौटती बार अमेरिका की स्पेनिश बस्तियों को लूटकर अथाह स्वर्ण-भण्डार इंगलैंड ले आया था। एलिज़बेथ ने उसे सर की उपाधि दी थी और उसे स्पेन के जहाज़ों को, जो अमेरिका से सोने-चांदी से लदे यूरोप आया करते थे, लूटने की खुली आज्ञा दे दी थी। दूसरा प्रसिद्ध नाविक सर जान हाकिन्स था। वह पहला अंग्रेज़ था जिसने अमेरिका में गुलामों की बिक्री का धंधा किया हुआ था। वह अफ्रीका से हब्शियों को दास बनाकर अमेरिका में, जिसे उन दिनों यूरोपवाले नई दुनिया कहते थे, ले जाता था और अच्छे दामों में बेच देता था। इस व्यापार में वह खूब मालामाल हो गया था और रानी भी उसपर सदय थी। एक प्रकार से वह उसके व्यापार में भागीदार भी थी। फिर सर वाल्टर रैले था, जो प्रसिद्ध नाविक के अतिरिक्त प्रसिद्ध विद्वान भी था। वह एक असाधारण नाविक, योद्धा, कवि और इतिहासज्ञ था। उसने अमेरिका में अंग्रेज़ों की एक नई बस्ती बसाई थी। उसका नाम उसने क्वारी रानी एलिज़ाबेथ के नाम पर वर्जीनिया रखा था। वह अमेरिका से तम्बाकू और आलू के पौदे यूरोप लाया था। इन सब कारणों से रानी की उसपर विशेष कृपादृष्टि थी। सर हम्फरी गिल्बर्ट और सर मार्टिन फ्रोविशर भी ऐसे ही प्रसिद्ध नाविक थे एक ने न्यूफाउण्डलैंड की बस्ती बसाई थी, दूसरे ने ग्रीनलैंड तथा लैब्रेडोर का चक्कर लगाया था।

फिर रानी एलिज़ाबेथ के मन्त्रीगण अति योग्य थे। खासकर वालसिंगम और सिसिल के नाम का डंका तो उन दिनों सारे यूरोप में बज रहा था। ये सब बातें तो थीं ही, फिलिप को यह भय था कि कहीं फ्रांस और इंगलैंड मिलकर स्पेन पर हमला न कर दें। परन्तु जब उसने अपनी शक्ति का सन्तुलन कर लिया तो उसने प्रथम मज़हबी

कार्रवाई आरम्भ की। उन दिनों मज़हबी कार्रवाई राजनीति पर बड़ा प्रभाव डालती थी। तब स्पेन रोमन कैथोलिकों का प्रधान अड्डा था और ब्रिटेन प्रोटेस्टेण्टों का। चर्च आफ रोम चर्च आफ इंगलैंड का कट्टर विरोधी था। परन्तु रोमन कैथोलिक लोग तो इंगलैंड में भी थे। एलिज़ाबेथ से पिछली रानी मेरी ट्यूडर ने इंगलैंड की गद्दी पर बैठकर प्रोटेस्टेण्टों पर इतने अत्याचार किए थे कि लोगों ने उसे खूनी रानी के नाम से प्रसिद्ध किया हुआ था। पर रानी एलिज़ाबेथ पक्की प्रोटेस्टेण्ट थी। अतः फिलिप ने पहले इंगलैंड के रोमन कैथोलिकों को उकसाकर इंगलैंड के विरुद्ध विद्रोह कराना चाहा। रानी ने भी इसका जवाब तुर्की-बतुर्की दिया और नीदरलैंड के प्रोटेस्टेण्टों को पूरी सहायता पहुंचाकर उन्हें फिलिप के विरुद्ध उभाड़ा।

इससे नीदरलैंड के निवासियों ने फिलिप के विरुद्ध विद्रोह कर अपना स्वतन्त्र प्रजातन्त्र स्थापित कर लिया। एलिज़ाबेथ ने उनकी सहायता के लिए अपने प्रेम-पात्र अर्ल आफ लीसेस्टर और सर फिलिप्स सिडनी को नीदरलैंड भेजा था। यह करके उसने अपने साहसिक नाविकों को भड़काकर उनसे कहा कि जहां अवसर पाओ, स्पेन के जहाज़ों को लूट लो। यह काम तो वे पहले ही से करते आ रहे थे। अब रानी की शह पाकर उन्होंने अपना यह पेशा ही बना लिया। इस लूटमार पर भी मज़हबी रंग चढ़ा था। इन सब बातों से तंग आकर ही स्पेन का राजा फिलिप आर्मेडा लेकर इंगलैंड पर चढ़ आया था। परन्तु कैडिच के बन्दरगाह में वह अभी तैयारी ही कर रहा था कि साहसिक डाकू फ्रेडरिक उसमें आ घुसा और उसके बहुत-से जहाज़ों में आग लगा आया तथा आकर रानी से कहा, 'मैं स्पेन के राजा की दाढ़ी में आग लगा आया हूं।' इससे रानी बहुत प्रसन्न हुई और यह वाक्य इंगलैंड में आम हो गया।

परन्तु स्पेनवालों ने इससे हिम्मत न हारी और फिर तैयारी करके इंगलैंड पर आक्रमण कर दिया। उसने घोषणा की कि आक्रमण का उद्देश्य इंगलैंड के रोमन कैथोलिक लोगों के मत की रक्षा करना है। इसलिए इंगलैंड के रोमन कैथोलिक उससे आ मिले। परन्तु रानी ने गहरी राजनीति खेली। उसने लार्ड हौवर्ड को अंग्रेज़ी बेड़े का कप्तान बनाया, जो कैथोलिक था। इससे इस युद्ध का यह भाव नष्ट हो गया

कि यह धर्मयुद्ध है। अब यह स्पेन और इंगलैंड का राष्ट्रीय युद्ध बन गया जिससे सब रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेण्टों ने मिलकर रानी के झंडे के नीचे युद्ध किया। अंग्रेज़ी बेड़े में हौवर्ड के अतिरिक्त ड्रेक, हाकिंस, रैले आदि भी प्रसिद्ध नाविक थे। अंततः स्पेन का यह बेड़ा पूर्णतः पराजित होकर नष्ट-भ्रष्ट हो गया। अब तक यूरोप-भर में स्पेन की समुद्री शक्ति सबसे बढ़ी-चढ़ी थी। परन्तु इस विजय से अब अंग्रेज़ समुद्रों के स्वामी हो गए और इंगलैंड के प्रोटेस्टेण्ट चर्च को भी अब किसीका भय न रहा। यही कारण था कि इस विजय का समूचे इंगलैंड में स्वागत हो रहा था और इस विजय के नेताओं के सम्मान ही में यह विराट् समारोह राजप्रासाद में हो रहा था।

रात के नौ बजे थे। राजप्रासाद रोशनी से जगमगा रहा था। अनगिनत झाड़-फानूसों में सुगन्धित मोमबत्तियां जल रही थीं। दरवाज़ों पर ज़रदोज़ी के पर्दे लटक रहे थे। दीवारों पर प्रसिद्ध चित्रकारों के बहुमूल्य चित्र टंगे थे। जगह-जगह कद्देआदम आइनों की बहार थी। बहुत-सी कीमती चीजें करीने से सजी थीं। बड़े हाल में धीरे-धीरे मेहमान एकत्र होते जा रहे थे। परन्तु रानी अभी अपने शृंगार-कक्ष में ही थी, जहां ज़मीन पर सुर्ख मखमल का बालिश्त-भर मोटा गद्दा बिछा था, जिसपर ज़रदोज़ी का काम निहायत नफासत से हो रहा था। चारों ओर बहुमूल्य फूलदानों में देश-विदेश के रंग-बिरंगे पुष्प रखे थे। उनकी भीनी सुगन्ध से कमरा महक रहा था। रानी ने आज बड़े चाव से अपना शृंगार किया था। यद्यपि वह कुछ विशेष सुन्दरी न थी तथा आयु भी उसकी अड़तीस को पहुंच चुकी थी, पर वह कुमारी थी। विवाह उसने किया नहीं था, इसलिए वह कुमारी रानी के नाम से ही प्रसिद्ध थी। हकीकत तो यह थी कि वह इतनी अधिकारप्रिय थी कि वह पति ही क्यों, किसीके शासन में रहना पसन्द नहीं करती थी। इसके अतिरिक्त उसे यह भी खटका था कि यदि रोमन कैथोलिक पति से ब्याह किया तो प्रोटेस्टेण्ट नाराज़ हो जाएंगे और अब जो वह चर्च आफ इंगलैंड की अधिष्ठात्री है, तब न रहेगी। और यदि प्रोटेस्टेण्ट पति वरण करती है तो रोमन कैथोलिक नाराज़ हो जाएंगे। इसके अतिरिक्त वह अपने कुंवारेपन से राजनीतिक चालें भी चलती थी। कभी वह प्रसिद्ध करती कि वह फ्रांसीसी राजकुमार से ब्याह

करेगी और कभी स्पेन के राजा का नाम लेती। इस प्रकार फ्रांस और स्पेन को चकमा देकर अपने देश की शक्ति बढ़ा रही थी।

फिर भी प्रसिद्ध था कि उसके कई प्रेमी हैं। रानी के प्रेम को लेकर प्रेमियों में द्वंद्वयुद्ध भी हो जाते थे। वह कभी इस प्रेमी पर कृपादृष्टि रखती तो कभी उसपर। उसकी मुस्कान से प्रभावित होकर न जाने कितने प्रेमी जान जोखिम में डाल चुके थे।

अर्ल आफ एसेक्स उसका नया प्रेमी था। उसकी आयु उससे कुछ कम थी। वह हंसमुख, सुन्दर, फुर्तीला, वीर और आकर्षक युवक था। बातचीत में चतुर और कपड़े-लत्ते में नफासतपसन्द। रानी उसपर इतनी प्रसन्न थी कि लोग दरबार में उसके सम्बन्ध में कानाफूसी करते रहते थे।

इस समय बहुत-से मान्य अतिथि दरबार हाल में पहुंच चुके थे। सर फ्रांसिसी ड्रेक, सर मार्टिन फ्राविशर, जान हाकिन्स, सर वाल्टर रैले और दूसरे वे पुरुष जिन्होंने इंगलैण्ड की विजय में हाथ बंटाया था और जिनके सम्मान में यह समारोह किया गया था, वे सब आ चुके थे; पर रानी अभी अपने विलास-कक्ष से बाहर नहीं आई थी। उसके श्रृंगार में कुछ न कुछ कोर-कसर बाकी ही रहती जाती थी। पर असल बात यह थी कि उसे अपने प्रेमी अर्ल आफ एसेक्स की प्रतीक्षा थी, जो अभी तक नहीं आया था। वह चाहती थी कि वह उसी सुन्दर मनभावने तरुण की भुजाओं का सहारा लेकर दरबार भवन में जाए।

रानी की एक सखी कमसिन और अत्यन्त सुन्दरी थी। उसका नाम कुमारी एलिनर था। आयु उसकी अभी कोई चौबीस वर्ष की ही होगी। उसकी रूप-सुधा अद्वितीय थी। इस समय वह भी रानी की परिचर्या में उपस्थित थी। उसने इस समय जो श्रृंगार किया था उससे उसकी शोभा अकथनीय हो गई थी। उसकी बड़ी-बड़ी रसीली आंखें दिल पर तीर का घाव करती थीं। मनोहर चमकीले घुंघराले बालों की लटें रह-रहकर उसके गुलाबी गालों को चूम रही थीं। उसकी ललाई की आभा लिए गर्दन, उन्नत पुष्ट उरोज और पतली कमर इस वक्त गजब ढा रही थी। उसने कानों में सुबुक हीरे के इय-रिंग, गले में मोतियों का हार और हाथों में जवाहरात-जड़े ब्रेसलेट पहने थे। इस सब सज-धज से वह रति की शोभा को लजा रही थी।

यद्यपि वह सुकुमारी अभी कुमारी ही थी, पर उसने भी आज का श्रृंगार किसीको रिझाने के लिए ही किया था। असल बात तो यह थी और रानी की सभी सहेलियां यह बात जानती थीं कि जिस आदमी के लिए रानी ने यह श्रृंगार किया है, उसीके लिए एलिनर ने भी अपना रूप संवारा है। क्योंकि यह बात सभी जानती थीं। कि अर्ल आफ एसेक्स की वह चहेती थी जिसे रानी भी प्यार करती थी। रानी के कान में भी यह भनक पड़ी थी, पर उसे इसका कोई प्रमाण न मिला था। इसके अतिरिक्त रिश्ते में वह रानी की भतीजी ही थी, तथा रानी उसे प्यार भी बहुत करती थी। यद्यपि आज का उसका श्रृंगार रानी के मन में सन्देह उत्पन्न करनेवाला था पर ज्योंही वह सज-धजकर रानी के सामने आई, रानी उसकी रूप-माधुरी को देख ठगी-सी रह गई। उसके मुंह से केवल यह अस्पष्ट स्वर निकले, 'कितनी प्यारी दीख रही हो तुम, एलिनर!' एलिनर यह प्रशंसा सुनकर रानी के सम्मुख घुटनों के बल झुक गई। उसके गाल लाल हो गए और वह रानी से आंख न मिला सकी।

इसी क्षण अर्ल आफ ऐसेक्स ने कक्ष में प्रवेश किया। वह सीधा रानी के सामने आया, और घुटने टेककर उसने रानी के चरणों में सिर नवाया। परन्तु इससे पूर्व कक्ष में प्रविष्ट होते ही उसकी एलिनर से आंखें चार हुईं। उसने अनुराग भरी नज़र से एलिनर को देखा जिससे एलिनर के नेत्र और भी उज्जवल हो उठे।

यद्यपि यह भाव एक क्षण के भी सौवें भाग में हुआ, पर रानी की नजरों से वह न छिपा। परन्तु रानी ने अपने मन पर काबू किया और अर्ल के आगे शान से अपना हाथ फैला दिया, जिसे अर्ल ने आदरपूर्वक चूम लिया। अब रानी अर्ल के हाथ का सहारा लेकर चल खड़ी हुई। उसकी सहेलियां भी उसके पीछे थीं। एक बार अर्ल की दृष्टि फिर एलिनर के उन्नत उरोजों पर टकराई और एलिनर का मुंह लाल हो गया। रानी की नज़र से यह भी छिपा न रहा। परन्तु वह शान के साथ चलकर दरबार हाल में आई जहां लन्दन के सभी सम्भ्रान्त स्त्री-पुरुष उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। रानी को देखते ही सबने सिर झुका लिया। अब रानी के एक ओर अर्ल आफ एसेक्स खड़ा था, दूसरी ओर एलिनर। दोनों अपनी सुन्दरता में इंगलैण्ड-भर में अपना

जोड़ा नहीं रखते थे। एक बार फिर दोनों की आंखें चार हुईं। इस बार एलिनर ने जो कटाक्षपात किया उससे अर्ल इतना विचलित हो गया कि उसके हाथ कांपने लगे। उसका यह कम्पन और वह कटाक्ष भी रानी से छिपा न रहा। अब नाच आरम्भ हुआ। रानी ने अर्ल के साथ नाच आरम्भ किया। फिर रानी ने विजयी वीरों के साथ नृत्य किया। फिर दो बार अर्ल एलिनर के साथ नाचे। उस समय उस प्रशस्त कक्ष में रूप का बाग खिल रहा था। अनगिनत एक से बढ़कर एक सुन्दर जोड़े नाच और शराब पी रहे थे। मधुर वाद्य बज रहे थे आधी रात तक नृत्य होता रहा। अन्त में भोजन की सूचना मिली और सब कोई भोजन के कक्ष में पहुंचे। कक्ष के एक एकान्त छोर पर एक सुसज्जित मेज लगी थी, जिसपर तीन कुर्सियां सजी थीं। रानी, अर्ल और एलिनर उसीपर बैठ गए। यह कमरा भी अनोखी धज से सजा हुआ था। गंगा-जमनी काम के सुनहरी बर्तनों से वह टेबल भरी हुई थी। बड़े-बड़े झाड़ जल रहे थे, जिनका प्रतिबिम्ब कद्दआदम शीशों में पड़ रहा था, जिससे कमरे की शोभा सौ गुनी हो गई थी। उस रोशनी में रानी और उसकी सहेली की रूप-छटा अलौकिक दीख रही थी। रानी और अर्ल के साथ गुप्त सम्बन्ध को सब दरबारी भी जानते थे और इस समय विजयी वीरों के स्थान पर जो अर्ल के साथ नाचना रानी ने आरम्भ किया था, इससे सभी लोग उसकी चर्चा करने लगे थे और अब कनखियों से वे इस त्रिमूर्ति को देख और उन्हींके विषय में दबी ज़बान से आलोचना कर रहे थे। परन्तु रानी की नज़र अर्ल और अपनी सखी पर थी। क्षण-क्षण में जो उनके भाव और चेष्टाओं का व्यक्तिकरण होता था, उसे रानी एकाग्र मन से देख-समझ रही थी। अर्ल रानी से तो हंस-हंसकर बातें कर रहे थे, परन्तु एलिनर को सतृष्ण नज़र से पी रहे थे। एलिनर अर्ल की उस दृष्टि से कभी तो लजाकर सिर नीचा कर लेती, कभी भीत दृष्टि से रानी की ओर देखती। अर्ल को रानी प्यार करती है, यह वह जानती थी।

भोज भी चल रहा था। धीरे-धीरे अनेक प्रकार से भक्ष्य, भोज्य, चूष्य, लेह्य, पेय पदार्थों का खुलकर सेवन किया गया। छककर सुवासित मदिरा पी गई, फिर फल-फूल और मिठाइयां टेबल पर सजा दी गईं।

हठात् रानी टेबल पर से उठ खड़ी हुई। वह सीधी तनकर खड़ी

हो गई। नकीब ने धरती पर छड़ी ठोककर लोगों को सावधान होने का संकेत किया। कमरे में सन्नाटा छा गया, सब कोई सांस रोककर रानी की ओर देखने लगे। सबके मन संदेह से भर गए। रानी ने स्थिर स्वर से कहा—

'माई लार्डस और लेडीज़, आप भली भांति जानते हैं कि अर्ल आफ एसेक्स कितने राजभक्त, कुलीन और वीर पुरुष हैं। उन्होंने इंगलैण्ड की सेवा भी बहुत की है। हम जानती हैं कि वे हमारी भतीजी और सखी कुमारी एलिनर से प्रेम करते हैं। कुमारी एलिनर भी उनसे प्रेम करती है। दोनों की सुन्दर जोड़ी है। हम आज्ञा देती हैं कि दोनों का तत्काल यहीं इसी क्षण विवाह हो जाए। लार्ड बिशप आफ कैंटर-बरी जो यहां उपस्थित हैं, यह शुभ कर्म सम्पादन करें तथा आप लोग साक्षी रहें। कहिए आमीन।'

यह अप्रत्याशित वक्तव्य सुनकर सब कोई सन्नाटे में रह गए। इस बात की तो कोई सम्भावना ही न थी। फिर रानी तो स्वयं अर्ल को चाहती थी। फिर इस समय तो उन विजयी वीरों का अभिनन्दन होना चाहिए था जिनके सम्मान में यह समारोह किया गया था। परन्तु क्षण-भर बाद ही 'आमीन' का मर्मर शब्द उठा। रानी ने वर-वधू को सामने खड़ा किया और लार्ड बिशप आफ कैंटरबरी ने दोनों का विवाह प्रोटेस्टेण्ट मत से सम्पन्न कर दिया।

वर-वधू दोनों में से किसीको भी इस घटना की स्वप्न में भी सम्भावना नहीं थी। वे तो इसे अनहोनी समझते और अपने मनो-भावों को गोपनीय रखते थे। इस समय तो प्रसन्नता और आनन्द से उनके रक्त की प्रत्येक बूंद नाच रही थी। ऐसी मनभावन जोड़ी बिना भाग्य नहीं मिलती।

परन्तु अभी इस आनन्द की अनुभूति का एक क्षण ही व्यतीत हुआ था। ज्योंही लार्ड पादरी विवाह-विधि सम्पन्न करके वेदी से हटा, रानी ने फिर कहा, 'अर्ल आफ एसेक्स, हमें सूचना मिली है कि आयर-लैंड के अर्ल आफ ओनील ने हमारी सरकार के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खड़ा किया है। तुम एक वीर पुरुष सुने जाते हो, परन्तु अभी तक तुम्हारी वीरता की सच्ची परीक्षा नहीं हुई। यहां इस समय बड़े-बड़े विजेता वीर उपस्थित हैं। सर ड्रेक, सर जान हाकिन्स और सर

वाल्टर रैले और उनके अनेक साथी, जिन्होंने इंगलैंड का झण्डा ऊंचा करके हमारी महान कृपा प्राप्त की है। हमारी अभिलाषा है कि वही कृपा तुम भी प्राप्त करो और अपने अलौकिक वीरत्व का प्रमाण दो। बस, हम आज्ञा देती हैं कि तुम इसी क्षण आयरलैंड पर अभियान करो और विद्रोही अर्ल आफ ओनील को बांधकर हमारे हुजूर में ले आओ।'

इतना कहकर रानी तीर की भांति वहां से चल दी। सारे राज-पुरुष हक्के-बक्के खड़े के खड़े रह गए। वर-वधू को तो जैसे काठ मार गया। वे सक्ते की हालत में खड़े के खड़े रह गए। अर्ल आफ एसेक्स का मुंह क्रोध से लाल हो गया। उसने इतने जोर से अपना होंठ काट लिया कि खून निकल आया। फिर वह अपनी तलवार की मूंठ पर हाथ रखकर आंधी की भांति वहां से चला गया। सद्योवधू बेचारी पीपल के पत्ते की भांति कांपने लगी, उसका मुंह मुर्दे की भांति सफेद हो गया और वह मूर्छित होकर धरती में गिर गई।

६

दरबारी उमराव, लेडियां, सहेलियां, दासियां सभी कोई रानी के कक्ष की ओर दौड़ पड़े। पर रानी ने सिंहनी की भांति क्रुद्ध हो सबको दुत्कार दिया, 'जाओ, जाओ, चले जाओ। दूर हो, निकल जाओ, निकल जाओ।' किसीकी हिम्मत न पड़ी कि कुछ कहे। सब कोई कक्ष से बाहर चले गए। अब रानी कुर्सी पर सिर रखकर बैठ गई, और फूट-फूटकर रोने लगी। बड़ी देर तक रो लेने के बाद उसने नज़र उठाई। सामने कद्दे-आदम शीशे में उसने अपनी परछाईं देखी। पराजित, तिरस्कृत, अप-मानित—जिसे उसीकी आश्रित सेविका ने अभी-अभी पराजित किया था। उसका प्यार छीन लिया था। ओफ, इस दासी का यह साहस! उसने मेरे शिकार पर हाथ डाला! इंगलैंड की महामहिमावती रानी की भी उसने आन न मानी। अपने रूप पर उस दासी को इतना घमण्ड। पर मैंने बदला ले लिया। सुहागरात न होने पाई, न होने पाएगी। विवाह के क्षण से ही वह अपने को विधवा समझे। उसने फिर अपनी परछाईं सामने के शीशे में देखी। गुस्से से वह आपे से बाहर हो गई।

एक भारी पेपरवेट मेज़ से उठाकर उसने आईने पर दे मारा। कीमती आईना चूर-चूर होकर धरती पर आ रहा। इसके बाद उसने कमरे के चारों ओर देखा। उस ओर भी एक आइना कद्देआदम लगा था। अपनी पूरी परछाईं उसमें देखकर उसने पागल की भांति कहा, 'कौन है, कौन है तू, क्या रानी ? तू रानी है ? बेहया, अभागिन, तुझे तेरी ही दासी ने परास्त कर दिया। तेरा ही टुकड़ा खाकर वह तेरा प्रेम छीन ले गई। दूर हो, दूर हो, 'दूर हो।' उसने खींचकर पेपरवेट दे मारा। इसके बाद उसने एक-एक कर सब आईने तोड़-फोड़ डाले। फिर धरती में लोटकर फूट-फूट-कर रोने लगी। बड़ी देर तक धरती में पड़ी वह रोती रही। फिर उसने सिर उठाया। कांच के टुकड़े उसके पास भूमि में पड़े थे। एक टुकड़ा उठाकर उसमें उसने अपना मुख देखा, चेहरे पर झुरियां पड़ी हुई थीं। आंखों के आगे एक स्याह-सा मण्डल था। उसने कांपती हुई उंग-लियों से चेहरे की झुरियों को छुआ। देर तक वह अपने चेहरे की झुरियों को देखती रही। फिर उसने कहा, 'रानी होने पर भी तू बदसूरत बन गई, बुढ़िया बन गई, बासी हो गई! इंगलैंड की महा-महिम रानी पर भी प्रकृति ने यह निर्दय वार किया। साधारण स्त्रियों की भांति। कितना हीरा, मोती, स्वर्ण मेरे भण्डार में भरा है। आधे यूरोप की दौलत। पर इस सबको खर्च करके भी मैं इन झुरियों को अपने मुंह पर से नहीं हटा सकती, जो प्रकृति के निर्दय हाथों ने बना दी हैं। इंगलैंड की रानी आज अपनी ही आश्रिता दासी की अपेक्षा कंगाल है। उसका-सा रूप वह नहीं पा सकती। कहीं भी नहीं पा सकती। वह रूप न मेरा धन कहीं से खरीद सकता है, न धर्म दे सकता है, न इंगलैंड का सिंहासन। अजेय स्पेन पर मैंने विजय प्राप्त की, पर वह लजीली-सी, भयभीत-सी छोकरी मुझे जीत ले गई। आज मेरा गर्व ढह गया। मैं समझती थी कि मैं रानी हूं, मैं सर्वश्रेष्ठ हूं। कम से कम इंगलैंड में मेरी समता की स्त्री नहीं है। मैं मूर्ख अपने रानी के रूप को सर्वोपरि समझती रही। अपना औरत का रूप मैंने नहीं देखा। मैं समझती रही, वह रानी को प्यार करता है। पर मर्द प्यार रानी को नहीं, औरत को करता है। मैं नहीं जानती थी कि मैं एक औरत हूं। कैसे आश्चर्य की बात है! रानी की सम्पूर्ण गरिमा को चीरकर यह औरत कहां से मेरे अंदर से निकल आई, मुझे

अपमान, निराशा और पराजय में ढकेलने के लिए। उसने फिर एक बार शीशे के टुकड़े में अपने मुख की झुरियों को देखा, देर तक देखती रही। और फिर वह आंख बन्द करके अपनी एक असहाय परित्यक्ता औरत की मूर्ति देखते-देखते सो गई—वहीं भूमि में। सारी गुण-गरिमा, सम्बन्ध और राजपाट जैसे उसके लिए निर्जीव, निष्प्राण हो चुके थे, निकम्मे, निरर्थक हो चुके थे और जैसे वह अपने प्राणों का आधार ही खो चुकी थी।

७

इंगलैंड की महारानी एलिज़ाबेथ और स्काटलैंड की रानी मेरी स्टुअर्ट दोनों चचेरी बहनें थीं। हेनरी सातवें ने अपनी पुत्री मार्गरेट का विवाह स्काटलैंड के राजा जेम्स चतुर्थ के साथ कर दिया था। यह विवाह इस आशा से किया गया था कि दोनों पड़ौसी देशों के सम्बन्ध सुधरेंगे और पुरानी शत्रुता मिटेगी। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। स्काटलैंड बराबर इंगलैंड के प्रबल शत्रु और प्रतिस्पर्धी फ्रांस का ही साथ देता रहा। जब हेनरी आठवें का फ्रांस के साथ युद्ध ठना हुआ था, तब जेम्स चतुर्थ ने घात पाकर इंगलैंड पर आक्रमण कर दिया। परन्तु फ्लाउन के रणक्षेत्र में वह मारा गया। उसके बाद जब जेम्स पांचवां स्काटलैंड की गद्दी पर बैठा तो उसने भी फ्रांस ही से मित्रता रखी और इंगलैंड पर आक्रमण कर दिया। परन्तु सालवेमास के युद्ध में वह परास्त हुआ, और कुछ दिन बाद मर गया।

जेम्स पांचवें की मृत्यु होने पर उसकी पुत्री मेरी स्टुअर्ट स्काटलैंड की रानी हुई। उस समय वह दूधपीती बच्ची थी। इसलिए उसकी मां अभिभाविका बनकर राज्य-प्रबन्ध करने लगी। जब वह सयानी हुई, तब इंगलैंड की गद्दी पर एडवर्ड छठा बैठा था, जो हेनरी आठवें का बेटा था। उस समय उसके मामा ड्यूक आफ समरसेट ने, जो एडवर्ड का संरक्षक था, एडवर्ड का ब्याह मेरी से करना चाहा। पर प्रथम तो एडवर्ड अल्पायु था, दूसरे वह तपेदिक का रोगी था, तीसरे वह कट्टर प्रोटेस्टेंट था। इसलिए स्काटलैंडवालों ने इन्कार कर दिया।

इसपर ड्यूक ग्राफ समरसेट ने स्काटलैंड पर चढ़ाई कर दी। युद्ध में स्काटलैंड की पीनकी में पराजय हुई। फिर भी उन्होंने मेरी का ब्याह एडवर्ड से करना स्वीकार नहीं किया। उसे गुप्त रूप से फ्रांस भेज दिया गया, जहां उसका पालन-पोषण रोमन कैथोलिक तरीके पर हुआ, और वह कट्टर रोमन कैथोलिक हो गई। इसके बाद बड़ी होने पर उसका विवाह फ्रांस के राजकुमार से कर दिया।

उन दिनों फ्रांस इंगलैंड का धर्मशत्रु था और राजनीतिक शत्रु भा। इस बीच रानी एलिज़ाबेथ की प्रेरणा से स्काटलैंड में प्रोटेस्टेंट मत का प्रचार किया गया। यद्यपि मेरी की माता ने इसे रोकने की पूरी चेष्टा की, कई प्रचारक जीते जलाए भी गए, पर वह लहर रुकी नहीं, और स्काटलैंड के लार्डों ने नये धर्म को अपनाकर अपना एक दृढ़ संगठन कर लिया। इस बीच मेरी का पति फ्रांस का बादशाह हो गया और उसने स्काटलैंड में नये पंथवालों को दबाने के लिए सेना भेजी। इसके विपरीत स्काटलैंड के लार्डों की प्रार्थना पर एलिज़ाबेथ ने भी अपनी सेना उनकी सहायतार्थ भेज दी।

लीथ के मैदान में दोनों सेनाओं का युद्ध हुआ और फ्रांस की सेना परास्त हुई और लौट गई। इस बीच मेरी की माता मार्गरेट की भी मृत्यु हो गई और राज्य-प्रबन्ध नये पंथ के लार्डों को सौंपकर अंग्रेज़ी फौज वापस चली आई। इन लार्डों ने राज्य-प्रबन्ध ही नहीं, चर्च का प्रबन्ध भी अपने हाथों में ले लिया। अब स्काटलैंड से फ्रांस का हस्तक्षेप सर्वथा दूर हो गया। स्काटलैंड का यह नया शासक-मण्डल एलिज़ाबेथ के प्रभाव में रहा। चर्च-सुधार से स्काटलैंड की जनता भी प्रसन्न हुई और एलिज़ाबेथ की उपकृत हुई। इस प्रकार इतने दिन बाद अब इन दोनों देशों की पुरानी शत्रुता कम होने लगी।

सन् १५६१ में मेरी के पति फ्रांस के बादशाह की मृत्यु हो गई। मेरी की कोई संतान नहीं थी। इसलिए वह स्काटलैंड लौट आई और राज्य-प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया। वह कट्टर कैथोलिक थी, इसलिए धर्म-सुधार उसे रुचिकर न थे। परन्तु स्काटलैंड में अब नये पंथ की पक्की जड़ जम चुकी थी और प्रजा की उसीसे सहानुभूति थी। इसलिए न तो लार्डों ने, न प्रजा ने स्काटलैंड में रानी का स्वागत किया। साधारण प्रचारक तक रानी के लिए अपमानजनक

शब्द कहने लगे। अपनी स्थिति ठीक रखने के लिए मेरी ने अपने चचेरे भाई लार्ड डार्नले से विवाह कर लिया। परन्तु शीघ्र ही यह विवाह दुखदायी हो उठा। दोनों एक-दूसरे के चरित्रों पर संदेह और आक्षेप करने लगे। इन्हीं दिनों रिटजियो नामक एक सुन्दर पुरुष से मेरी की बहुत घनिष्ठता हो गई। एक दिन उसके पति न मेरी के शयनागार में रंगों हाथों उसे धर दबोचा और उसका मेरी के सम्मुख ही उसीके कमरे में निर्दयतापूर्वक वध कर डाला। मेरी क्रोध और क्षोभ से पागल हो गई और उसने प्रतिज्ञा की कि वह इसका बदला लेगी।

कुछ दिन बाद ही मेरी ने अपने एक दूसरे सरदार अर्ल आफ वोर्थवेल से आशनाई कर ली और वे दोनों डार्नले से पिण्ड छुड़ाने का उपाय सोचने लगे, जो अब रानी की आंखों का शूल बना हुआ था। डार्नले एडिनबरा से कुछ दूर कर्कोफील्ड नामक स्थान में अपने निजी मकान में रहता था। अभी रानी के पिछले यार को मरे पूरा एक वर्ष भी नहीं बीता था कि उसने पति के साथ घुल-मिलकर रहना शुरू कर दिया और एक दिन बेहद प्रेम प्रकट करके उसे खूब शराब पिलाई और तब वह एक भोज में सम्मिलित होने का बहाना करके वहां से चल दी। चलती बार उसने ये शब्द कहे, 'आज ही के दिन गत वर्ष रिटजियो का खून किया गया था।' उसके इन शब्दों तथा उसके नेत्रों के भयानक भाव तथा व्यंग्यपूर्ण मुस्कराहट से उसके पति को संदेह तो हुआ, वह घबराया भी, पर बेहद शराब पीने से उसमें सोचने की कुछ भी सामर्थ्य न रह गई थी। मकान के तहखाने में बारूद बिछा दी गई थी। उसमें तुरन्त आग लगा दी गई। एक भयानक धड़ाका हुआ और महल की धज्जियां उड़ गईं। अभागा डार्नले चालीस गज दूर एक पेड़ से जा टकराया। उसका सिर चकनाचूर हो गया।

इस रोमांचकारी घटना के कुछ ही दिन बाद १५ जून को रानी ने अपना ब्याह लार्ड वोर्थवेल से धूमधाम से कर लिया।

रानी से स्काटलैंड के लार्ड और प्रजावर्गीजन कोई भी प्रसन्न न था। अब इस दुहरी भयानक कार्यवाही से सबका मन रानी के प्रति घृणा और विद्रोह से भर गया। प्रकट था कि अर्ल आफ वोर्थवेल

की सहायता से रानी ने अपने पति की क्रूर हत्या की थी। फिर विवाह का अभिनय तो निर्लज्जता की पराकाष्ठा थी। विवाह के बाद ही प्रजा और लार्डों ने मिलकर विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया। रानी अभी अपनी सुहागरात भी अच्छी तरह न मना सकी थी कि गिरफ्तार कर ली गई और लोचेलवेल के दुर्ग में कैद कर ली गई जहां से वह अब भाग निकली थी।

परन्तु उसके भाग्य ने साथ नहीं दिया। उसके मित्रों ने बहुत जोड़-तोड़ लगाए, सेना एकत्र की; अन्त में ग्लासगो के निकट लैंगसाइट के मैदान में उसका सौभाग्य-सूर्य सदा को अस्त हो गया। रीजेंट मरे ने उसकी सेना को पूरी तौर पर विध्वंस कर दिया। रानी ने कर्थकाट के दुर्ग से अपनी सेना का विनाश देखा। उसकी आशालता मुरझा गई। अब उसे इंगलैंड की महारानी अपनी बहन एलिज़ाबेथ का ही आसरा था। अपने निजी सेवकों के साथ घोड़े पर सवार होकर वह इंगलैंड को भागी और अपने को एलिज़ाबेथ की दया पर छोड़ दिया। एलिजाबेथ ने उसपर अधिक दया न की, और उसने उसे लोचेलवल कैसल में कैद कर लिया।

८

इंगलैंड के एकान्त दुर्ग में कैद स्काटलैंड की रानी के लम्बे बीस बरस कितने नीरस, कितने उत्तेजना से भरपूर और कितने कड़वे बीते थे, इसका विवरण देना असम्भव है। यद्यपि दु:ख-दर्द और समय ने उसे बड़े-बड़े झकझोरे दिए थे परन्तु उसका रूप-लावण्य वैसा ही बना हुआ था। एलिज़ाबेथ और उसमें बड़ा अन्तर था। एलिज़ाबेथ सुन्दर न थी और यह परम सुन्दरी थी। इतनी आयु होने पर, इतना वेदनापूर्ण जीवन व्यतीत करने पर भी अभी उसमें आकर्षण था। उसकी आकृति अब भी देखनेवालों को मोहित करती थी। परन्तु एलिज़ाबेथ जैसी राजनीति-निपुण, रुआब और दबदबे की स्त्री थी, मेरी उतनी ही साधारण, दुर्बल हृदय की खटपटी और तुच्छ स्त्री थी। सबसे बड़ी बात यह थी कि रानी एलिजाबेथ कट्टर-प्रोटेस्टेंट थी और मेरी कट्टर

रोमन कैथोलिक। इन दोनों के वैमनस्य का एक यह भी गूढ़ कारण था। परन्तु एक और बात इससे भी अधिक गम्भीर थी।

रानी एलिज़ाबेथ का जन्म हेनरी अष्टम और रानी एनीबोलीन से हुआ था। हेनरी ने रानी एनीबोलीन से बिना पोप की आज्ञा के ही विवाह किया था, इसलिए कैथोलिक लोग इस विवाह को विधि-विहित नहीं समझते थे और अपने मत से एनीबोलीन की पुत्री रानी एलिज़ाबेथ को भी वे इंगलैंड की गद्दी की सही अधिकारिणी नहीं मानते थे। मेरी हेनरी आठवें की बड़ी बहन मार्गरेट की पुत्री थी। इसलिए एलिज़ाबेथ यदि इंगलैंड की अवैध उत्तराधिकारिणी प्रमाणित होती तो मेरी ट्यूडर वंश की प्रतिनिधि के रूप में इंगलैंड के सिंहासन की प्रकृत अधिकारिणी थी। रानी मेरी चाहे जितनी दुर्बलहृदय हो, पर वह महत्त्वाकांक्षिणी और खटपटी अवश्य थी। इंगलैंड में जबसे मेरी कैद हुई थी, तभीसे रोमन कैथोलिक दल इंगलैंड की गद्दी पर उसके इस दावे की चर्चा दबी ज़बान से करता रहता था। परन्तु एलिज़ाबेथ बड़ी दबंग-स्त्री थी। वह बुद्धिमती और दूरदर्शिणी भी थी। वह इस धर्मसंकट से बेखबर न थी। इसीलिए उसने गद्दी पर बैठने के बाद सबसे पहले चर्च का निर्णय किया था और यह बात खलेआम आगे लाई गई थी कि सरकारी धर्म क्या हो। वह न कैथोलिकों को और न प्रोटेस्टेंटों को ही अप्रसन्न करना चाहती थी। हां, वह थी कट्टर प्रोटेस्टेंट। परन्तु प्रजा के लिए उसने एक बीच का मार्ग निकाला था तथा नेशनल चर्च की नींव डाली थी, जिसे चर्च आफ इंगलैंड के नाम से पुकारा जाता था। इसमें दोनों मतों की क्रिया-विधि थीं परन्तु पोप से सम्बन्ध बिलकुल विच्छिन्न कर दिया गया था। इसके अतिरिक्त उसने एक ऐक्ट आफ सुप्रीमेसी पार्लियामेंट से पास कराया था, जिसके आधार पर इंगलैंड का अधीश्वर ही चर्च आफ इंगलैंड का अधिष्ठाता होता था। इसके बाद उसने एक्ट आफ युनिफार्मिटी बनाकर 'बुक आफ कामन प्रेयर' का प्रयोग समस्त गिरजाघरों में अनिवार्य ठहरा दिया था। एलिज़ाबेथ के इस निर्णय से दोनों धर्मों के लोग सन्तुष्ट हो गए थे, परन्तु कट्टर कैथोलिक और पक्के प्रोटेस्टेंट विरोधी थे। पर रानी ने ऐसे विरोधियों को दण्ड देने के लिए एक पृथक् न्यायालय स्थापित किया था। एलिज़ाबेथ के इस बुद्धिमानी और

दूरदर्शितापूर्ण धार्मिक निर्णय से पिछले पचास वर्षों से चले आते धार्मिक झगड़े खत्म हो गए थे और लोग धर्मविभीषिका से मुक्त होकर अपने काम-धंधे में विकास करने लगे थे जिससे इंगलैंड की जनता को बेहद लाभ हुआ था।

परन्तु मेरी और उसके समर्थकों को चैन न था। मेरी के इंगलैंड में रहने से कैथोलिकों का साहस बढ़ गया था और वे अब धीरे-धीरे यह षड्यन्त्र रचने लगे कि एलिज़ाबेथ को मारकर मेरी को इंगलैंड के सिंहासन पर बिठाएं। पर एलिज़ाबेथ का गुप्तचर विभाग निपुणता से काम कर रहा था। इस परिस्थिति से लाभ उठाकर पोप ने एलिज़ाबेथ को पतित घोषित कर दिया था और जीसूइट लोग इंगलैंड में खुलेआम यह कहते फिरते थे कि एलिज़ाबेथ के विरुद्ध विद्रोह करना धर्म है। परन्तु इस स्थिति में एलिज़ाबेथ घबराई नहीं। उसने कड़े हाथों से अपराधियों को दण्ड देने की व्यवस्था की।

बड़े-बड़े लार्ड और जनता के प्रतिनिधि उसके साथ थे। उसकी समन्वय-नीति, शौर्य और धैर्य पर सभी श्रद्धावान थे। यद्यपि उसके चरित्र-दौर्बल्य की बातें भी कही जाती थीं, परन्तु उसकी दृढ़ता भी विख्यात थी। आर्मेडा की विजय ने रानी के प्रति सबको श्रद्धावान बना दिया था। फिर उसके मन्त्री और सहायक भी सावधान और योग्य थे। सबने हस्ताक्षर किए कि वे तन, मन, धन से रानी के साथ हैं। अन्त में एक ऐसे षड्यन्त्र का पता लगा जो रानी एलिज़ाबेथ को मार डालने के लिए किया गया था और जिसमें मेरी स्टुअर्ट सम्मिलित थी। मेरी पर कोर्ट में मुकदमा चलाया गया और वह अपराधिनी प्रमाणित हुई, जहां से उसे प्राणदण्ड की आज्ञा हुई और एलिज़ाबेथ ने कांपते हाथों उसका सिर काट लेने के वारंट पर हस्ताक्षर कर दिए।

लार्ड सेल्सबरी, अर्ल आफ कैंट, नार्थम्पटनशायर के मेयर मृत्यु-सन्देश लेकर मेरी के पास पहुंचे। उन्होंने गम्भीरतापूर्वक संक्षेप में वह सन्देश सुनाया और यह भी सूचना दी कि हमारे साथ आपका वध देखने के लिए एक शाही कमीशन भी है और कल प्रातःकाल वह इस दुःखदायी घटना के लिए तैयार रहे।

यह भीषण संदेश उसपर वज्रपात की भांति गिरा। ऐसा प्रतीत

होता था कि उसका हृदय फट जाएगा। उसने घृणा और कष्ट से सिर ऊंचा करके कहा, 'कृपया मेरे चिकित्सक को तुरन्त मेरे पास भेज दीजिए।'

मृत्यु सन्देशवाहक क्षण-भर कुछ सोचते रहे। उन्हें भय था कि कहीं वह रात में आत्मघात न कर ले, या कहीं ऐसा न हो कि वह वधस्थल तक जाने से इन्कार कर दे और उसे बलपूर्वक ले जाना पड़े। परन्तु उन्होंने उसकी आज्ञा का पालन किया। वे चले गए। रानी का चिकित्सक आया। मेरी उसे फ्रांस में फैली हुई अपनी रकम के सम्बन्ध में देर तक आदेश देती रही।

अब उसका अन्तसमय निकट था, जिसके लिए वह चिरकाल से भयभीत थी। अब तक आशा की जो एक क्षीण रेखा थी, वह अब विलुप्त हो चुकी थी। अब जिस कार्य के लिए उससे तैयार होने को कहा गया था, और जिसके भयानक अस्तित्व का उसे सामना करना था, उसने उसकी तमाम दुश्चिन्ताएं, बदले की भावनाए, विरोध की चेष्टाएं, प्रतिद्वन्द्वी के सिंहासन पर बैठने की सुखद कल्पनाएं, सब कुछ एकसाथ ही नष्ट कर दी थीं। उसने बहुत गहरी चाल खेली थी, पर पासा उलटा पड़ा था। उसका दुर्भाग्य विद्रूप से हंस रहा था।

उसका पादरी किले के उस पार था। कमिश्नर लोग चाहते थे कि वह मृत्युसमय प्रोटेस्टेंट विश्वास के अनुसार प्रार्थना करे। उन्होंने अपना पादरी उसके पास भेजा भी, पर रानी ने उसे नामंजूर कर दिया। अपने पादरी को बुलाने की उसे आज्ञा नहीं मिली। इसलिए उसने उसे पत्र लिखा, 'धर्मपिता, मेरी इच्छा अपने विश्वास और धर्म की रीति पालन करने की है। आप मेरे पास आ नहीं सकते। इस-लिए मैं साधारण स्वीकृति पर ही सन्तोष करूंगी। परन्तु आप रात-भर सावधान रहकर मेरे लिए प्रार्थना करें।'

रात को भोजन उसने अपनी दासी के साथ प्रसन्न मन से किया। यही उस बदनसीब का अन्तिम भोजन था। भोजन कर चुकने पर उसने अपनी दासी से कहा, 'क्या मैं तुम्हारा विश्वास कर सकती हूं?'

'अवश्य श्रीमती।'

'मेरे पास एक पत्र और दो हीरे हैं। मैं उन्हें मैण्डोज़ा के पास भेजना चाहती हूं।'

दासी ने पत्र और हीरे लेकर अपने वस्त्रों में छुपा लिए और ठिकाने पर पहुंचाने का वादा किया। एक हीरा मैण्डोज़ा के लिए था, दूसरा फिलिप के लिए। यह इस बात का चिह्न था कि वह निरपराध मारी जा रही है और उसके बाद उसके मित्रों और नौकरों की देखभाल की जाए। उसने याद कर-करके अपने सभी नौकरों और मित्रों के नाम बताए। अरण्डेल, पैंगट, सोरगन, बिशप आफ ग्लासगो, श्रोग मारटन, रोज़ का पादरी, दोनों सेक्रेटरी, वे सहेलियां और दासियां जो कैद में उसके साथ रहीं थीं, सबको उसने बताया और किस-किसको कितना देने की उसकी इच्छा है, यह भी फिलिप को लिख दिया। अपने विश्वासपात्रों पर उदारता दिखाना उसका स्वभाव था। आज भी वह उन्हें भूली नहीं थी। इसके बाद उसने अपने नये-पुराने समस्त शत्रुओं को याद किया, और उन्हें धन्यवाद दिया। अब उसका किसीसे द्वेष न था। उसने दासी से कहा, 'फिलिप से कहना कि यह उसकी मां की आखिरी प्रार्थना है, और मैं चाहती हूं कि इसे तुम गुप्त रखो। यह संदेश मेरी की मृत्यु के उपलक्ष्य में नहीं है किन्तु इंगलैंड के भावी युद्ध के उपलक्ष्य में है। यह अनिवार्य विग्रह है जो तुम्हारे लिए गौरव की बात है। जब तुम विजय प्राप्त कर लो तो तुम उन दुर्व्यवहारों को याद रखना, जो सिसिल लेसेस्टर और वालसिंगम ने मेरे साथ किए हैं। लार्ड हण्डिगटन ने टटवर आने से पूर्व पन्द्रह वर्ष तक मेरे साथ कैसा व्यवहार किया था, और सर अमयास पोलट और सेक्रेटरी वेड ने कैसे-कैसे अत्याचार किए थे यह याद रखना।'

वह रात-भर व्यस्त रही। काम बहुत था और समय कम। आधी रात के बाद उसने एक पत्र फ्रांस के बादशाह को लिखा, उसमें लिखा था, इंगलैंड के सिंहासन पर मेरा अधिकार है। मैं अधर्म से धर्म के लिए मारी जा रही हूं। निर्दोष। अंत में उसने उन रुपयों के सम्बन्ध में लिखा था जो बादशाह के पास जमा थे और बताया था कि उसके मरने के बाद उनके अनुचरों को किस तरह दिया जाए।

पत्र लिखकर वह सो गई और प्रातःकाल तक सोती रही।

९

प्रातःकाल ज्योंही आठ का घड़ियाल बजा, मेयर दो आदमियों से साथ भीतर आया। सामने मेरी स्टुअर्ट की मोहिनी मूर्ति खड़ी थी। उसे देख वे मुग्ध जड़ हो गए। एक अपूर्व तेज और सौन्दर्य उसके चेहरे पर छा रहा था। वह सुन्दर सफेद अतलस की सदा की पोशाक के स्थान पर काली साटन की पोशाक पहने हुए थी। उसमें झालर टंकी थी और मखमल की गोट लगी थी। उसके नकली बाल बड़ी सुघराई से बंधे हुए थे। सिर और कमर पर लटकता हुआ सफेद दुपट्टा पड़ा था। गर्दन में सोने का एक नैकलेस था और हाथी-दांत का सुन्दर क्रास। उसकी कमर में एक पेटी थी जिसमें जवाहरात में जड़ी पवित्र प्रार्थनाएं अंकित थीं।

पोलेट के दो आदमियों के साथ वह चली। उसके आगे मेयर था। वह दालान में आई, जहां सेलसबरी, कैण्ट, पोलेट, डूरी और दूसरे उच्चपदस्थ राजपुरुष उसकी प्रतीक्षा में खड़े थे। सर राबर्ट का भाई एण्ड्रूज मेलविल्ले, जो उसका प्रधान गृहप्रबन्धक था, वहां घुटने टेके आंसू बहा रहा था।

रानी ने कहा, 'मेलविल्ले, रोओ मत। खुश होओ कि मैं एक रोमन कैथोलिक की भांति मर रही हूं। मेरे मित्रों और पुत्र से कहना कि स्काटलैंड के सिंहासन का मैंने कोई अनिष्ट नहीं किया है।'

मेलविल्ले ने सिसकियां लेते हुए कहा, 'विदा, अलविदा!'

'पवित्र पिता और मेरी सहेलियां कहां हैं, मैं चाहती हूं कि वे मुझे मरते हुए देखें।'

'मुझे भय है कि कहीं वे चीख मारकर बेहोश न हो जाएं। मैं समझता हूं कि वे अपने रूमालों को आपके रक्त में रंगने का प्रयत्न करेंगे।' कैण्ट ने कहा।

'वे शान्त और आज्ञाकारी रहेंगे, विश्वास रखिए। क्या तुम्हारी रानी एलिजाबेथ मेरी इस तुच्छ प्रार्थना को भी स्वीकार नहीं कर सकती?'

'श्रीमती, मुझे खेद है, बहुत खेद······।' कैण्ट ने कहा।

रानी ने रोते हुए कहा, 'तुम जानते हो, मैं तुम्हारी रानी की

बहन और स्काटलैंड की रानी हूं। अष्टम हेनरी का रक्त हम दोनों ही के शरीर में है। विवाह के बाद मैं फ्रांस की रानी बनी। फिर स्काटलैंड का मुकुट मेरे मस्तक पर रखा गया।'

'श्रीमती, आप केवल छः व्यक्तियों को अपने अंतिम समय में उपस्थित रख सकती हैं।'

रानी ने अपने चिकित्सक वरगन, एण्ड्रयू, मेलविल्ले, गोरियन और दो स्त्रियों के नाम गिना दिए। फिर उसने एक ठण्डी सांस ली और कहा, 'अच्छा तो अब हमें चलना चाहिए।' उसने एक गार्ड के कंधे का सहारा लिया और अर्ल के साथ सीढ़ियां उतरने लगी।

सब लोग दालान तक पहुंचे। मेरी के प्राणदण्ड का समाचार लंदन में सर्वत्र फैल गया था और दालान के बाहर अपार भीड़ आ जुटी थी। चुने हुए केवल तीन सौ सरदारों और लार्डों को इस कत्ल के साक्षी-स्वरूप अंदर आने दिया गया था। मेज़-कुर्सियां हटा दी गई थीं। चिमनियों से आग की लपटें निकल रही थीं। दालान के ऊपरी हिस्से में अंगीठी के पीछे की तरफ वध-मंच बनाया गया था, जो बारह फुट लम्बा-चौड़ा और अढ़ाई फुट ऊंचा था। वह एक काले कपड़े से ढका था और काले ही कपड़े से मढ़ी हुई एक लकड़ी की पाढ़ इसपर जड़ी गई थी। मेयर के गार्ड उसके चारों तरफ घूम-घूमकर पहरा दे रहे थे। और भीड़ को उधर आने से रोक रहे थे। पाढ़ पर सिर रखने की टिकटी थी। वह भी काले कपड़े से मढ़ी हुई थी। इसके पीछे एक चौकी बिछी थी और उसके पीछे एक काली कुर्सी रखी हुई थी, जिसके दाहिनी ओर लार्डों के लिए दो कुर्सियां वैसी ही रखी थीं। पाढ़ के सहारे एक विशाल कुल्हाड़ा रखा हुआ था और दो निश्चल भयानक जल्लाद उसके निकट खड़े थे।

रानी इस तरह उधर की ओर बढ़ रही थी जैसे वह कोई गम्भीर पार्ट करने जा रही हो। उसके चेहरे पर इस समय कोई विषाद की रेखा न थी। वह शांत और गम्भीर थी। पाढ़ पर पहुंचकर उसने मुस्कराकर इधर-उधर देखा और बैठ गई। सेल्सबरी और कैण्ट के अर्ल भी बैठ गए।

अब वियेल ने ज़ोर से आज्ञापत्र पढ़कर सुनाया। उस जनसमुद्र में मेरी स्टुअर्ट ही एक ऐसी स्त्री थी जिसे अपनी मृत्यु के शब्दों में

दिलचस्पी नहीं थी ।

'श्रीमती,' लार्ड सेल्सबरी ने आज्ञापत्र सुनाने के बाद कहा, आपने सुन लिया कि हम किस आज्ञा का पालन करने को बाध्य हैं ?'

'तुम अपना कर्तव्य पूरा करो,' यह कहकर वह प्रार्थना के लिए उठ खड़ी हुई ।

पीटर्सबर्ग का पादरी डा० फ्लेचर उठा और पाड़ तक पहुंचा । उसने मृदु मन्द स्वर से कहा, 'श्रीमती, उदार स्काटलैंड की महारानी…।'

वह और कुछ कहना ही चाहता था कि रानी ने बीच ही में बात काटकर कहा, 'पादरी महोदय, मैं एक कैथोलिक हूं और कैथोलिक की भांति ही मरना चाहती हूं । आप मुझे मेरे निश्चय से विचलित करने का व्यर्थ प्रयत्न मत कीजिए । आपकी प्रार्थना से मेरा कोई लाभ नहीं होगा ।'

'श्रीमती, आप अपने विचार बदलें । अपने पापों का प्रायश्चित्त करें और प्रभु मसीह की शरण जाएं ।' पादरी ने आगे बढ़ते हुए कहा ।

रानी ने लड़खड़ाती आवाज़ से कहा, 'अधिक कष्ट न करें पादरी महोदय, मुझे अपने धर्म पर ही विश्वास है ।' इसपर लार्ड सेल्सबरी ने आगे बढ़कर कहा, 'श्रीमती, मुझे दुःख है कि आप अपने कैथोलिक धर्म पर इस तरह अटल हैं ।'

इसी समय कैण्ट के अर्ल ने व्यंग्य से कहा, 'जिस प्रभु मसीह की मूर्ति का आप ध्यान करती हैं, वह यदि आपके हृदय में अंकित कर दी जाए तो भी, मैं समझता हूं कोई लाभ न होगा ।'

पर रानी ने इस व्यंग्य का कोई जवाब नहीं दिया । वह फ्लेचर की ओर मुड़कर प्रार्थना करने लगी ।

उन लोगों को आदेश दिया गया था कि उस समय रोमन कैथोलिक धर्म का जो दृश्य उपस्थित किया जाए वह यथासम्भव प्रकट न होने पाए । पर मेरी चाहती थी कि उसका स्वरूप उपस्थित जनसमूह पर भली-भांति प्रकट हो जाए । वह नीचे को झुकी और जोर-जोर से प्रार्थना करने लगी । इस प्रार्थना में लगभग सारा उपस्थित जन-समुदाय शरीक हो गया । वायुमण्डल हजारों कण्ठों की सम्मिलित ध्वनि से गूंज उठा । अपनी आवाज उस बड़े दालान में गूंजती देख

उसने अपनी पूरी शक्ति से लैटिन भाषा में ज़ोर-ज़ोर से प्रार्थना करनी आरम्भ कर दी। बीच-बीच में वह अंग्रेज़ी भी बोलती थी जिससे श्रोतागण उसका अर्थ समझ लें। वह सरलतापूर्वक अपने पवित्र पिता पोप से प्रार्थना कर रही थी। अधिक ज़ोर से बोलने के कारण उसकी छाती ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगी। पादरी ने विरोध करना छोड़ दिया और मेरी शेष प्रार्थना अंग्रेज़ी में करने लगी। उसकी भाषा सतेज थी। उसने अपने चर्च के लिए प्रार्थना की, अपने पुत्र के लिए प्रार्थना की और रानी एलिज़ाबेथ के लिए प्रार्थना की। अन्त में उसने कहा, 'प्रभु, इंगलड पर कोप मत करना।'

इसी इंगलैण्ड से युद्ध करने के लिए उसने अपने पुत्र फिलिप को अंतसमय तक अड़े रहने का आदेश दिया था। यहां उसने अपने शत्रुओं को क्षमा कर दिया। परन्तु फिलिप से इन शत्रुओं को न भूल जाने को उसने कहलाया था। अंत में उसने चिल्लाकर कहा, 'प्रभू यीशू, जिस प्रकार तुम्हारी बांहें सूली पर लटकाई गई थीं, उसी प्रकार मुझे भी अपनी शरण में लो और मेरे पापों को क्षमा करो।'

वह उठ खड़ी हुई। दोनों जल्लाद आगे बढ़े और रानी से क्षमा मांगी।

'मैं तुम्हे क्षमा करती हूं, क्योंकि तुम मेरे कष्टों का अन्त कर दोगे' उसने शांत वाणी से कहा।

जल्लादों ने कहा, 'श्रीमती, अपने वस्त्र संभालने में हमें सहायता करने देंगी ?"

रानी ने मुस्कराकर कहा, 'सच है, ऐसे आज्ञाकारी सेवक मुझे पहले कभी न मिले थे।'

उसकी सहेलियों को ऊपर आकर उसके वस्त्र ठीक करने की आज्ञा मिल गई। यह काम नाज़ुक था। उसने अपने हाथ का बहुमूल्य क्रास कुर्सी पर रख दिया। जल्लाद ने उसे उपहार समझकर उठा लिया, पर रानी ने उसे वहीं रख देने की आज्ञा दी। ओढ़ना उतारकर सावधानी से कुर्सी पर रख दिया गया, फिर काला लबादा भी उतार लिया गया। इसके नीचे मखमली पेटीकोट था। उसके भीतर काली जाकेट थी। जाकेट के नीचे अतलस की चोली थी। उसकी एक सहेली ने उसे अपनी मखमल की आस्तीनें दीं, जिन्हें उसने जल्दी से पहचान लिया।

अब उसे काली पाढ़ पर खड़ा किया गया। उसके चारों ओर काली मूर्तियां थीं। क्षण-भर को रानी के खून की गति रुक गई। सहेलियां अब अपने को न संभाल सकीं। वे फूट-फूटकर रोने लगीं। उनका आर्तनाद सुनकर मेरी ने कहा, 'धैर्य धरो, रोकर कायरता प्रकट न करो।'

इसके बाद उसने बारी-बारी से उनका गाढ़ालिंगन किया और ईश्वर से प्रार्थना करने का आदेश दिया। फिर वह घुटने टेककर बैठ गई। बरबरा मोब्री ने उसकी आंखों पर पट्टी बांध दी।

रानी ने मुस्कराकर पुकारा, 'एण्ड्रयू', एण्ड्रयू आगे आया। उसने उसको स्पर्श किया और कहा, 'एण्ड्रयू, विदा!'

यह उसका अन्तिम नर-स्पर्श और मुस्कान थी।

सब लोग पाढ़ से उतरकर दूर चले गए। उसने घुटने टेके हुए ही कहा, 'हे प्रभु, मेरा विश्वास तुम्हारे ही ऊपर है।'

उसके कन्धे उघड़ गए थे। उनपर दोनों ओर एक-एक घाव का चिह्न था। कैण्ट ने बेंत के संकेत से पूछा यह क्या है? सेल्सबरी ने धीरे से कान में कहा, 'यह उस समय के हैं, जब वह मेरे साथ शेफील्ड में रहती थी।' जब वह प्रार्थना कर चुकी तो उसने टिकटी को संभाला। और अपना सिर उसपर रख दिया और कुछ गुनगुनाने लगी।

लकड़ी सख्त थी। वह उसके गले में चुभ रही थी। उसने गर्दन के नीचे अपने हाथ रख लिए। वधिकों ने उन्हें धीरे से हटा दिया, ताकि चोटें खाली न जाएं। फिर एक ने उसे अच्छी तरह पकड़ लिया और दूसरे ने कुल्हाड़े से चोट की।

बड़ा ही भयानक करुण दृश्य था। वधिक के हाथ लड़खड़ा गए थे और चोट रूमाल की गांठ पर पड़ी थी, जिससे ज़रा-सी चमड़ी कटकर गिर पड़ी। उसने फिर चोट की और यह पूरी बैठी। गर्दन कटकर ज़रा-सी खाल के सहारे लटक गई और फिर अलग हो गई।

दृश्य बदल गया और उसके साथ सुन्दरी मेरी बदल गई। सब कुछ एक जादू के समान हो गया। तख्त पर पड़ी रानी की लाश उसीके गर्म खून के सागर में डूबी हुई देख लोगों में सिहरन दौड़ गई। वधिक ने कायदे के अनुसार उसका सिर ऊपर उठाकर लोगों को

दिखाया। अब भी उस कुम्हलाए मुख से दयनीयता फूटी पड़ती थी। पीटर्सबर्ग के पादरी ने चिल्लाकर कहा, 'महारानी के शत्रु नष्ट हुए।'

जनसमुदाय से ध्वनि उठी, 'आमीन !'

ड्यूक आफ कैण्ट उठकर लाश पर पैर रखकर खड़ा हो गया। उसने चिल्लाकर कहा, 'महारानी और गोस्पल के शत्रुओं की यह दुर्दशा हुई।'

१०

जिस समय लन्दन में यह रोमांचकारी घटना हो रही थी, उस समय एक मज़बूत समुद्री बेड़े के साथ सर फ्रांसिस ड्रेक, जो उन दिनों समूचे यूरोप में अपनी साहसिक डकैतियों के कारण 'समुद्री कुत्ते' के नाम से विख्यात था, अपनी साहसिक डकैती-यात्रा पर निकला हुआ था। स्पेन के आर्मेडा का विध्वंस करने के बाद उसके हौसले बहुत बढ़ गए थे। अन्य देशों के जहाज़ों को लूट लेने की उसे रानी ने खुली छुट्टी दे रखी थी। वे दिन ही ऐसे थे जबकि स्थल पर निरन्तर खून-खराबियां होती रहती थीं और जल में डकैतियां। ऐसे काम तब राज-नीति के अंग ही माने जाते थे और इंगलैण्ड में खास तौर पर ये समुद्री कुत्ते हीरो माने जाते थे। इसीसे सर ड्रेक को सर का खिताब और दूसरी प्रतिष्ठाएं रानी के दरबार से मिली थीं। हकीकत यह थी कि उन्हींकी कार्यवाहियों से इंगलैण्ड का क्षुद्र टापू लहरों का स्वामी बनता जाता था।

भारत का नाम यूरोप में उन दिनों अतुल सम्पत्ति के लिए विख्यात था। उधर से आने वाले डच, पोर्चुगीज़ आततायियों की लूट के माल से भरे हुए जहाज़ और वहां के लोगों से मुगल दरबार की शान और तड़क-भड़क की चर्चा यूरोप-भर में फैली हुई थी। भारत की समृद्धि की भांति-भांति की कहानियां तब यूरोप की जातियों में विख्यात थीं, जो मध्य एशिया में होकर यूरोप पहुंचती थीं। इससे यूरोप के लगभग सभी देशों के साहसिक जन भारत में पहुंचने और वहां की बेशुमार दौलत लूटने को लालायित रहते थे।

यूरोप की इन जातियों में पुर्तगाल सबसे अधिक भाग्यवान प्रमाणित हुआ था। उसका प्रसिद्ध नाविक वास्कोडिगामा केप आफ गुड होप से होता हुआ पन्द्रहवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में ही भारत पहुंच चुका था और उस समय से लेकर पूरे सौ वर्ष तक भारत में उसकी प्रतिस्पर्धा करनेवाला दूसरा कोई भी यूरोपियन न था इसलिए पुर्तगाल ने भारत को मन भरकर लूटा।

पुर्तगालवाले जिस समय भारत में पहले-पहल घुसे तो उनके एक हाथ में तलवार थी और दूसरे में क्रास। परन्तु जब सोने का ढेर उनके सामने आया तो उन्होंने क्रास को ताक पर रखकर जेबों में सोना भरना आरम्भ कर दिया। परन्तु सोना बहुत अधिक था, एक हाथ में न समा सकता था, इसलिए उन्होंने तलवार भी एक ओर रख दी। ठीक इसी समय यूरोप की दूसरी जातियों के लोग भारत में आ पहुंचे और उनपर हावी हो गए।

इस समय पुर्तगाल और स्पेन में पूर्वी एशिया को हड़प लेने की होड़ लगी हुई थी। उन दिनों यूरोप के यही दोनों देश सर्वोपरि थे। पुर्तगाल ने पूर्व की ओर रुख किया था और स्पेन ने पश्चिम की तरफ। पुर्तगाल अफ्रीका के इर्द-गिर्द चक्कर काटकर हिन्दुस्तान आ पहुंचा था और स्पेन भारत के भुलावे में अमेरिका जा पहुंचा था। बाद में वह दक्षिण अमेरिका का चक्कर लगाकर मलक्का जा पहुंचा था। मलक्का द्वीप मसालों के लिए जगत्‌विख्यात था। मसाले उन्हीं प्रदेशों में पैदा होते हैं जो भूमध्यरेखा के निकट हैं। यूरोप में मसाले बिलकुल नहीं होते थे। दक्षिण भारत और लंका में भी मसाले होते हैं, पर मलक्का ही मसालों का देश था। इसीसे वह मसाले का टापू के नाम से विख्यात था। बहुत प्राचीन-काल से इन मसालों की यूरोप में बहुत खपत थी। वे यूरोप में बहुत मंहगे भी बिकते थे। रोमन लोगों के ज़माने में काली मिर्च सोने के भाव बिकती थी। बहुत दिन तक यह व्यापार भारतीयों के हाथ में रहा, फिर अरबों के हाथ में आया। अब जब से स्पेनबासियों और पोर्चुगीज़ों ने समुद्र में डाके डालने शुरू किए तो अरबों का यह व्यापार मटियामेट हो गया। ये समुद्री डाकू मसालों से भरे अरबों के जहाज़ लूट लेते थे, जिसकी कहीं दाद-फरियाद न थी। अन्त में ये दोनों जातियां दुनिया का चक्कर लगाकर

मसालों के देश में आ मिलीं।

जिस समय अलबुकर्क ने भारत में कदम रखा था, तब मलक्का में नए साम्राज्य की स्थापना हुई थी। पोर्चुगीजों ने वहां संघर्ष किया और अलबुकर्क ने मलक्का पर हमला करके मलक्का पर कब्जा कर लिया। साथ ही अरबों के व्यापार का भी खात्मा हो गया और यूरोप का व्यापार पोर्चुगीज़ों के हाथ में आ गया, जिससे देखते ही देखते उनकी राजधानी लिस्बन यूरोप-भर में मसालों और दूसरे पूर्वी मालों की मण्डी बन गई।

पोर्चुगीज बड़े निर्दयी और कट्टर धर्मान्ध थे। उन दिनों यूरोप में धर्मान्धता का साम्राज्य था ही। पुर्तगाल भी स्पेन की भांति रोमन कैथोलिक था और उनके अपने देश में भी बीभत्स व नंगे अत्याचार चर्च के नाम पर किए जाते तथा लोग जबर्दस्ती ईसाई बनाए जाते थे। उन्होंने गोआ में इन्क्विज़ीशन की अदालत कायम की थी, जिसमें गैर-ईसाई प्रजा को लामज़हब करके ज़िन्दा जला दिया जाता था। उन्होंने मलक्का और भारत में भी ज़ुल्मों की हद कर दी। अलबुकर्क ने अरबों पर बड़े ज़ुल्म ढाए। साठ वर्ष तक यूरोप में मसालों के व्यापार में उनका कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं रहा। इसके बाद जब सन् १५६५ में स्पेन ने फिलिपाइन द्वीपों पर कब्ज़ा किया तब पूर्वी समुद्र में दूसरी यूरोपियन ताकत का उदय हुआ। परन्तु स्पेन पूर्व में व्यापार ही नहीं करता था, वहां के लोगों को ईसाई भी बनाता था। मसाले के व्यापार पर उसका एक छत्र अधिकार था। यहां तक कि मिस्र और ईरान को भी मसाले उसीसे मिलते थे। इस व्यापार से पुर्तगाल बेहद माला-माल हो गया था और इसीसे उसने उपनिवेश स्थापित नहीं किए। वह एक छोटा-सा अल्पसंख्यक देश था फिर भी उसने पूरे सौ वर्षों तक, पूरी सोलहवीं शताब्दी-भर पूर्वी समुद्र को अपने ताबे रखा। स्पेन इस समय मेक्सिको और पेरू का स्वर्ण-भंडार खींचने में लगा रहा।

स्पेन और पुर्तगाल की इस समृद्धि को देखकर यूरोप की दूसरी जातियां जल-भुनकर खाक हो रही थीं। स्पेन का यूरोप पर बोल-बाला था। अंग्रेज़ी शक्ति नगण्य थी। इस समय अंग्रेज़ी जल-सैनिक खुले समुद्र में डाकाज़नी किया करते थे, और स्पेन के उन जहाज़ों को लूट लेने की ताक में रहते थे जो अमेरिका से सोना या भारत से

मसाले लेकर लौट रहे होते थे। इन डाकुओं का नेता सर फ्रांसिस ड्रेक था, और उसका नाम 'समुद्री कुत्ता' सारे यूरोप में प्रसिद्ध हो गया था। लूट-खसोट से तंग आकर स्पेन ने अजेय आर्मेडा लेकर इंगलैंड पर चढ़ाई की थी, परन्तु उसपर इंगलैंड ही को पूरी विजय मिली थी। इस विजय ने यूरोप को हैरान कर दिया था। उन दिनों स्पेन और पुर्तगाल पर एक ही राजा राज्य करता था। पोर्चुगीज़ों को इस पराजय से भारी धक्का लगा, क्योंकि उनका पूर्वी साम्राज्य इस समय छः हज़ार मील तक, लाल समुद्र से मलक्का तक, फैला हुआ था।

अब साहस पाकर ड्रेक अपने समुद्री डाकुओं के साथ खुले समुद्र में निर्भय चक्कर काटने लगा। उसे भारत की लगन थी, परन्तु उस समय तक भी भूमण्डल का बड़ा भाग पानी की ओट में छिपा हुआ था। ड्रेक और दूसरे कप्तान बहुत यत्न करके भी भारत तक नहीं पहुंच पाए थे।

सर ड्रेक अपने चार शीघ्रगामी पोतों को लेकर, जिनपर हल्की तोपें चढ़ी हुई थीं, समुद्र में अपने शिकार की ताक में घूम रहे थे। इतने ही में उन्हें एक बेड़ा धीरे-धीरे आगे आता दीख पड़ा। ड्रेक ने तुरन्त हमला बोल दिया। थोड़े ही प्रयास से बेड़ा उनके काबू में आ गया। बेड़ा स्पेन का नहीं, पोर्चुगीज़ों का था और उन जहाज़ों में मसाला भरा था। ड्रेक प्रसन्न हो गया। परन्तु उस समय वे और उसके साथी प्रसन्नता से नाच उठे, जब उनके हाथ भारत के मार्ग का एक मानचित्र लग गया। यह पूर्व की चाभी थी, जिसने अंग्रेज़ों के लिए भारत का द्वार खोल दिया।

११

सर ड्रेक का इंगलैंड में खूब धूमधाम से स्वागत हुआ। उस समय इंगलैंड में दो जमातें थीं—एक शरीफों की जमात, जिन्हें जैंटिलमैन कहते थे। ये पोतड़ों के रईस खाना, पीना और मौज करना या द्वन्द्व-युद्ध करना ही जानते थे। इन्हें पेट की चिंता न थी। राजा से इन्हें बड़ी-बड़ी पुश्तैनी जागीरें मिली होती थीं। बस राजभक्ति करना और राजाओं के धर्म को मानना ही उनका काम था।

दूसरी जमात लुच्चों की थी। उन्हें साहसिक या एडवैंचरर कहा जाता था। इन लोगों का धर्म-ईमान केवल पैसा था। ये लोग डकैती करते और भांति-भांति के क्रूरकर्म करते थे। समुद्र पर इनका आतंक था। ज्योंही इन साहसिक जनों को यह पता लगा कि पूर्व की चाभी उन्हें मिल गई है, वे भारत में आने और यूरोप के दूसरे देशों के आदमियों की भांति मालामाल होने के लिए उतावले हो उठे। उन्होंने भारत में व्यापार करके धन कमाने के लिए एक कम्पनी का संगठन किया। उसका नाम रखा, 'दि गवर्नर एण्ड कम्पनी आव मर्चेण्ट्स आव लण्डन ट्रेडिंग इनटू दि ईस्ट इण्डीज़'। आगे चलकर यही कम्पनी ईस्ट इंडिया कम्पनी के नाम से प्रसिद्ध हुई।

सर ड्रेक और उनके कुछ साथी, जिन्होंने यह कम्पनी संगठित की थी, रानी से मिले। सर ड्रेक ने रानी के सामने घुटने टेककर कहा, 'महारानी, हम आपकी राजभक्त प्रजा आपकी सेवा में यह विनम्र निवेदन करने आए हैं कि हमें सौभाग्य से जो पूर्व की चाभी मिल गई है, उससे अब इंगलैंड को लाभ उठाना चाहिए। आप अब पूर्व का द्वार इंगलैंड के लिए खोल दीजिए और भारतवर्ष पर दृष्टि डालिए, जो गत सौ वर्षों से हमारे शत्रुओं के लाभ का माध्यम हो रहा है, जिन्हें हम ज़ेर कर चुके हैं। स्पेन और पुर्तगाल पूर्व में हमारे प्रतिद्वन्द्वी हैं और महारानी को ज्ञात हो कि केवल ये ही दो क्षुद्र देश केवल भारतवर्ष से सम्बन्ध रखकर मालामाल हो गए हैं।'

'तो तुम हमारी सरकार से क्या चाहते हो?'

'केवल एक अधिकारपत्र, जिससे हमें भारत व चीन में व्यापार करने का इजारा मिल जाए।'

'लेकिन यह अधिकारपत्र शरीफों को नहीं दिया जा सकता, इससे हमारे दरबार का मान भंग होगा।'

'हम एक भी शरीफ आदमी अपनी जमात में न लेंगे। न किसी शरीफ आदमी को भारत या चीन में भेजेंगे। हमारी जमात तो केवल साहसिकजनों ही की है।'

'क्या तुम इस बात की जिम्मेदारी लोगे कि कोई शरीफ आदमी तुम्हारी इस जमात में सम्मिलित नहीं होगा?'

'हमने तो प्रथम ही इस बात की घोषणा की हुई है और हम आपके

समक्ष वचनबद्ध भी होते हैं।'

'क्या तुम्हारे प्रस्ताव को पार्लियामेंट का समर्थन प्राप्त है ?'

'निस्सन्देह। हाउस ग्राफ लार्ड्स ग्रौर हाउस ग्राफ कामन्स में जो साहसिकजन हैं, हमें उनका समर्थन प्राप्त है।'

'क्या तुम समझते हो कि यह समर्थन पार्लियामेंट के बहुमत से है ?'

'निश्चय ही, श्रीमती महारानी महोदया, फिर यह केवल कुछ लोगों का व्यक्तिगत स्वार्थ ही नहीं है, यह तो इंगलैंड के उत्थान का प्रश्न है।'

'कैसे तुम इसे इंगलैंड के उत्थान का प्रश्न कहते हो ?'

'श्रीमती, हमें यह कहने कि ग्रनुमति दीजिए कि आज यूरोप में खलबली मची हुई है, बल्कि यह कहना होगा कि यूरोप का नया जन्म हो रहा है। यह एक सर्वथा ही नई वस्तु है कि चारों ग्रोर से घिरी हुई चीजें एकाएक फूटकर बाहर निकल रही हैं। ग्रब तक जो सैंकड़ों वर्षों से सामन्ती प्रथा पर बना हुआ सामाजिक ग्रौर ग्रार्थिक ढांचा था, वह टूटने लगा है। कोलम्बस, वास्कोडिगामा और समुद्री रास्तों का पता चलानेवाले दूसरे लोगों ने इस बन्धन को तोड़ा है। आपका यह दास भी एक बार सारी पृथ्वी की परिक्रमा कर ग्राया है, ग्रौर उसीके ग्रधार पर यह निवेदन करने का साहस कर रहा है। अमेरिका और पूर्व के देशों से ग्राई हुई स्पेन और पुर्तगाल की बेशुमार दौलत से यूरोप की आंखें चौंधिया रही हैं। ग्रब यूरोप ग्रपने ही विषय में नहीं, दुनिया के विषय में विचार करने लगा है।'

रानी की ग्रांखें चमकने लगीं। उसने हाथ के इशारे से सर ड्रेक को रोककर कहा, 'किन्तु क्या तुम समझते हो कि संसारव्यापी हुकूमत ग्रौर व्यापार की सम्भावनाएं हो गई हैं ?'

'मैं यही निवेदन कर रहा हूं महारानी, यूरोप में मध्यमवर्ग पनप रहा है और सामन्त-प्रथा दम तोड़ रही है।'

'लेकिन यह तो भयानक बात है।'

'बिलकुल नहीं महारानी, यह काम तो हमसे पूर्व ही हेनरी अष्टम के काल में ग्रारम्भ हो चुका था, जिसने बैरनों की राजा से प्रतिस्पर्धा की सारी शक्ति तोपों पर कंट्रोल ग्रौर भूमियों पर ग्रधिकार करके खत्म कर दी थी। अब तो नये साहित्य ने हमें ग्रागे बढ़ाया है। ग्रजेय

आर्मेडा को दलित कर समुद्र की लहरों पर आपका प्रभुत्व स्थापित हो चुका है। आप ही के किंकर सर रैले ने अमेरिका में वर्जीनिया की बस्ती बसाई है, और सर गिलबर्ट ने न्यूफाउण्डलैंड को आपके चरणों में समर्पित किया है। फिर धर्म के मामले में भी हम सबसे आगे हैं। इंगलैंड ही को उदार होने का सम्मान प्राप्त है।'

'लेकिन क्या तुम समझते हो कि इससे इंगलैंड को कुछ लाभ होगा ?'

'निस्सन्देह। यूरोप में आज तीन तत्त्व काम कर रहे हैं। एक पुनर्जागरण, दूसरा सुधार और तीसरा क्रान्ति।'

'क्या क्रान्ति भी ? यह तो बहुत भयानक है।'

'परन्तु पुनर्जागरण तो अत्यावश्यक है। सुधार का क्रान्ति ही अन्तिम रूप है। पुनर्जागरण तो कला, साहित्य और विज्ञान के विकास से हो रहा है जिससे यूरोप की भाषाएं सुधर रही हैं। कागज़ और छपाई ने जनता के शिक्षित होने का सूत्रपात किया है। सुधार ने रोमन चर्च के विरुद्ध बगावत की है, अब क्रान्ति राजा की स्वेच्छाचारिता पर अंकुश है और मुझे आज्ञा दी जाए कि मैं कहूं कि इंगलैंड ही इस समय इस नवोत्थान में यूरोप-भर में अग्रगण्य है। इसीसे अब हमें साहस करके पूर्व का द्वार खोल देना चाहिए, जिसकी चाभी सौभाग्य ने हमें दी है।'

'सर ड्रेक, क्या तुम यह सही अंदाज़ा लगा सकते हो कि यदि हम तुम्हारी इस साहसिक मण्डली की प्रार्थना मंजूर कर लें तो हमारी सरकार पर कितना आर्थिक और राजनीतिक दबाव पड़ेगा ?'

'एक रत्ती-भर भी नहीं महारानी। सारा बोझा और दायित्व हमारे ही ऊपर है। इंगलैंड की सरकार केवल एक संरक्षक के रूप में ही रहेगी।'

'और यदि कोई राजनीतिक विपत्ति इंगलैंड पर आई ?'

'तो हम सब साहसिक कट मरेंगे। अपनी पूंजी को खत्म कर देंगे, पर इंगलैंड पर ज़रा भी बोझ न पड़ने देंगे।'

'इसीलिए मैंने यह शर्त लगाई थी कि कोई शरीफ आदमी तुम्हारी इस जमात में शरीक न होने पाएगा। इससे इंगलैंड पर खतरा आ सकता है। अब यदि पार्लियामेंट तुम्हें आज्ञापत्र प्रदान करने के पक्ष

में है तो मैं सहमत हूं। हां, तुम क्या कहते हो सर हाकिन्स ?'

'महारानी प्रसन्न हों।' सर हाकिन्स ने घुटने टेककर कहा, 'कोलम्बस ने किस प्रकार स्पेन के राजा की सहायता से अमेरिका के विशाल महाद्वीप का पता लगाया, यह आप जानती हैं। यह महाद्वीप धन-धान्य से परिपूर्ण है। उसमें अनेक जातियों और सभ्यताओं का विकास हो चुका है। मैक्सिको और पेरू के निवासियों के पास जो सम्पत्ति थी, उसे स्पेन के लोग लूटकर अपने देश में ले गए। वहां के निवासियों का उन्होंने बुरी तरह संहार किया। परन्तु अब स्पेनवाले वहां बस्तियां बसा रहे हैं और बड़े पैमाने पर खेती कर रहे हैं। मैं जानता हूं कि वहां बहुमूल्य धातुओं की खानें भी हैं। उनसे बेशुमार सोना, चांदी निकाला जा सकता है। परन्तु इन सब कामों के लिए मेहनती मज़दूरों की आवश्यकता है। स्पेनिश लोगों ने वहां के आदिवासी रेड इंडियनों को पकड़कर काम लेना चाहा था, पर वे वीर और स्वतन्त्रताप्रिय हैं। भयंकर अत्याचार सहकर भी वे गुलाम न बन सके। इसपर आपके अनुगत दास मेरा यह विचार हुआ कि यदि अफ्रीका के हब्शियों को पकड़कर और उन्हें गुलाम बनाकर अमेरिका में बेचा जाए तो यह एक बड़ा लाभदायक व्यापार होगा। मैं जानता था कि ये हब्शी, जिनमें न बुद्धि है न साहस, परन्तु शारीरिक बल खूब है, आसानी से गुलाम बनाए जा सकते हैं। आपने हमें अब तक सहयोग दिया परन्तु अब अन्य लोग हमारी प्रतिस्पर्धा करने लगे हैं। इसलिए आपकी सरकार से हम कुछ साहसिकजन इस लाभदायक व्यापार के लिए एकाधिकार चाहते हैं। अमेरिका में बसे हुए स्पेनिश लोगों के पास धन की कमी नहीं है और उन्हें अपने विशाल खेतों और समृद्ध खानों में काम करने के लिए गुलामों की अजहद जरूरत है और इससे इंगलैंड को बहुत लाभ हो सकता है।'

'क्या ये हब्शी ईसाई नहीं हैं ?'

'नहीं महारानी उनका शरीर ही किसी तरह मनुष्य का है। वे तो कोरे बैल हैं बैल।'

'क्या उन हब्शियों में कोई जातीयता या पारिवारिक व्यवस्था भी है ?'

'नहीं महारानी, वे पशु की भांति ही रहते हैं।'

'क्या पार्लियामेंट के माननीय सदस्य तुम्हारा समर्थन करेंगे ?'

'निस्सन्देह महारानी। हम लोग पार्लियामेंट के माननीय सदस्यों के ही प्रतिनिधि हैं।

'अमेरिका में स्पेन के उपनिवेश कितने हैं ?'

'बहुत। वैस्ट इंडीज़, ब्राज़ील, मैक्सिको, पेरू आदि विविध अमेरिकन राज्य स्पेन ही के उपनिवेश हैं।'

'क्या हम उस द्वीप में अपने उपनिवेश नहीं बसा सकते ?'

'नहीं महारानी। पवित्र पोप ने सन् १४९४ में ही यह घोषणा कर दी थी कि यदि केप वर्द द्वीपसमूह के ३७० लीग पश्चिम में एक रेखा उत्तर से दक्षिण की तरफ खींच दी जाए, तो उस रेखा के पश्चिम के सब प्रदेशों पर स्पेन का अधिकार रहेगा, और उस रेखा के पूर्व में पोर्चुगीज़ों का।'

रानी एकदम उत्तेजित हो गई। उसने कहा, 'क्या यूरोप में ये ही दो राज्य हैं ?'

'इसका जवाब तो महारानी स्पेन की दाढ़ी में आग लगाकर दे चुकी हैं।'

'तो अभी तक पोप की यह आन अमेरिका में कायम है ?'

'महारानी, आपकी कृपा से सर वाल्टर रैले ने उसी प्रदेश में आपकी पवित्र स्मृति में वर्जीनिया की बस्ती बसाई है और अब उसे समृद्ध करने के लिए गुलामों की हमें भी आवश्यकता है।'

'हम चाहती हैं कि पोप के इस प्रभुत्व और एकाधिकार का यह राजनीतिक स्वरूप इंगलैंड बर्दाश्त न करे। क्या अमेरिका में ऐसे भूखण्ड भी हैं जो अभी तक खाली पड़े हैं ?'

'जी हां महारानी। स्पेन की बस्तियां तो मध्य और दक्षिणी अमेरिका में बसी हैं। कुछ प्रदेश खाली हैं, जहां वहां की प्राचीन असभ्य जातियां रह रही हैं।'

'तो हम चाहती हैं कि उनपर ब्रिटेन की सत्ता स्थापित कर ली जाए और हम चेष्टा करेंगी कि पार्लियामेंट एक बिल गुलामों के व्यापार के सम्बन्ध में पास कर दे और इस काम में सभी सम्भव सुविधाएं तथा एकाधिकार आपकी मण्डली को दिए जाएं।'

रानी को अभिवादन कर और सब भांति कृतकृत्य हो साहसिक-

जनों का यह प्रतिनिधिमण्डल गर्व से छाती ताने हुए राजप्रासाद से बाहर निकला।

१२

अर्ल ग्राफ एसेक्स एक तेजवान तरुण था। उसमें हौसला था, उच्चाभिलाषा थी। रानी के अनुग्रह ने उसे धृष्ट बना दिया था, रानी की अपेक्षा वह आयु में कम था। यदि वह प्रौढ़ पुरुष होता और ज़रा गम्भीरता का आसरा लेता तो कदाचित् उसे उस दुर्भाग्य का सामना न करना पड़ता, जिससे उसे टकराना पड़ा।

रानी की भीषण प्रतिहिंसा को वह जान गया था। उसे भारी दंड दिया गया था। पर उस प्रतिहिंसा और क्रोध में रानी का उसके प्रति जो उत्कट प्रेम था, वह भी उसके तरुण हृदय से छिपा नहीं था। निश्चय ही उससे अपराध बन पड़ा था। उसने रानी के दुर्लभ प्यार का अपमान किया था, रानी के प्यार को एक ओर धकेलकर दासी पर दृष्टि डाली थी। पर यह उसका दोष न था, तारुण्य का दोष था। कुमारी एलिनर को बिना देखे, बिना प्यार किए रहा नहीं जा सकता था, खासकर जब वह भी उसे प्यार करती थी। परन्तु रानी इसे सहन न कर सकेगी, यह वे दोनों ही जानते थे। इसीसे वे अपने प्रेमाकर्षण को यत्न से गुप्त रखते चले आ रहे थे। परन्तु प्रेम की आंख प्रेमी से छिप नहीं सकती। फिर रानी तो असाधारण बुद्धिमती थी। अब अर्ल आफ एसेक्स के लिए रानी को प्रसन्न करने का एक ही उपाय था कि वह जैसे बने आयरलैंड के विद्रोही अर्ल आफ ओनील को विजय करे, उसे बांधकर रानी के चरणों में डाल दे। इससे उसे दुहरा लाभ हो सकता था। रानी उसपर प्रसन्न होकर उसकी प्रेमिका को उसकी गोद में डाल सकती थी। दूसरे आर्मेडा के संग्राम में ड्रेक, सर जान हाकिन्स आदि उमरावों ने जो प्रतिष्ठा और वीरता की नेकनामी हासिल की थी, वह उसे भी हासिल होती। इंगलैंड के लोग उसके भी गुणगान करते। इसलिए वह सब ओर से ध्यान हटाकर केवल अपने अभियान को सफल बनाने में जुट गया।

उसने भीषण वेग से शत्रु पर भीषण आक्रमण किया। सर ओनील भी एक दबदबे का सरदार था। वह इस छोकरे को तुच्छ नज़र से देखता था। यद्यपि वह जानता था कि वह इंगलैंड की रानी का प्रेमी है, परन्तु वह तो इस बात का भी मज़ाक उड़ाता था। पर उसने दो-तीन बार की मुठभेड़ में समझ लिया कि यह छोकरा लार्ड नर्म निवाला नहीं है। सर ओनील को उसने बारंबार करारी हार दी थी और उसे घेर लिया था। अब सर ओनील के सामने इसके अतिरिक्त कोई चारा न था कि वह इस तरुण अंग्रेज़ लार्ड के सामने हथियार रख दे। उसने सर एसेक्स के सम्मुख आत्मसमर्पण का प्रस्ताव भेज दिया। एसेक्स प्रसन्नता से फूल उठा। वह सोच रहा था कि उसने बाज़ी जीत ली है और अब इंगलैंड में उसीके नाम का डंका बजेगा और वह अपनी प्रेमिका पत्नी का आलिंगन प्राप्त कर लेगा। साथ ही रानी की कृपादृष्टि भी।

परन्तु रानी अधीर हो रही थी। उसका मन चंचल और क्षुब्ध था। वह सोच रही थी कि इतना विलम्ब हो रहा है। क्यों नहीं अब तक विद्रोही सरदार विजित हुआ। इस प्रेमी तरुण लार्ड के प्रति जो प्रतिहिंसा की आग रानी के मन में अभी तक जल रही थी, उसने उसके विवेक पर भी काबू पा लिया था। फिर दरबार में एसेक्स के शत्रु भी थे। वे भी इस अवसर को चूकना नहीं चाहते थे। अर्ल के विरुद्ध रानी को भड़का रहे थे। वास्तव में वे नहीं चाहते थे कि इस विद्रोह के दमन का सेहरा एसेक्स के सिर बंधे। अंत में रानी ने एसेक्स के विरोधी लार्ड मौण्टजाय को आयरलैंड भेजा और एसेक्स को हुकम दिया कि वह अविलम्ब वापस लौट आए।

परन्तु जिस समय अर्ल आफ एसेक्स के पास यह सूचना पहुंची, उस समय ओनील उसे आत्मसमर्पण कर रहा था। रानी की यह आज्ञा सुनकर वह क्रोध से लाल हो गया। उसने समझा कि रानी जान-बूझकर उसका यश उसके प्रतिद्वन्द्वी को देना चाहती है। उसने क्रोधपूर्वक रानी की आज्ञा मानने से इनकार कर दिया और सर ओनील को बंदी बना वह लंदन लौटा। लार्ड मौण्टजाय से उसने बात ही न की।

इंगलैंड में आयरलैंड की इस विजय की खबर उससे पहले ही

जा पहुंची। सारा इंगलैंड खुशी से हर्षोन्मत्त हो उठा। रानी ने आज्ञा दी कि उसका धूमधाम से राजधानी में स्वागत किया जाए और उसने भरे दरबार में उसके स्वागत करने की घोषणा भी कर दी।

१३

दरबार तड़क-भड़क से किया गया। रानी अपने सम्पूर्ण राजकीय वैभव से सिंहासन पर बैठी। सभी अमीर-उमराव, दरबारी लार्ड और लेडी इस विजयी वीर के स्वागत के लिए दरबार में उपस्थित थे। रानी गंभीर थी। वह संगमरमर की प्रतिमा-सी सिंहासन पर बैठी थी। इस समय उसकी शोभा अलौकिक थी। उसने बड़े-बड़े मोतियों का नाभि तक लटकता हार कण्ठ में पहना था। उसके मुकुट के रत्न-मणि जगमग कर रहे थे। उसकी बगल में लेडी एलिनर खड़ी थी। उद्वेग से उसका हृदय धड़क रहा था। उसे आशा न थी कि रानी उसके पति का ऐसा स्वागत करेगी। अब सारे इंगलैंड में जो उसके पति की धूम मची थी, उसने उसे आनन्दविह्वल कर दिया था। वह सोच रही थी कि महारानी ने हम दोनों को न केवल क्षमा ही कर दिया है, हमपर प्रसाद भी किया है। वह मिलन के सुखस्वप्न देख रही थी। अधीर हो रही थी।

तरुण लार्ड को भी ऐसे स्वागत की आशा न थी। उसने रानी के प्रेम का तिरस्कार तो किया ही था, राजाज्ञा का भी उल्लंघन किया था। परन्तु बहुत बार रानी अप्रसन्न हो चुकी थी, अप्रसन्न होकर बहुत बार रानी ने ही उसे मनाया था, दूना दुलार किया था। रानी के इस प्यार को वह जानता था। रानी को अब भी वह प्यार करता था। उसे रानी के प्यार का भरोसा था। उसी भरोसे के कारण उसने रानी की आज्ञा का उल्लंघन किया था और अब वह रानी के प्रति अपनी उत्सुकता, प्रेम-भक्ति प्रकट करने के विचार से दरबारी अदब-कायदे की तनिक भी परवाह न कर बिना ही दरबारी पोशाक धारण किए, रास्ते के गन्दे वस्त्र पहने अपने कैदी को लेकर दरबार में जा पहुंचा।

दोनों ओर खड़े लार्ड और लेडियों के जयजयकार और हर्ष-ध्वनि

के बीच आगे बढ़ता हुआ वह सीधा रानी के सिंहासन के सम्मुख जा घुटनों के बल बैठ गया। उसके वस्त्र धूल से भरे थे, चेहरे और बालों में भी धूल भरी थी, जूते गंदे थे; परन्तु रानी ने अपना हाथ उसकी ओर बढ़ा दिया, जिसे उसने सम्मानसहित चूम लिया। इसके बाद रानी ने उसका अभिनन्दन किया। उसे खिताब और जागीर दी। एलिनर आनन्द से विभोर हो गई। एसेक्स ने सिर उठाया तो पत्नी की ओर देखकर मुस्कराया और दो कदम पीछे हटकर अर्ल आफ ओनील का हाथ पकड़ रानी के सम्मुख उपस्थित किया। अर्ल आफ ओनील ने घुटने ज़मीन में टेककर रानी के चरणों में सिर झुकाया।

'हम प्रसन्न हैं सर ओनील, और तुम्हें क्षमा करती हैं और हमारा विश्वास है कि अब तुम तख्त के वफ़ादार रहोगे। तुम्हारी स्टेट हम तुम्हें लौटा रहे हैं।'

'योर मैजेस्टी, यह सेवक आपके अनुग्रह को जीवन-भर नहीं भूलेगा और अपने अपराध के लिए उस समय तक पश्चात्ताप करेगा जब तक कि वह राजभक्ति का कोई सक्रिय प्रमाण न दे दे।'

'उसका तुम्हें अवसर दिया जाएगा, सर ओनील।'

ओनील ने सिर झुकाया और दो कदम पीछे हट गया। क्षण-भर सन्नाटा रहा। रानी ने एकाएक अर्ल आफ एसेक्स की ओर देखकर स्थिर स्वर में कहा, 'अर्ल आफ एसेक्स, सीधे खड़े हो जाओ।' दरबार के सभी सामन्त रानी की आज्ञा से चौंक पड़े। अब क्या होने-वाला है? अर्ल आफ एसेक्स सीधा खड़ा हो गया। उसने अपनी जिज्ञासापूर्ण आंखें रानी की आंखों में डाल दीं।

परन्तु रानी ने उधर से आंखें हटा लीं। ओनील की ओर घूमकर उंगली से एसेक्स की ओर संकेत करके कहा, 'सर ओनील, आगे बढ़ो और इस आदमी की तलवार ले लो।'

दरबार में सन्नाटा छा गया। सबकी आंखें एसेक्स पर आ लगीं। एसेक्स का मुंह लाल हो गया।

रानी ने कहा, 'अर्ल आफ एसेक्स, तुमने वीरतापूर्वक शत्रु को पराजित किया, इंगलैंड की सेवा की। हमने तुम्हें इसके लिए सत्कृत किया, तुम्हारा सम्मान किया। परन्तु तुमने राजाज्ञा का उल्लंघन किया और तुम दरबारी अदब के खिलाफ हमारे रूबरू हाज़िर आए हो, उसकी

यही सज़ा है कि तुम्हारी तलवार छीन ली जाए।'

अर्ल ओनील आगे बढ़ा। अभी दो दिन पूर्व उसे अपनी तलवार अर्ल आफ एसेक्स के सुपुर्द करनी पड़ी थी और आज वही पराजित शत्रु उसकी तलवार छीन रहा है। एसेक्स सिंह की दहाड़ मारकर चिल्लाया, 'खबरदार, कदम आगे बढ़ाने का साहस न करना, वरना सिर भुट्टे-सा उड़ा दूंगा।' फिर वह दो कदम बढ़ाकर रानी के सामने आया। उसने तलवार निकाली और घुटनों पर रख उसके दो टुकड़े कर रानी के सामने फेंक दी।

रानी क्रोध से सफेद हो गई। क्षण-भर वह चुप, निश्चल बैठी रही। उसके होंठ चिपक गए। फिर उसने अकम्पित वाणी से हुकम दिया, 'इस विद्रोही को गिरफ्तार कर लिया जाए और कल सूर्योदय के साथ ही इसका सिर काट लिया जाए।' और वह उठकर चल दी।

दरबार में सिरहन फैल गई। लार्ड सेल्सबरी और लार्ड मौण्टज़ाय ने आगे बढ़कर एसेक्स के कंधे पर हाथ रखा और सिपाहियों ने उसे गिरफ्तार कर लिया। एलिनर की आंखों में अंधेरा छा गया।

१४

रानी सीधी अपने शयनकक्ष में आई। प्रत्येक दास-दासी को उसने अपने निकट न आने के आदेश दिए। रत्नजटित मुकुट, जिसका लोहा आज सम्पूर्ण यूरोप मान चुका था, उसने सिर से उतारकर दूर फेंक दिया। बहुमूल्य रत्नजटित पोशाक चीर-चीर कर डाली। रत्नहार तोड़कर उसके मोती फर्श पर बिखेर दिए। अपने यत्न से संवारे सुनहरी बालों को उसने नोच डाला। वह जगह-जगह अपने नाखूनों से अपने अंगों को क्षत-विक्षत करने लगी। उसकी दशा उस हथिनी के समान थी जिसकी छाती पर गोली लगी हो। वह रोना चाहती थी, पर रोना भूल गई। चीखना चाहती थी, पर मुंह के शब्द खो गए। वह कक्ष में इस प्रकार उन्मादिनी की भांति चक्कर लगा रही थी, जैसे तप्ते तवे पर चल रही हो, जैसे उसके तलुओं में छाले पड़ गए हों। उसे ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे सारा विश्व सूना हो गया है। दुनिया के

सब प्राणी मर-खप गए हैं और वह अकेली एकाकी सूने संसार में भटक रही है। निबिड़ अंधकार में। जैसे सूरज की ज्योति बुझ चुकी है, जीवन समाप्त हो गया है। केवल वह सांस ले रही है और जैसे अंधकार उसे समूचा निगलने आ रहा है। भय से उसकी आंखें फट गईं। उसने एक आर्तनाद किया, जैसे गर्दन पर छुरा फेरते हुए बकरा मिमियाता है।

वह बेहोश नहीं थी। परन्तु वह विनाश और यन्त्रणा की मूर्तियां देख रही थी, जो उसे चारों ओर से घेर रही थीं। रानी घबराकर खिड़की के पास आ खड़ी हुई। उसने खिड़की खोल दी। बड़ी डरावनी अंधेरी रात थी, आंधी बड़े ज़ोर से चल रही थी। ठंडी तेज़ हवा के झोंकों ने उसे झकझोर डाला। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि जैसे मौत के शीतल हाथों ने उसे छू लिया। एक बार उसने फिर चिल्लाने की चेष्टा की, पर उसके मुंह से आवाज़ न निकली। हलक उसका सूख गया था और जीभ तालू से सट गई थी। उसने बड़े यत्न से जीभ अपने सूखे होंठों पर फेरी।

उसने फिर आंखें फाड़कर नीचे महल के प्रांगण में देखा। वहां मृत्यु-मंच तैयार किया जा रहा था। वह थर-थर कांपने लगी जैसे उसीके गले में फांसी का फन्दा पड़ गया हो। वह जैसे हज़ारों मनष्यों को मृत्यु की वेदना से छटपटाते देख रही थी। उनके मृत्युकाल के आर्तनाद सुन रही थी। उसका कलेजा दहल गया। उसने चाहा कि महल से कूद पड़े। उसने झांककर देखा और भय से आंखें बन्द कर लीं।

इस समय इंगलैंड की अधीश्वरी उस महामहिम महारानी से अधिक भाग्यहीन और दुखी मनुष्य संसार में कौन था! सूर्योदय के साथ ही उसके प्यारे का सिर काट लिया जाएगा। उसीकी आज्ञा से। वह अकेली रह जाएगी। सर्वथा अकेली। उसने इस तरुण रईस को कितनी बार दुलार किया था। कितनी बार वह उसकी गोद में आंख बन्द किए पड़ी सुख-सागर में मग्न रही थी। कितनी बार मान-मनौवल, विग्रह और मेल हुआ था। एक ओर इंगलैंड का महामहिम तख्त था और दूसरी ओर वह तरुण प्रियतम। कितनी बार उसने उसके कण्ठ में भुज-मृणाल डालकर कहा था—कितनी आंखें हमें ईर्ष्या से देखती हैं। कितने हृदय हमें देखकर जलते हैं। हमारा यह राज-

पाट, यह तख्त, इंगलैंड का यह रत्नमुकुट ही हमारे प्रेम की बाधा है। इसीके कारण प्रियतम, मैं तुमसे ब्याह नहीं कर सकती। धर्म और कानून से तुम्हारी, केवल तुम्हारी नहीं हो सकती। और, यह तख्त ही इस समय हमारे-तुम्हारे बीच की सबसे बड़ी बाधा है। आओ प्यारे, चलो भाग चलें, दुनिया के उस छोर पर, जहां केवल हम-तुम हों, और कोई न हो। परन्तु अब ? अब तो वह अकेला ही जा रहा है। और मैं यहां इतनी बड़ी दुनिया में अकेली रह रही हूं। उसे जाना पड़ेगा, और मुझे रहना होगा। रहना होगा। अभी जिन हाथों से उसका दुलार किया था, उन्हींसे मैंने उसके मृत्युदण्ड पर हस्ताक्षर किए। जिस जिह्वा से मैंने हज़ार बार उसे प्यार के आश्वासन दिए थे, उसीसे मैंने उसका सिर काट लेने की आज्ञा दी। मेरे हाथ कटकर गिर क्यों नहीं गए ? मेरी जीभ गल क्यों नहीं गई ?

किन्तु मैंने ही तो उसे प्राणदण्ड दिया है। अभी तो वह जीता-जागता है। मैं उसे क्षमा भी तो कर सकती हूं। मैं इंगलैण्ड की अधीश्वरी हूं, कौन मेरी इच्छा में बाधक हो सकता है। परन्तु हाय, हाय, यही तो मेरा परम दुर्भाग्य है। उसने इंगलैण्ड की राजराजेश्वरी की आज्ञा का उल्लंघन किया है। उसने दरबार की मर्यादा भंग की है, उससे विद्रोह किया है। इसकी सज़ा कम से कम मौत है। यह सज़ा इंगलैंड की अधिश्वरी महारानी एलिज़ाबेथ ने दी है। कौन अब उससे दया की प्रार्थना करेगा। मैं अभागिन स्त्री महामहिम महारानी से कैसे अपनी व्यथा कहूं। कैसे अपने प्राणप्यारे के प्राणों की उससे भीख मांगूं। वह तेजस्विनी महारानी मुझ दीन, हीन अभागिनी औरत को देखेगी या महामहिम इंगलैंड के सिंहासन की मर्यादा का खयाल करेगी। आखिर इंगलैंड की महारानी कोई साधारण स्त्री नहीं है। भावी इतिहास के पृष्ठ मुख खोले उसकी क्षण-क्षण की गतिविधि को निगल जाने को उद्यत हैं। मैं अपना एक तुच्छ स्त्री का सुख-दुःख देखूं या इंगलैंड के ताज की मर्यादा की आन रखूं। मैं एलिज़ाबेथ हूं, इंगलैंड की महारानी। यूरोप आज जिसके नाम से थर्राता है, जिसके सामन्तों ने स्पेन के राजा की दाढ़ी में आग लगाई थी, आयरलैंड के विद्रोही सरदारों ने जिसके चरणों को चूमा, समुद्र की लहरें जिसकी आज्ञा के अधीन हैं, जिसने समूची दुनिया को नवजीवन प्रदान किया

है, जिसके जीवन का प्रत्येक क्षण इतिहास के पन्नों पर स्वर्णाक्षरों से लिखा गया है। नहीं, नहीं, मैं भले ही नष्ट हो जाऊं, मेरा हृदय फट जाए, पर इंगलैंड की महामहिम महारानी एलिज़ाबेथ की मर्यादा भंग नहीं होनी चाहिए। उसकी आज्ञा अमिट है, वह पूर्ण होगी, वह पूर्ण होनी ही चाहिए।

किसी दुर्जय, गूढ़ आवेग ने जैसे उसका गला आ दबाया। वह इतनी उत्तेजित हो गई कि उसकी छाती, मुंह और गला लाल हो गया। परन्तु क्षण-भर बाद ही वह मुंह पीला होकर सूख गया। अब वह टेबल पर पैर रखकर इस तरह खड़ी हो गई, मानो वह राज-सिंहासन पर खड़ी है और सारे राजसभासद, राजपुरुष विनीत भाव से घुटने टेककर उसके सम्मुख उपस्थिति हैं। वह जैसे सतेज वाणी से कह रही है—मैं इंगलैंड की महामहिम महारानी हूं और मेरी आज्ञा का तुरन्त पालन होना चाहिए। इस समय उसकी आंखों में अपूर्व ज्योति दीख पड़ रही थी, और वह पूरी ऊंचाई में तनी खड़ी थी। पर क्षण-भर बाद ही उसकी मुखमुद्रा बदल गई। व्याकुल होकर वह अपने चारों ओर देखने लगी। उसके मुंह पर कालिमा छा गई, उसका हृदय अंधकार में डूब गया और वह अचेत होकर वहीं भूमि पर गिर गई।

वह स्वप्न देखने लगी। उसने देखा कि वह एक कब्रिस्तान में घूम रही है। उसके चारों ओर कब्रें ही कब्रें हैं और हज़ारों मुर्दों ने कब्रों से निकलकर उसे घेर रखा है। अनेक अस्थि-कंकाल अपनी-अपनी कब्रों पर बैठे उसीकी ओर देख रहे हैं। फिर उसने देखा कि वे सब अपने कंकाल के लम्बे-लम्बे हाथ उठाकर एक ओर को संकेत कर रहे हैं। रानी ने उधर नज़र की तो उसने देखा कि उसका प्रियतम एसेक्स है। उसका कटा हुआ सिर उसकी हथेलियों पर रखा हुआ है और उसमें से खून टपक रहा है। वह सिर एकटक रानी की ओर देख रहा है और वह बिना सिर का धड़ उसीकी ओर आ रहा है। सारे अस्थि-कंकाल खड़-खड़ करते हुए उसके पीछे हो लिए और नाचने लगे। वे कह रहे थे—आओ, आओ। यहां हम तुम्हें एक नई कब्र में स्थान देंगे। हमारे साथ मज़े में रहना। यहां कोई रानी एलिज़ाबेथ नहीं है जो तुम्हारा सिर काटने का हुक्म देगी। यहीं हमारा शान्ति का अमर राज्य है। हा, हा, हा, हा! रानी भय से ठण्डी पड़ गई। सोते ही

सोते उसकी चीख निकल गई। वह हरहराकर उठ बैठी। उसका शरीर पीपल के पत्ते की भांति कांप रहा था। कमरे में मोमबत्ती का धीमा प्रकार फैल रहा था। खुली खिड़की से ठण्डी हवा के झोंके और ठक्-ठक् की आवाज़ें आ रही थी। मृत्यु-मंच तैयार हो रहा था। उसने उठकर खिड़की बन्द कर दी और दासी को बुलाने को घण्टी की रस्सी खींची। वह आंख बन्द करके एक कुर्सी पर बैठ गई। दासी के आने पर उसने कहा, 'हम अभी लेडी एलिनर को देखना चाहती हैं।' दासी ने सिर झुकाया और दरवाज़ा आहिस्ता से बन्द करती हुई बाहर चली गई।

१५

एलिनर सहमती हुई आकर रानी के कदमों में लोट गई। बहुत देर तक तो रानी सकते की हालत में गुमसुम बैठी रही, फिर उसने एलिनर को उठाकर छाती से लगा लिया। दोनों नारियां रो रही थीं। दोनों ने प्यार का घाव खाया था। दोनों ही की वेदनाएं असीम थीं।

बहुत देर बाद एलिनर ने सुबकियां लेते हुए कहा, 'महारानी, दया करो, रहम करो। मुझे मरवा डालो। उसे छोड़ दो। ओ महान महारानी, रहम, रहम !'

रानी ने भरे कण्ठ से कहा, 'रहम किसपर मेरी प्यारी एलिनर ?'

'उस भले लार्ड पर महारानी, जिसकी वीरता का ताज़ा उदाहरण आपको मिला है, जिसे अभी आपने गार्टर प्रतिष्ठा बख्शी है।'

'उस औरत पर नहीं, जो इंगलैंड की राजराजेश्वरी है ? अथवा उसपर भी नहीं, जिसे इंगलैंड की रानी सबसे ज्यादा प्यार करती है ?'

'ओह, महारानी, आप बड़ी दयालु हैं। आपके तो एक संकेत से ही वह सुन्दर लार्ड स्वतन्त्र वायु में सांस ले सकता है।'

'किन्तु तुम किससे प्रार्थना कर रही हो, मेरी प्यारी ?'

'आपसे, इंगलैंड की महारानी से, जिसके तेज और प्रताप के आगे यूरोप का सिर झुका हुआ है।'

'ओह, अच्छा होता यह प्रार्थना तुम अपनी ही जैसी किसी दुखिया

औरत से करतीं। उसका हृदय तुम्हारा यह आर्तनाद, यह करुण विषाद सुनकर ज़रूर पिघल जाता। एलिज़ाबेथ यदि एक औरत होती, सिर्फ औरत, तो आज उसे तुम्हारे साथ आंसू न बहाने पड़ते, किन्तु अब तो कुछ भी आशा नहीं है। प्यारी एलिनर, तुम्हें सब्र करना पड़ेगा। और एलिज़ाबेथ को भी, जो तुमसे ज़्यादा दुःखी और असहाय है।'

'हाय महारानी, तो क्या अब कुछ भी आशा नहीं है ?'

'तू क्या एक ऐसी औरत को नहीं देखती जो तुझसे भी हज़ार गुना अभागिन और एकाकी है। तुझे तो इंगलैंड की महारानी का आसरा है, पर उस अभागिनी को तो कहीं भी आसरा नहीं है। उसे तो अकेले ही आंसू पीकर रहना है।'

'तो महारानी, क्या आप मेरे वध की उसके साथ ही आज्ञा नहीं दे सकतीं ?'

'मेरी प्यारी, क्या इंगलैंड की महारानी इतनी मूढ़ है और उसका निर्णय इस कदर घृणित है ?'

'वह तो मैं नहीं कहती, महारानी।'

'तो मेरी प्यारी, सहन कर। एक औरत का किसी मुल्क के तख्त पर बैठना कितना मुश्किल है। मैं इस मुश्किल को पहले ही जानती थी और इसीलिए मैंने विवाह नहीं किया। कुंवारी ही रही। मैं जानती थी कि तख्त पर बैठकर तलवार की धार पर चलना पड़ता है। दिल का सौदा नहीं हो सकता। मगर मेरे भीतर जो एक कमज़ोर औरत बैठी थी, उसने मुझे यह दिन दिखाया।'

'तो क्या महारानी, कुछ भी आशा नहीं है ?'

'नहीं, मेरी प्यारी, बिलकुल नहीं। इंगलैंड की महारानी की आज्ञा पूरी होगी। इंगलैंड के तख्त की शान यदि कहीं गिरी तो आगे इंगलैंड के इतिहास में काले अक्षरों में ये शब्द लिखे जाएंगे कि आखिर तख्त पर एक कमज़ोर औरत ही तो थी।'

'तो मेरी सब प्रार्थना बेकार है ?'

'बिलकुल बेकार। रानी तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार करने योग्य नहीं है, पर मेरी प्यारी, तू रानी की प्रार्थना स्वीकार करके उसपर अहसान कर सकती है।'

'क्या महारानी मुझसे कह रही हैं ?'

'महारानी नहीं प्यारी, एक औरत, महज़ मामूली औरत, जो तुझसे भी ज़्यादा बदनसीब और कमज़ोर है। लेकिन तुझे वह प्राण से ज़्यादा प्यार करती है। उसका नाम है बदनसीब एलिज़ाबेथ, उस प्यार के नाम पर उसकी एक आरज़ू पूरी कर। इस नेक काम का बदला तुझे ईश्वर देगा। एक तड़पती हुई आत्मा तुझे आशीर्वाद देगी।'

'कहिए महारानी।'

'एक बार उसे मरने से पहले मुझसे मिला दो बहन, सिर्फ एक क्षण के लिए।'

'ओह महारानी, यह असम्भव है, बिलकुल असम्भव।'

'मेरी प्यारी एलिनर, अपनी रानी को उपकृत कर।'

'महारानी, मुझपर दया कीजिए या मुझे कत्ल करा दीजिए।'

'दुर्भाग्य है एलिनर, लेकिन तुम्हारा दोष नहीं। मैं खूनी हूं, कातिल हूं, तुम सच कहती हो।'

'महारानी', एलिनर उसके पैरों में लोट गई।

'अच्छा विदा एलिनर, तुमने एक असहाय औरत का दिल तोड़ दिया। मैंने तो तुमसे, सिर्फ तुम्हींसे, उम्मीद की थी। इस दुनिया में और किसीके सामने मैं अपना हृदय नहीं खोल सकती थी। लेकिन खैर! अब तुम चली जाओ। तुम अपना बदला ले चुकीं, अब मुझे अकेला छोड़ दो। बिलकुल अकेला।'

एलिनर उठकर खड़ी हो गई। उसने आंसू पोंछ डाले और कहा, 'महारानी, आपकी आज्ञा का पालन मैं करूंगी। मैं जाऊंगी।'

'लेकिन तुम्हारी रानी इसका बदला न चुका सकेगी। इंगलैंड का तख्त देकर भी नहीं।'

'बदले की बात नहीं महारानी। आखिर मैं भी एक औरत हूं और दर्द की वेदना मैं समझती हूं। महारानी के विश्वास को मैं व्यर्थ नहीं नहीं जाने दूंगी। मैं जाऊंगी।'

'लेकिन यह बात किसीपर प्रकट न होने पाएगी।'

'हवा को भी नहीं। विश्वास कीजिए।'

'तो जा मेरी प्यारी, ईश्वर तेरी रक्षा करे।'

एलिनर ने रानी का हाथ चूमा, जमीन तक झुकी और चल दी।

१६

वध ? सूर्योदय से पूर्व ही मेरा वध किया जाएगा। मेरा सिर काट लिया जाएगा। उसके लिए तैयारियां हो रही हैं। वह रह-रहकर राजबन्दीगृह के लोहे के सीखचों को पार करती हुई ठक्-ठक् की आवाज़ आ रही है। मेरे लिए वधस्थली बनाई जा रही है। मेरा वध होगा, केवल वध होगा, केवल यही एक विचार मेरे मस्तिष्क में है। बस, वह है और मैं हूं। उसके असह्य भार से विदलित। मेरी मेधाविनी निष्फलित बुद्धि स्वप्न-जगत् में भटक गई है। वह एक काल्पनिक अस्त-व्यस्त जीवन का चित्र बना रही है जिसमें सहस्रों स्वप्न-वासनाएं और जीवन की कोमल भावनाएं हैं। उसमें धर्म-बन्धन है, यशस्विनी विजय है, जीवन और आलोक हैं और वह अनिंद्य सुन्दर मुख है जो मेरा हो चुका, पर अभी मैंने उसका स्पर्श नहीं किया। शायद कभी न कर सकूंगा।

कोई काले लबादे में लिपटा हुआ आ रहा था। कैदी उठकर खड़ा हो गया। लेकिन यह क्या ? यह क्या ? आगन्तुक दौड़कर कैदी की भुजाओं पर गिर गया। कैदी ने उसे अंक में भर लिया।

यह तो आशा से भी अधिक है, मेरी प्यारी, प्राणाधिक प्रिय एलिनर, खूब आई। मगर रोती क्यों हो, सिसकियां मत लो। ज़रा मेरी ओर देखो, यहां आकर तुमने मेरी मृत्यु को आशीर्वाद बना दिया। एलिनर ने बड़ी कठिनाई से अपने को दृढ़ किया, उसने थर्राती हुई वाणी से कहा, 'समय बहुत कम है। मैं बड़ी ही कठिनाई से आ पाई हूं। मुझे रानी ने भेजा है।'

'तो उन्होंने अपने सारे निर्दय आचरण का परिमार्जन कर लिया। अंतिम क्षणों में तुम्हें मेरी गोद में डाल दिया ?'

'किन्तु तुम्हें उनसे मिलना होगा। प्रियतम, वे भी मेरी भांति स्त्री हैं, उन्हें क्षमा करना होगा।'

'ओफ, क्या यह भी सम्भव है ?'

'उन्होंने अनुनय की है, प्रार्थना की है, अस्वीकार न करो प्रियतम।'

एलिनर कैदी की गोद में बिखर गई। कुछ देर सन्नाटा रहा।

फिर एलिनर सावधान होकर खड़ी हो गई। उसने कहा, 'प्रियतम, तुम वीर-शिरोमणि हो अपना श्रेष्ठ उत्सर्ग प्रकट करो।'

'ठीक कहती हो, प्रिये।'

'तो चलो प्यारे, रानी के पास चलो, समय टला जा रहा है।'

'कुछ परवाह नहीं, आओ कुछ देर मेरे पास बैठ जाओ। ये अमूल्य क्षण हैं। मैं आंख भरकर तुम्हें देख लूं।'

'ओफ़, पर समय कहां है? मैंने बड़ी कठिनाई से अपने सब गहने और जमा पूंजी देकर पहरेदारों को राज़ी किया है।'

'क्या रानी ने···'

'वे कैसे यह बात प्रकट कर सकती थीं?'

'सच है। लेकिन क्या वे मेरी मृत्यु को सहन कर लेंगी?'

'मुझे सन्देह है।'

'लेकिन तुम?'

'मैं सह लूंगी। तुम्हारी मृत्यु बड़ी शानदार है। इंगलैंड में इसका जवाब नहीं है।'

'शायद।'

'रानी से मैंने क्षमा-याचना की थी, पर उन्होंने स्वीकार नहीं किया।'

'कैसे कर सकती थीं? वे इंगलैंड की महामहिम महारानी हैं। उनका कुछ कर्तव्य भी है।'

'मैं जान गई। उस कर्तव्य पर उन्होंने आत्मबलिदान कर दिया। वे तुम्हें नहीं, अपने को ही कत्ल कर रही हैं।'

'सच है। सच है। लेकिन तुम?'

'मेरा प्रेम उनके प्रेम के मुकाबले धूल के कण के बराबर भी नहीं है। मैं उनके समक्ष एक अति तुच्छ दुर्बलहृदय स्त्री हूं। वे तो उस सर्वोच्च पर्वत-शृंग के समान हैं जिस तक पहुंचना ही दुर्लभ है।'

'बिलकुल ठीक है प्रिये। तेजस्वी पुरुष के स्पर्श करने से तो जलना ही पड़ता है। तो प्रिये विदा। तुमसे तो मैं अभी विदा ले लूं। फिर तो अवसर मिलेगा ही नहीं।'

'विदा प्रियतम, तुम्हारे प्रेम को मैं अनमोल मोती की भांति यहां हृदय में धरोहर की भांति रखूंगी।'

'अफ़सोस कि मैं जल्दी में कुछ भी नहीं कर सका। लेकिन मैंने अपनी सम्पूर्ण स्टेट तुम्हारे नाम दे दी है। रानी से कह देना।'

'इन बातों की चर्चा न करो, प्रियतम। अपना प्रेम रानी को दो और कृपा मुझे। बस। केवल इतना ही।'

'तुम धन्य हो, प्रिये।'

'अब चलो।'

'चलो प्रिये।'

१७

संतरियों ने कैदी की ज़ंजीरें खोल दीं और बाहर चले गए। एक सूने और अंधेरे कमरे में रानी पत्थर की मूर्ति के समान अचल बैठी थी। उसने सिर से पैर तक काले वस्त्र पहने थे। कमरा बहुत बड़ा था और उसमें कोई सजावट का सामान न था। रानी की आंखें पथरा रही थीं। वे सूजकर लाल हो गई थीं।

'कैसा सुन्दर प्रभात है!'

कैदी ने रानी को देखते ही मुस्कराकर कहा। एलिनर आंखें पोंछती हुई वहां से खिसक गई। कैदी की बात का उसने कोई जवाब नहीं दिया। 'बहुत सुन्दर दिन है, है न?' कैदी ने फिर हंसकर ये शब्द कहे। वह दो कदम आगे बढ़ा। सुपरिचित शब्द थे। रानी इन शब्दों को उसके मुंह से हज़ार बार सुन चुकी थीं। पर आज!

'लेकिन तुम हंस रहे हो एसेक्स? मुझे श्राप नहीं दोगे?'

'किसलिए महारानी?'

'क्या मैंने तुम्हारे साथ घोर दुष्कर्म नहीं किया?'

'कौन ऐसा कहता है, उसका नाम मुझे बताओ और मेरी तलवार मुझे दो। मरने से पहले उसका सिर काटकर तुम्हारे चरणों में डाल दूं।'

'तो क्या तुम अपनी रानी को अब भी प्यार करते हो?'

'रानी की मैं इज़्ज़त करता हूं। मैं उसकी राजभक्त प्रजा हूं।'

'और एलिजाबेथ ?'

'उसे मैं प्राणों से बढ़कर प्यार करता हूं। करता रहा हूं। वह मेरे हृदय की अधिष्ठात्री है।'

'किन्तु वह ?'

'वह भी मुझे प्यार करती है, यह जितना मुझे आज मालूम हुआ उतना पहले कभी नहीं।'

'प्राणदण्ड पाकर ?'

'तो इससे क्या ? यह अंगूठी अभी तक मेरी उंगली में है। छीनी नहीं गई। इसपर उसका नाम अंकित है। उसने अपने हाथों मुझे पहनाई थी।' एसेक्स ने अंगूठी चूम ली।

रानी कुर्सी से उठ खड़ी हुई। वह आगे बढ़ी, पर लड़खड़ाकर गिर गई। कैदी ने उसे अपने भुजदण्डों में उठाकर अंक में भर लिया। रानी टूटी हुई पुष्पमाला की भांति उसकी गोद में बिखर गई। उसने टूटते स्वर में कहा, 'मैं जानती थी कि तुम मुझे क्षमा कर दोगे।'

'मेरी प्यारी एलिजाबेथ, मेरे रक्त की एक-एक बूंद तुम्हें प्यार करती है।'

'और यही हाल मेरा है प्रियतम। अब तुम तो चले शान से, मैं कैसे अकेली रहूंगी ? मगर तुम तो हंस रहे हो।'

'मेरा रोम-रोम आनन्द से भरपूर है।'

'यह कैसा आनन्द है प्रियतम, क्या मेरे बिछोह से तुम खुश हो ?'

'नहीं, इंगलैंड की राजेश्वरी के अखण्ड तेज-प्रताप से मेरा दिल बाग-बाग है। महारानी, तुम यदि ऐसा न करतीं तो मैं तुम्हें घृणा करता। तुमने इंगलैंड की रानी की मर्यादा रख ली और मुझे मेरे जीवन की सबसे महान प्रतिष्ठा दी।'

'ओह, तुम ऐसा सोचते हो, प्रियतम !'

'क्यों न सोचूं भला। कौन इंगलैंड में मेरे बराबर भाग्यशाली है जिसने इंगलैंड की रानी का प्यार भी पाया और सम्मान भी।'

'घातक के कुल्हाड़े को तुम सम्मान कहते हो ?'

'आज मैं कहता हूं। कल से सारी दुनिया कहेगी।'

'ओह प्यारे, तुम ऐसे वीर पुरुष हो, मैं तुम्हारी इसी वीर-मूर्ति को हृदय में रख अब जीती रहूंगी। विश्वास रखो, जीते-जी मेरे हृदय

के सूने सिंहासन पर कोई दूसरा न आ सकेगा।'

'इस बात को तो सुनकर प्रिये, मैं सौ बार सिर कटा सकता हूं।'

'हाय प्रियतम, यह रानी होना ही मेरे दुर्भाग्य का कारण हुआ। काश कि मैं एक किसान की बेटी होती, तो हम-तुम किसी एकान्त मनोरम स्थान में आनन्द के दिन व्यतीत करते, जैसे बत्तख का जोड़ा आनन्द करता है।'

'उस तरह रहकर जीवन तो प्रिये, पशु-पक्षी और साधारण जन व्यतीत करते हैं। महामहिमावान पुरुष तो ऐसे ही जीते हैं जैसे इंगलैंड की महामहिम महारानी।'

'और महापुरुष ऐसी ही वीरता से मृत्यु का आलिंगन करते है जैसे तुम प्रियतम!'

'मुझे तो सारा बल तुम्हारे प्यार का ही है, एलिज़ाबेथ।'

'तो विदा प्रियतम।'

'विदा प्रिये, चिर विदा।'

'लेकिन तुम एलिनर से बिना मिले ही चले जाओगे?'

'वह तो तुम्हारी गोद में है प्रिये, मुझे उसकी क्या चिन्ता है!'

'तो प्रियतम, तुम्हारी जुदाई के सदमे में हम दोनों का सांझा है। जब तक जीती हैं तब तक।'

'यह अधिक से भी अधिक है महारानी।'

वह मुड़ा। रानी उसके अंकपाश से खिसककर धरती में गिर गई, फूलों के ढेर की तरह। एसेक्स के चलते हुए कदम रुक गए। उसने एक नज़र रानी पर डाली, जो धरती में पड़ी सिसक रही थी। हाथ ऊंचा करके ज़ोर से वह चिल्लाया, 'महारानी चिरजीविनी हो। इंगलैंड की अधीश्वरी चिरजीविनी हो।'

और बिना पीछे मुड़े वह कक्ष से बाहर चला गया। दालान में एक वृद्ध पुरुष ने उसका स्वागत किया। वह पादरी था। उसने अपने नेत्र आकाश की ओर उठाकर कहा, 'पुत्र, क्या तुम तैयार हो?'

एसेक्स ने हंसकर कहा, 'निस्सन्देह धर्मपिता, परन्तु आप तो बहुत बूढ़े है। मैं इस बात को भूल ही गया था कि कुछ लोग बूढ़े भी होते हैं।'

'पुत्र, साहस करो।'

दरवाज़ा खुला और काली पोशाक में एक लम्बे कद के आदमी ने प्रविष्ट होकर झुककर कैदी को सलाम किया। उसके हाथ में एक सरकारी परवाना था। उसने कहा, 'श्रीमान, मैं कोर्ट आफ जस्टिस का मीर-मुन्शी हूं। और पब्लिक प्रोसीक्यूटर से एक सन्देश लाया हूं।,

'पब्लिक प्रोसीक्यूटर मेरा सिर चाहते हैं न?'

उसने आज्ञापत्र पढ़ा। फिर उसने कहा, 'जब आपकी इच्छा हो।'

'देर काहे की। शुभस्य शीघ्रं।'

'तो मैं श्रीमान की प्रतीक्षा में खड़ा हूं।'

'तुम? और भी तो हज़ारों हैं मित्र, चलो फिर।'

'वह छोटा-सा जुलूस ववस्थल की ओर चला।

१८

कत्ल का नज़ारा देखने सारा लन्दन ही इस समय सेंट जेम्स पैलेस पर आ जुटा था। ऐसी भीड़ मेले-तमाशों में ही इकट्ठी होती थी, परन्तु यह भी मेला ही था। वधस्थल तीरंदाज़ो, गारदों और घुड़सवारों ने घेर रखा था। मंच इतना नीचा था कि निकटवाले ही या खिड़कियों पर बैठे लोग देख सकते थे। स्त्रियां भी धड़कते हृदय से यह दृश्य देख रही थीं। लोग रह-रहकर महल के झरोखों की ओर ताक लेते थे, जहां से रानी के वध का दृश्य देखने की लोगों को आशा थी। कुछ लोग कह रहे थे कि वह माफी मांग लेगा। परन्तु कुछ कह रहे थे कि वह भेड़िये की तरह बहादुर है, माफी नहीं मांगेगा।

जब एसेक्स वधमंच पर आया तो लोगों में एक प्रकार की सिहरन दौड़ गई। वह सिर्फ सैंतीस वर्ष का तरुण था। शरीर से हट्टा-कट्टा और सुन्दर था। बाल उसके बड़े सुन्दर और सलोने थे। आंखें गहरी काली और चमकदार थीं। यद्यपि उसका चेहरा इस समय पीला पड़ गया था, पर उसपर खून चमक रहा था। उसने एक बार चारों ओर मुंह उठाकर देखा। जन-समूह को देखकर वह कुछ विचलित हुआ। अधिकांश दर्शक उसकी वीरता और उदारता का बखान कर रहे थे। इस समय कुहरा छाया हुआ था और थोड़ा-थोड़ा पानी बरसना भी

आरम्भ हो गया था। फिर भी जिधर देखो, मनुष्यों के सिर ही सिर दिखाई दे रहे थे। पुरुष, स्त्रियां और बालक सभी जन भीड़ में थे। चारों तरफ के मकानों की खिड़कियों में नर-नारी भरे थे, परन्तु रानी छज्जे पर नहीं थी।

रातवाली सम्भ्रान्त मण्डली उम्दा नाश्ता करके खिड़की पर डटी थी।

जल्लाद ने आकर एसेक्स के हाथ बांधने चाहे। पर उसने कहा, 'इसकी कोई ज़रूरत नहीं है। तुम सिर्फ अपने कुल्हाड़े को ठीक रखो।'

एक लार्ड ने पास आकर उससे पूछा, 'क्या आप कुछ कहेंगे ?'

एसेक्स ने रानी की सूनी खिड़की की ओर देखा। फिर उसने अपना हाथ ऊंचा उठाया जिसमें रानी की दी हुई अंगूठी थी। उसने उसे चूम लिया और तीन बार चिल्लाकर कहा, 'इंगलैंड की महामहिम महारानी एलिज़ाबेथ की जय, इंगलैंड की महारानी चिर जीए।' और उसने अपना सिर टिकटी पर रख दिया। बाजे ज़ोर से बज उठे। और तभी जल्लाद का कुल्हाड़ा उसके सिर पर पड़ा। सिर कटकर टोकरी में जा गिरा। लाश खून में डूब गई।

सवारों और तीरन्दाज़ों ने भीड़ को तितर-बितर करना आरम्भ कर दिया। बाद में लाश के टुकड़े-टुकड़े किए गए। बड़े लोग अंत तक तमाशा देखते रहे और फिर हंसी-दिल्लगी करते अपने घर गए।

१९

भारतीय जल-मार्ग के नक्शे मिलने के तीस साल बाद सन् १६०८ में पहला अंग्रेज़ी जहाज़ 'हेक्टर' सूरत की बन्दरगाह पर आकर लगा। उन दिनों सूरत का बन्दरगाह भारतीय विदेशी व्यापार का बड़ा भारी केन्द्र था। जहाज़ का कप्तान हाकिन्स था। वही पहला अंग्रेज़ बच्चा था जिसने प्रथम बार भारत की भूमि को स्पर्श किया।

उन दिनों भारत में सम्राट जहांगीर तख्त पर था। हाकिन्स ने आगरा जाकर इंग्लिस्तान के बादशाह जेम्स प्रथम का पत्र और सौगात बादशाह को भेंट की। मुगल बादशाह का ऐश्वर्य और आगरा की

बड़ी-बड़ी अट्टालिकाएं, महल और शहर के ठाट-बाट देखकर उसकी आंखें चुंधिया गईं। ऐसी शान का शहर उसने पहले कभी नहीं देखा था। न ऐसे महान बादशाह की ही उसने कभी कल्पना की थी। उसने दोजानू होकर मुगल-पद्धति से बादशाह को तसलीमात अर्ज़ की। जहांगीर ने हाकिन्स की बहुत खातिरदारी की, और अंग्रेज़ों को सूरत में कोठी बनाने और व्यापार करने का फर्मान जारी कर दिया। उसने यह भी इजाज़त दे दी कि मुगल-दरबार में अंग्रेज़ एलची रहा करे।

कुछ दिन बाद सर टामस रो को इंग्लिस्तान के बादशाह ने मुगल-दरबार में अपना पहला एलची बनाकर भेज दिया, जिसने अंग्रेज़ व्यापारियों के लिए और भी सुविधाएं प्राप्त कर लीं। उन्हें कालीकट और मछलीपट्टम में भी कोठी बनाने की आज्ञा मिल गई। अंग्रेज़ों की प्रार्थना पर उसने यह भी फर्मान जारी कर दिया कि अपनी कोठी के अन्दर रहनेवाले कम्पनी के किसी मुलाज़िम के कसूर करने पर अंग्रेज़ स्वयं उसे दण्ड दे सकते हैं।

इस न्यायी और भावुक बादशाह को यह स्वप्न में भी विचार न आया होगा कि एक दिन अंग्रेज़ बादशाह के उत्तराधिकारियों तक को दण्ड देने लगेंगे और यदि उनका विरोध किया जाएगा तो वे प्रजा का संहार कर डालेंगे तथा बादशाह के उत्तराधिकारी को बागी कहकर आजीवन कैद कर लेंगे।

सन् १६१२ में अंग्रेजों ने अपनी पहली कोठी सूरत में स्थापित की और स्थल-मार्ग से आगरा और दिल्ली के बीच व्यापार-विनिमय आरम्भ किया। बाद में उन्होंने पटना और मछलीपट्टम में भी कोठियां स्थापित कर लीं।

मछलीपट्टम उन दिनों गोलकुण्डा राज्य के अन्तर्गत अच्छा बन्दरगाह था। बाद में उन्होंने एक कोठी बालासोर और दूसरी कटक से पच्चीस मील दूर हरिहरपुर में खोली। बाद में विजयनगर के महाराज से धरती मांगकर मद्रास में सेंट जार्ज का किला बनाया। मुगल-राज्य से बाहर अंग्रेज़ों का एक स्वतन्त्र केन्द्र था। उस दिनों वे पटना के उत्तर सिंधिया या लालगंज से शोरा नावों में डालकर लाते थे। रेशम और चीनी भी मोल लेकर बंगाल में लाते थे। उन्हें एक निशान

तत्कालीन बंगाल के सूबेदार शाहज़ादा शुजा ने अपनी ओर से लिख-कर दे दिया था कि अंग्रेज़ प्रतिवर्ष तीन हज़ार रुपये सब तरह की चुंगी और अन्य करों के बदले में देते रहें, और उन्हें बंगाल में व्यापार करने दिया जाए। उन दिनों यूरोप से आनेवाले सारे ही जहाज़ों का माल बालासोर ही में उतारा-चढ़ाया जाता था और हुगली बंगाल के व्यापार का मुख्य केन्द्र था।

सन् १८५० में वाटन ने कम्पनी के लिए विना महसूल दिए बंगाल में व्यापार की आज्ञा ले ली।

सन् १६५८ में जब इंगलैंड की कम्पनी के अधिकारियों ने अंग्रेज़ी कोठियों को नये सिरे से व्यवस्थित किया, तव अंग्रेज़ों की सारी कोठियां सूरत में नियुक्त अध्यक्ष और उसकी परिषद के अधीन कर दी गईं। केवल हुगली और मद्रास में प्रधान एजेन्सियां रह गईं। उन दिनों बंगाल में अंग्रेज़ों का धन्धा मुनाफे में चल रहा था। कच्चा रेशम बहुतायत से मिल जाता था। भांति-भांति के रेशमी वस्त्र सुन्दर और सस्ते मिल जाते थे। उम्दा किस्म का शोरा भी बहुत सस्ता था। इंगलैंड से भेजे गए सोने-चांदी की भी भारत में अच्छी खपत थी। कुछ दिन बाद मद्रास के केन्द्र में एक स्वतन्त्र अध्यक्ष नियत कर उसे भी सूरत के समान ही एक स्वतन्त्र केन्द्र बना दिया गया और बंगाल की सब कोठियों को मद्रास के अधीन कर दिया गया। अब बंगाल में अंग्रेज़ों का व्यापार तेज़ी से बढ़ रहा था। उन दिनों डेढ़ करोड़ पौण्ड मूल्य का माल बंगाल से बाहर भेजा जा रहा था।

१६६१ में चार्ल्स द्वितीय ने कम्पनी को भारत में अपना सिक्का चलाने, रक्षा के लिए फौज रखने, किले बनाने और आवश्यकता हो तो लड़ाई लड़ने के भी अधिकार दे दिए। यह एक चमत्कारिक बात थी कि जिस भारत से इंगलैंड के राजा का कोई सम्बन्ध ही न था, उससे व्यापार करनेवाली इस कम्पनी को वह ये राजनीतिक अधि-कार दे रहा था, जो आगे उसे अपना साम्राज्य स्थापित करने के काम आएं।

अब हुगली केन्द्र के अधीन ढाका और मालवा की कोठियों की भी स्थापना हो गई थी। इन दिनों रेशम की रंगाई सीखने इंगलैण्ड से

बहुत आदमी बंगाल में आ रहे थे। समुद्र के मुहाने से हुगली तक गंगा में आने-जाने का मार्ग ठीक करने के लिए अंग्रेज़ों ने एक नाविक-दल बनाया था और अब अंग्रेज़ी जहाज़ बंगाल की खाड़ी से होते हुए गंगा में ऊपर तक आ रहे थे।

परन्तु अब बंगाल के स्थानीय अधिकारी बहुत धांधलेबाज़ी करते थे। यह धांधलेबाज़ी जैसे सबके लिए थी, वैसे ही अंग्रेज़ों के लिए भी थी। वे दूसरों की भांति अंग्रेज़ों से भी बहुत-सा रुपया वसूल करते थे और उनके व्यापार में बाधा डालते रहते थे। वे बहुधा अंग्रेज़ी कम्पनी की नावों को रोककर उनमें रखा हुआ सारा माल जब्त कर लेते थे। शाहज़ादा शुजा से जो इकरार हुआ था, अब उसकी आन नहीं मानी जाती थी और अंग्रेज़ों से सारे माल पर चुंगी वसूल की जाती थी। इसके अतिरिक्त राहदारी, पेशकश, मुंशियाने के हक का रुपया भी वसूल किया जाता था। फरमाइश करके प्रान्त का सूबेदार जो माल मंगाता था उसका रुपया नहीं दिया जाता था। बहुधा ऐसा होता था कि बंगाल का सूबेदार शाइस्ताखां और शाहज़ादा अजीमुश्शानखां तथा अन्य उच्च मुगल अधिकारी वहां से गुज़रनेवाले माल की बंद गांठ को खोलकर अपनी पसंद का माल निकाल लेते थे और अपनी इच्छानुसार उचित से बहुत कम उसका मूल्य चुकाते थे। शाहज़ादा अजीमुश्शान ने तो यह धंधा बना लिया था कि बलपूर्वक कम कीमत में माल लेकर उसे बाज़ार में पूरी कीमत में बेच देता था। इस प्रथा को 'सौदा-ए-खास' कहते थे।

चुंगी और लूट-खसोट से बचने के लिए अंग्रेज़ों ने बहुत हाथ-पैर मारे। शाइस्ताखां को बहुत रुपया भी देना चाहा, पर नतीजा कुछ भी नहीं निकला। तब अंग्रेज़ों ने भारतीय शासकों का आसरा छोड़ अपनी ही ताकत के बलबूते पर अपनी रक्षा का प्रबन्ध किया। उन्होंने निश्चय कर लिया कि किसी सुविधापूर्ण भारतीय तट को जीतकर अपना स्वतन्त्र किला बनाया जाए, जिससे उनके व्यापार में कोई छेड़-छाड़ न हो।

आक्रमण किया कि गुर्राबों में बैठे हुए माघ दहशत के मारे नावें छोड़ समुद्र में कूद पड़े। गुर्राबों पर मुगलों ने अधिकार कर लिया। माघ भाग खड़े हुए। किन्तु अराकानियों के बड़े-बड़े जहाज़ हुरला की खाड़ी से निकलकर अब खुले समुद्र में आ गए थे। अब कड़ा मुकाबिला होने लगा। मुगल गोलियां बरसाते आगे बढ़ रहे थे, और अराकानी उनका जवाब देते हुए पीछे हट रहे थे। इसी प्रकार कर्णफूल नदी का मुहाना आ गया। मुहाने में घुसकर अराकानियों ने चटगांव से लेकर नदी की मंझधार में स्थित एक टापू तक अपने सब जहाज़ों को एक कतार में खड़ा करके मोर्चा बनाया था। इस नदी के किनारे पर उन्होंने बांसों के तीन बाड़े बनाए थे। इब्नसऊद ने स्थल-मार्ग से हमला करके बाड़ों पर कब्ज़ा कर लिया और नदी में बलात् घुस गया और अराकानियों पर टूट पड़ा। चटगांव के किले से मुगलों पर गोले बरस रहे थे। पर इब्नसऊद ने भीषण आक्रमण किया अंत में अराकानी भाग खड़े हुए। कुछ मार डाले गए, कुछ कैद हो गए। उनके १३५ जहाज इनके हाथ लगे। बाद में चटगांव के किले पर भी इब्नसऊद ने अधिकार कर लिया। इसके बाद ही फरहादखां के मातहत मुगल फौजें घने जंगलों में होती हुई चटगांव जा पहुंची। माघ राह-बाट के नाके छोड़-छोड़कर भाग गए। फरहादखां ने विजयी सेनापति की भांति किले में २६ जनवरी, सन् १६६६ को धूमधाम से प्रवेश किया। अराकानी समुद्री डाकू कैद कर लिए गए और हज़ारों बंगाली किसान, जिन्हें वे गुलाम बना ले गए थे, वे मुक्त कर दिए गए। स्वतन्त्र हो स्वदेश को लौट पड़े। चटगांव में मुगल थाना स्थापित कर दिया गया और एक मुगल फौजदार के अधीन वह प्रान्त बना दिया गया। चटगांव का नाम बदलकर इस्लामाबाद रख दिया गया।

२१

जिस दिन इंगलैंड का बादशाह जेम्स द्वितीय बेंत से पीटे हुए कुत्ते की भांति दुम दबाकर इंगलैंड से भागा, उसी दिन तीन अंग्रेज हुगली के बाज़ार में ज़बरदस्ती घुस आए। उन दिनों बादशाह औरंग-

ज़ब का मामू नवाब शाइस्ताखां बंगाल का हाकिम था। वह अंग्रेज़ों की आए दिन की बदमाशियों से तंग था और इण्डिया कम्पनी को नीच, झगड़ालू लोगों और जुआ-चोरों की जमात कहा करता था। सन् १६३४ में बादशाह शाहजहां ने पुर्तगालियों को बंगाल से निकाल कर अंग्रेज़ों को बंगाल में तिजारत करने की आज्ञा दी थी। परन्तु उन्हें हुगली तक जहाज़ लाने की इजाज़त नहीं थी। हुगली से बहुत नीचे पिपली में आकर उनके जहाज़ रुक जाते थे। हुगली के बाज़ार में आने की अंग्रेज़ों को सख्त मुमानियत थी। क्योंकि बाज़ार में आकर ये लोग अन्धेरगर्दी मचा देते थे। इनमें सदाचार नाम की तो कोई चीज़ ही नहीं थी। वे बिना ही सरकारी चुंगी अदा किए और लोगों को उनके माल का दाम चुकाए माल ले भागते थे। इसलिए नवाब शाइस्ताखां ने इन उठाईगीरों को बाजार में आने देने की सख्त मनाही कर दी थी और हुक्म था कि यदि कोई अंग्रेज़ बाज़ार में घूमता देखा जाए तो उसे फौरन गिरफ्तार कर लिया जाए।

तीनों अंग्रेज़ शराब पीकर बाज़ार में घूमने और हुर्दंग करने लगे। जब उन्हें गिरफ्तार किया जाने लगा तो वे तलवारें ले-लेकर पिल पड़े। वास्तविक बात तो यह थी कि वे झगड़ा करने के इरादे से ही आए थे। परन्तु लड़ाई में वे घायल हुए और गिरफ्तार हो गए। शाही सिपाही उन्हें रस्सियों में बांधकर हुगली के फौजदार के पास ले चले। इसपर कप्तान लेस्ली, जो निकट ही छिपा खड़ा था, अपने सिपाहियों को लेकर शाही गारद पर टूट पड़ा। पर उसके कई आदमी मारे गए और वह भाग खड़ा हुआ। कैदियों को शाही गारद ने लाकर फौजदार के सामने पेश किया। फौजदार ने उन्हें अपने घर से सटे हुए कैदखाने में बन्द कर दिया। पर उसी शाम को अंग्रेज़ी छावनी से सैनिक सहायता लेकर कर्नल लेस्ली फिर शहर में घुस आया। उसने फौजदार के मकान को लूटकर उसमें आग लगा दी। हुगली का बाज़ार लूट लिया। उसी दिन रात के समय अंग्रेज़ों के जहाज़ भी हुगली में घुस आए और वहां लंगर डालकर पड़े हुए एक शाही जहाज़ और उसके मालमते पर कब्ज़ा कर लिया। लूट-मार कर और सब माल-मता लेकर अंग्रेज़ हुगली से चल दिए और 'सुतनती' में आकर ठहरे, जहां वर्तमान कलकत्ता बसा हुआ है।

नवाब ने सुना तो आगबबूला हो गया। वह सख्त आदमी था, पर रियाया का उसे खयाल भी बहुत था। उन दिनों बंगाल में उसके हुक्म से रुपये का आठ मन चावल बिकता था। उसने अंग्रेज़ों को दण्ड देने को फौज भेजी। कुछ लड़ाई हुई। अंग्रेज़ों ने मटियाबुर्ज के पासवाले नमक के शाही गोदामों में आग लगा दी और वर्तमान कलकत्ता के दक्षिण-पूर्व में, जहां आजकल 'गार्डन रीच' है, बने हुए थाना-शाही किलों पर आक्रमण कर दिया। उनके जहाज़ गंगा में आगे बढ़ आए और उन्होंने हिजली टापू पर अधिकार कर लिया। इसके बाद बंगाल की खाड़ी में अपनी समूची जल-थल-सैन्य को एकत्र कर युद्ध को सन्नद्ध हो बैठे।

शाइस्ताखां को बहुत गुस्सा आया। उसने सिपहसालार अब्दुल-समदखां को बारह हज़ार सेना लेकर इन लुच्चों की जमात को हिजली से मार भगाने को भेज दिया। थोड़ी ही लड़ाई हुई और अंग्रेज़ अपनी सब तोपें, साथ का सब सामान, सारा गोला-बारूद लेकर अपने झण्डे उड़ाते और बाजा बजाते हुए हिजली का किला खाली करके चल खड़े हुए। उन दिनों मुगल-रणनीति ऐसी ही निस्तेज हो चली थी। साहसिक यूरोपियनों की रणनीति के सामने उनकी भारी संख्या भी बेकार साबित होती थी।

इसके बाद कारनाक एक डेपूटेशन के साथ शाइस्ताखां की सेवा में उपस्थित हुआ। शाइस्ताखां अंग्रेज़ों से बहुत नाराज़ था। वह उनकी कोई बात सुनना नहीं चाहता था। परन्तु जब कारनाक ने बहुत खातिर-खुशामद की, तो शाइस्ताखां ने उसके मण्डल से मुलाकात की और कहा, 'अब तुम हमसे क्या उम्मीद करते हो?'

'हुज़ूर, हम लोगों के साथ हद दर्जे की ज़्यादती और बेइन्साफी की गई है, हमारा इन्साफ होना चाहिए।'

'लेकिन तुम लोग जो जुआ-चोरी करते हो, रियाया को लूटते हो? हमारी सरकार से बगावत करते हो?'

'तो हुज़ूर, हमारी छानबीन की जाए। हम तो निहायत अदब से सरकारी कौल-करारों की याद दिलाने हुज़ूर की सेवा में हाज़िर आए हैं।'

'कैसा कौल-करार?'

'हुज़ूर, बंगाल के विगत सूबेदार शाहज़ादा शुजाउद्दौला ने निश्चित कुल मिलाकर केवल तीन हज़ार रुपये लेकर लाए हुए सारे माल की असल कीमत पर से हमेशा के लिए चुंगी देने की छूट दे दी थी।'

'लेकिन शाहज़ादा शुजा सिर्फ एक सूबे के सूबेदार थे। अपनी सूबेदारी के दौरान में यदि उन्होंने किसी एक तिज़ारती गिरोह का रियायत करके और सिर्फ थोड़ा-सा रुपया लेकर ही खास सुविधा दी थी तो उनके बाद होनेवाले सूबेदार के लिए शुजा का वह निशान उस वक्त तक तसलीम नहीं किया जा सकता, जब तक कि उसमें दी गई शर्तें बादशाह मंज़ूर फर्माकर शाही ऐलान न कर दें। बस, तुम्हारी अर्ज़ी हम मंज़ूर नहीं फर्मा सकते।'

'लेकिन हुज़ूर, हज़रत बादशाह सलामत ने भी एक फर्मान हमें इनायत किया था, जिसकी मंशा यह थी कि सूरत की बन्दरगाह में एकबार चुंगी चुका देने के बाद हिन्दुस्तान के किसी भी हिस्से में बिना कोई कर चुकाए या चुंगी दिए अंग्रेज बेरोक-टोक व्यापार कर सकते हैं।'

'सरासर तुम्हारी यह मांग बेजा है। उस वक्त सिर्फ सूरत के बन्दरगाह पर ही तुम्हारे जहाज आते थे। और वहीं से तुम्हारा माल खुश्की के रास्ते आगरा, दिल्ली, पटना, मुंगेर तक आता था। मगर अब तो तुम्हारे जहाज़ सीधे बालासोर में आते हैं। इसके अलावा मद्रास और मछलीपट्टम में भी तुम्हारे जहाज सीधे आते हैं, जो शाही इलाका नहीं है। शाही फरमान का यह मंशा न था कि तुम इंगलैंड व चीन से सूरत तक होकर सीधे बंगाल जानेवाले दूसरे माल पर भी चुंगी न दो। तुम्हारी यह मांग भी तुम्हारी चालाकी की दलीलों के बावजूद मानी नहीं जा सकती। क्योंकि ऐसे माल पर जो सूरत के रास्ते नहीं आ रहा हो, सूरत में कोई चुंगी नहीं वसूल की जाती।'

तब अंग्रेज एलची ने खींझकर दूसरी ज्यादतियों और लूट-खसोट का ज़िक्र किया। बूढ़े सूबेदार ने हंसकर कहा, 'पहले तुम सब फिरंगी खुद सचाई और ईमानदारी से अपना कारोबार करो और सरकारी चुंगी और कर अदा करो। रियाया पर मनमानी लूट न करो और हमारी फर्माबरदार रियाया की तरह हिन्दुस्तान में रहो, तो तुम्हारी

सब तकलीफों पर हम गौर फर्माएंगे ।'

इस पर कारनाक और उसके साथी बहुत रोए-गिड़गिड़ाए । अन्त में बहुत लानत-मलामत के बाद शाइस्ताखां ने उन्हें वर्तमान कलकत्ता से बीस मील दक्षिण 'उलुबेरिया' नामक स्थान पर किला बनाने और हुगली में व्यापार करने की फिर आज्ञा दे दी ।

अब अपना मतलब साधकर कारनाक अपने जहाज़ों के साथ लौट आया और उसने 'सुतनती में पड़ाव डाल दिया ।

अगले वर्ष कप्तान हीथ इंगलैंड से आया । कारनाक के स्थान पर वह बंगाल का एजेण्ट बना । उसने वहां की मलेरियल आबोहवा से घबराकर तथा और कई बातों पर विचार कर बंगाल की कोठियां बन्द कर वहां से चल देने का निश्चय किया । उसने पुराने बालासोर के मुगल किले पर हमला किया । बाद में नए बालासोर पर भी कब्ज़ा कर लिया और सारे बंगाल के आयोजन समाप्त कर मद्रास भाग गया ।

परन्तु सन् १६६० में कारनाक फिर मद्रास से सुतनती पहुंचा ।

उसके पास वज़ीरेआज़म के हाथ का लिखा बंगाल के दीवान के नाम एक शाही हस्ब-उल-हुक्म था जिसमें लिखा हुआ था कि अंग्रेज़ों को चुंगी और दूसरे करों के बदले तीन हज़ार रुपये सालाना देते रहने पर उन्हें बंगाल में बिना रोक-टोक व्यापार करने की इजाज़त दे दी जाए । फिर वह सुतनती गांव धीरे-धीरे बढ़कर अन्ततः आज का विराट कलकत्ता बन गया ।

२२

सितम्बर, सन् १६६५ में प्रसिद्ध अंग्रेज़ समुद्री डाकू हेनरी ब्रिजमैन ने जो एलोरी के नाम से प्रसिद्ध था, 'फतेहमुहम्मद' नामक बहुमूल्य व्यापारी सामान से लदा हुआ जहाज़ लूट लिया । यह जहाज़ सूरत के प्रसिद्ध व्यापारी अब्दुलगफूर का था । अभी इस घटना को कुछ ही दिन हुए थे कि उसने एक दूसरा जहाज़ 'गंज-ए-सवाई' नाम का लूट लिया । यह जहाज़ बहुत-से हज के यात्रियों और व्यापारी

माल को लेकर मक्का जा रहा था। मोखा से लौटते हुए बम्बई और दमन के बीच एलोरी ने कुछ अन्य लुटेरे जहाज़ों के साथ उसे जा घेरा और दबादब गोले बरसाने शुरू कर दिए। जहाज़ में आग लग गई और डाकू उसमें कूद पड़े। तीन दिन तक वे जहाज़ को निर्द्वन्द्व लूटते रहे। बहुत-से हज-यात्री मार डाले गए। बहुतों की भयानक दुर्दशा हुई। अपने लुटे हुए यात्रियों को लेकर अत्यन्त जीर्ण-शीर्ण हालत में जहाज़ सूरत के बन्दरगाह में लौट आया।

जहाज़ के यात्रियों ने जब अपने ऊपर अत्याचार के रोमांचकारी वर्णन किए तो सूरत के मुसलमानों का खून खौल उठा। उन दिनों सूरत का फौजदार एतमादखां अंग्रेज़ों का दोस्त था। उसने कुछ मुसलमान ले उस समय तो अंग्रेजों की रक्षा कर ली, पर इन लुटे-पिटे हाजियों तथा सूरत के मुसलमानों ने इस्लामनगर जाकर बादशाह के सामने अपने ऊपर फिरंगी डाकुओं के अत्याचार की पूरी कहानी कह सुनाई।

शाही झण्डेवाले जहाज़ के लूटे जाने और हज के पवित्र यात्रियों पर किए अत्याचार और धर्म-बाधा से औरंगज़ेब अत्यन्त क्रुद्ध हो गया और उसने सूरत के सब अंग्रेज़ों को कैद करने का हुक्म दे दिया।

औरंगज़ेब के चिढ़ने और गुस्सा करने का एक कारण यह भी था कि वह एक बार इन फिरंगियों की हरकत को माफ कर चुका था। उस समय भारत की सब अंग्रेज कोठियों का संचालक सर जान चाइल्ड था। वह सूरत से बम्बई भाग गया और शाही फौजों से लड़ने की तैयारी कर रहा था। इसपर सूरत के मुगल फौजदार ने सूरत की अंग्रेज़ी कोठी पर चारों ओर से घेरा डाल दिया और कोठी की परिषद् के अध्यक्ष बैंजिमन हेरिस और उसके सहायक सेम्युएल एनस्ले को, उसके सब अंग्रेज़ साथियों तथा उनके साथी भारतीय दलालों को कैद कर लिया तथा कोठी के बाहर फौज का घेरा डाल दिया।

सर जान चाइल्ड एक जहाजी बेड़ा लेकर सुवाली पहुंचा, और सूरत के फौजदार को अंग्रेज़ों की शिकायत की सूची भेजकर अंग्रेज़ों के विशेषाधिकार की पुष्टि की। साथ ही अधिकारों को बढ़ाने की मांग की। फौजदार ने सुवाली पर सेना भेज दी। लड़ाई हुई, सर जान निकल भागा और उसने सूरत के पास बहनेवाली नदी का मुहाना

बन्द कर दिया तथा जहाज़ी बेड़े में समुद्री-तट का चक्कर लगाकर वहां के सारे ही भारतीय जहाज़ों पर अधिकार कर लिया।

इसके जवाब में फौजदार ने सूरत के सारे अंग्रेज़ कैदियों के पैरों में भारी-भारी बेड़ियां डाल दीं, और उसी हालत में उन्हें सोलह महीने बिताने पड़े। इसी बीच मुगल जल-सेना के शाही नायक जंजीरा के सिद्दी ने बम्बई पर हमला बोलकर वहां के बाहरी भागों पर अधिकार कर लिया। बम्बई के अंग्रेज एक किले में घिर गए। किले को शाही सेना ने घेर लिया। अन्त में हारकर सर चाइल्ड ने अबुहमर्म-वारों को औरंगज़ेब की सेना में भेजा और दया-याचना की। डेढ़ लाख रुपया जुर्माना देने और लूटा हुआ सारा माल वापस लौटाने पर अंग्रेज़ों को छुटकारा मिला और फिर व्यापार करने की उन्हें आज्ञा मिल गई।

इस बार वह बुरी तरह क्रुद्ध हो उठा था। कैद में पड़ा हुआ एनस्ले बारम्बार बादशाह की सेवा में अर्ज़ी भेजता रहा। उसने कसमें खाकर कहा कि गंज-ए-सवाई की लूट में अंग्रेज़ों का कुछ भी हाथ नहीं है। उधर बम्बई का गवर्नर सर जान गामर बारम्बार बादशाह से अंग्रेजों को छोड़ देने और न्याय करने पर ज़ोर दे रहा था। परन्तु बादशाह समुद्र की इस डाकेज़नी को सर्वथा खत्म कराना चाहता था। डच लोगों ने अवसर पाकर बादशाह से प्रस्ताव किया कि यदि उन्हें साम्राज्य में व्यापार का एकाधिकार दिया जाए तो वे हिन्द महासागर को डाकुओं के इस गिरोह से पाक-साफ कर सकते हैं और मक्का जाने-वाले तीर्थ यात्रियों की सुरक्षा की भी ज़िम्मेदारी ले सकते हैं। पर बादशाह ने स्वीकार नहीं किया।

सूरत के फौजदार ने एनस्ले से कहा कि या तो अंग्रेज़ शाही जहाज़ों की समुद्री डाकुओं से सुरक्षा के प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर कर दे, नहीं तो दस दिन के भीतर भारत को छोड़कर सब अंग्रेज़ चले जाएं। बादशाह ने डच और फ्रांसीसियों को भी यही हुक्म जारी कर दिए। एनस्ले ने कहा कि यदि बादशाह अंग्रेजी कम्पनी को प्रतिवर्ष चार लाख रुपये दे तो वे यह ज़िम्मेदारी ले सकते हैं।

अन्त में बादशाह ने कुछ रुपये देना स्वीकार कर लिया और एनस्ले ने प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर कर दिए। इसपर सब अंग्रेज़ कैद से छोड़ दिए गए।

तब अंग्रेज़ों ने एक जहाज़ 'एडवांचर' नाम का अच्छी तरह युद्ध-सज्जा से सज्जित किया और इसे हिन्द महासागर से सारे समुद्री डाकुओं को मार भगाने का काम सौंप दिया। विलियम किड इस जहाज़ का कप्तान बनाया गया। पर कालीकट पहुंचकर किड स्वयं एक समुद्री डाकू बन गया। और भी अनेक उपद्रवी अंग्रेज़ उसके दल में मिल गए। उन्होंने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के ही कई जहाज़ लूट लिए। फिर उसने एक बड़ा व्यापारी जहाज़ कदा मरचेंट लूट लिया जो अमीर मुखलिसखां का था। इसी समय डच डाकुओं ने सूरत के प्रसिद्ध व्यापारी हसनखां का एक माल से भरा हुआ जहाज़ लूट लिया, जिसमें कोई चौदह लाख के मूल्य का माल भरा था। बादशाह ने सूरत के फौजदार को आदेश दिया कि डच, फ्रेंच और अंग्रेज़ तीनों ही पर इस डकैती का दायित्व है। अतः तीनों ही राष्ट्रों के व्यापारी मिलकर चौदह लाख रुपये दें। नहीं तो सबको कैद कर लिया जाए।

अन्त में समुद्री डाकुओं के दमन का बीड़ा तीनों ही राष्ट्रों ने उठाया। भविष्य में होनेवाले नुकसान का हर्जाना करने का तीनों ने वचन दिया और इस आदेश के प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर कर दिए।

परन्तु इसके थोड़े ही दिन बाद फिर एक जहाज़ लूट लिया गया जिसपर सूरत के फौजदार ने यूरोपियन कम्पनी के सारे ही यूरोपीय और भारतीय दलालों को गिरफ्तार कर लिया। अंग्रेज़ और डचों से तीन-तीन लाख रुपये वसूल किए, तब उन्हें छोड़ा। परन्तु इसके तुरन्त बाद ही डच डकैतों ने मक्का से लौटनेवाले हज-यात्रियों का एक जहाज़ फिर लूट लिया और सब हज-यात्रियों को कैद कर लिया, जिनमें प्रसिद्ध संत नूरउलहक और फख्र-उल-इस्लाम भी थे। यह बादशाह को एक चुनौती थी। अन्त में बादशाह ने हर्जाने की शर्त रद्द करके इन कैदियों को छुड़वाया। इसी समय बूढ़ा आलमगीर मर गया। मुगल-तख्त डगमगा गया और समुद्री कुत्तों को अपने शिकार पर हाथ साफ करने की खुली छुट्टी मिल गई।

ऐसे ही वे दिन थे जब इन सफेद आततायी लुच्चों की जमात भारत में जैसे बने अपना उल्लू सीधा करने में लगी हुई थी।

२३

सन् १७५० ई० के अक्तूबर में चौबीस बरस का एक तरुण कलकत्ता आया। दस महीने रात-दिन उसने जहाज़ में यात्रा की थी। वह एक दुबला-पतला बीमार-सा युवक था। उन दिनों कलकत्ता का फोर्ट विलियम नाममात्र का ही फोर्ट था। वास्तव में वह एक साधारण इकमंज़िली इमारत थी, जिसके चारों ओर खूब फैला हुआ मैदान था, जिसमें अनेक प्रकार के वृक्ष लगे हुए थे, जिनसे कोठी ढक-सी गई थी। कोठी की गच कच्ची थी, और छतों से पानी टपकता था। इसी कोठी में उन दिनों ईस्ट इण्डिया कम्पनी का दफ्तर था। दफ्तर का व्यापार-सम्बन्धी सब काम-काज, हिसाब-किताब यहां होता था। खरीद-फरोख्त यहां नहीं होती थी। यहां केवल खरीद-फरोख्त का बही-खाता ही रहता था।

माल की ख़रीद हुगली और कासिम बाज़ार की कोठियों में होती थी और भारत से जानेवाले माल का लदान बालासोर के बन्दरगाह से होता था। वहीं विलायत के माल से भरे हुए जहाज़ उतरते भी थे। माल सीधा हुगली या कासिम बाज़ार की कोठियों में पहुंचाया जाता था, परन्तु लेखा-जोखा कलकत्ता की इस कोठी में होता था, जिसे फोर्ट विलियम कहते थे।

उन दिनों बंगाल में अंग्रेज़ों का व्यापार धड़ल्ले से चल रहा था। खांड यहां बहुत अच्छी जाति की उत्पन्न होती थी। उसकी यूरोप-भर में मांग थी। इसके बाद रुई और रेशम का उत्पादन वहां इतनी अधिकता से होता था कि इन दोनों चीज़ों का बंगाल—केवल भारत ही का नहीं सारे यूरोप का—गोदाम कहा जाता था। रुई के महीन, मोटे, सफेद, रंगीन, छपे हुए वस्त्रों का ढेर बाज़ारों में लगा रहता था और उनके खरीदारों के ठठ बाज़ार में लगे रहते थे; जिनमें बहुतायत ईस्ट इण्डिया कम्पनी के देशी और अंग्रेज़ एजेण्टों की होती थी। कम्पनी इन कपड़ों का बहुत भारी निर्यात जापान और यूरोप को करती थी। सूती कपड़ा बहुतायत से लाहौर और काबुल होता हुआ रूस तक जाता था। रेशम और रेशमी कपड़े का भी यही हाल होता था। यद्यपि बंगाल का रेशम उतना अच्छा नहीं होता था जितना

ईरान, शाम, सदा और बेरुत का। परन्तु यहां रेशम सस्ता बेहद था। उसमें से यदि अच्छा रेशम छांट लिया जाए और उसे अच्छी तरह साफ किया जाए तो उससे बहुत नफीस कपड़ा बनता था। इन दिनों सात-ग्राठ सौ आदमी ईस्ट इण्डिया कम्पनी के कासिम बाज़ार के कारखाने में काम कर रहे थे। डचों के कारखानों में भी इतने ही आदमी थे। बंगाल में शोरे की बहुत बड़ी मण्डी थी। शोरा बहुत भारी मात्रा में पटना के रास्ते यूरोप और अन्य देशों को जाता था। इसके अतिरिक्त गोंद, ग्रफीम, मोम, कस्तूरी, पीपल ग्रौर ग्रनेक ओषधियों की भी यहां ग्रच्छी मण्डी थी। घी को यूरोपियन तुच्छ नज़र से देखते थे, परन्तु घी भी बहुत मात्रा में विदेश जाता था।

बंगाल के मुरब्बे भी बहुत प्रसिद्ध थे। यूरोप के लोग इन मुरब्बों को बड़े चाव से खाते थे। पुर्तगाल के लोग मुरब्बा बनाने में एक ही थे, वे बहुत बढ़िया मुरब्बे बनाते थे। पोर्चगीज़ों का मुरब्बे का व्यापार हुगली, ढाका, मुर्शिदाबाद में खूब होता था। वे लोग चकोतरों का मुरब्बा, जिन्हें ग्रंग्रेज़ बहुत पसन्द करते थे, निहायत बढ़िया बनाते थे। फिर आम, अनन्नास, सेव, आंवला जो भारत के प्रसिद्ध फल थे, उनके मुरब्बे तथा नींबू और अदरक का मुरब्बा ऐसा बनाते थे, कि उन दिनों उनके बिना किसी शानदार यूरोपियन की टेबल अधूरी ही रह जाती थी।

गेहूं यद्यपि बंगाल में नहीं होता था, ग्रौर बंगाली चावल ही खाते थे, परन्तु गेहूं यहां बहुत सस्ता बिकता था। उससे डच, ग्रंग्रेज, और पोर्चुगीज़ बिस्कुट और पाव रोटियां बनाते थे, उनकी भी काफी खपत थी। इन सब पदार्थों के उत्पादन का प्रधान केन्द्र हुगली था। यहां बहुत-से ग्रंग्रेज़, दोगले पोर्चुगीज़ तथा ग्रन्य ईसाई, जिन्हें डचों ने अन्य उपनिवेशों से निकाल दिया था, ग्रा बसे थे ग्रौर ये ही धन्धे करते थे। इस समय केवल हुगली में आठ-नौ हज़ार यूरोपियन रहते थे तथा समूचे बंगाल में उनकी संख्या पच्चीस हज़ार थी। इनमें वेजेसोइट ग्रौर ग्रगस्टियस पादरी भी थे जो ईसाई धर्म का प्रचार करते ग्रौर ईसाइयों की संख्या बढ़ाते जा रहे थे। इन्हीं सब बातों को सुन-सुनकर ग्रौर ललचाकर भाग्योदय के सपने देखता हुआ यह तरुण ग्रंग्रेज़ इतनी लम्बी यात्रा करके कलकत्ता में ग्राया था।

इन दिनों भारत और यूरोप में फ्रेंच संघर्ष चल रहा था। भारत-स्थित फ्रेंच गवर्नर डूप्ले ने भारतीय साम्राज्य के सपने देखने आरम्भ कर दिए थे। चेष्टा भी की थी, इसीसे अंग्रेज़ों को विवश लाभ का धन्धा छोड़कर उनके विरुद्ध शस्त्र ग्रहण करना पड़ा था। इसलिए फोर्ट विलियम की इस कोठी को संगीन बनाया जा रहा था। हज़ारों मज़दूर इनकी सफीलें बना रहे थे। तथा बुर्जियों को पुख्ता करने में लगे हुए थे।

तरुण घूम-फिरकर यह सब देखता हुआ कोठी के भीतर घुस गया। वहां एक क्लर्क से उसने सेक्रेटरी का कमरा पूछा और उसके सामने जा खड़ा हुआ।

सेक्रेटरी एक बूढ़ा और चिड़चिड़े मिज़ाज का अंग्रेज़ था। वह रिश्वती और लालची भी था। पहले वह फौज में कोई अफसर था, वहां से इसी दोष में निकाल दिया गया था। परन्तु उसका यह धंधा तो यहां भी जारी था। उससे लोगों की नस दबती थी। इससे लोग रिश्वतें दे-देकर ही काम निकालते थे। उन दिनों रिश्वत और घूस-खोरी आम बात थी। इसीसे वह हर किसी गरज़ू से रुखाई से बातें करता था। मुट्ठी गर्म होने पर नर्म हो जाता था। सेक्रेटरी ने उसे घूरते हुए कहा, 'कौन हो और क्या चाहते हो?'

तरुण ने जवाब न देकर एक खत उसे पकड़ा दिया। खत मद्रास के गवर्नर का था, जिसमें उसे कोई क्लर्की की नौकरी देने की सिफारिश की गई थी। सेक्रेटरी के पास ऐसे खत आते ही रहते थे। उसने तरुण से कहा, 'तुम्हारे पास यह खत ही है या और भी कुछ है?'

'यह दोस्ती का हाथ है,' उसने हाथ बढ़ा दिया।

'मज़ेदार आदमी मालूम पड़ते हो, उस स्टूल पर बैठ जाओ। काम से फारिग होकर मैं तुम्हारे मामले पर गौर करूंगा।' यह कह कर वह फिर अपने काम में लग गया।

युवक बैठा नहीं। कोठी में घूम-फिरकर तस्वीरों, मकान की धरनों और वहां के फर्नीचर तथा वहां रखी अन्य चीज़ों को देखने लगा।

सेक्रेटरी ने नज़र उठाकर उसकी ओर देखा और कहा, 'तुमने सुना नहीं? मैंने कहा—वहां बैठ जाओ।'

'सुन भी लिया, समझ भी लिया। पर मैं बिना काम के खाली नहीं बैठ सकता।'

'मज़ेदार हो, नाम क्या है तुम्हारा ?'

'वह सब तो इस खत में लिखा है।'

'लेकिन तुम भी तो बता सकते हो।'

'मैं समझता हूं, अब मैं यहीं रहकर तुम्हारे पास काम करूंगा तो तुम सब जान लोगे।'

'मज़ेदार हो। मज़ेदार हो। मगर तुमने कहीं कुछ काम भी किया है ?'

'यह तो तुम देख ही लोगे, जब मैं काम करूंगा।'

मज़ेदार हो, लेकिन यहां तुम्हें आज्ञा-पालन और अनुशासन सीखना पड़ेगा।'

'वाहियात बात है। हम-तुम एक दोस्त की तरह मिल-जुलकर काम करेंगे।'

सेक्रेटरी हंस पड़ा। हंसते-हंसते कहा, 'भई खुदा की कसम, मज़े-दार आदमी हो। चलो, मैं तुम्हें अपने ही आफिस में क्लर्क की जगह देता हूं। क्या कल से काम पर आओगे ?'

'मैं तो अभी तैयार हूं।'

'मज़ेदार हो। मगर कल ही आओ। तुमने रहने का ठौर ठीक जमा लिया है ?'

'अभी नहीं, क्या तुम कुछ मदद नहीं कर सकते ?'

'ज़रूर करूंगा, शाम को मेरे घर आना। यार मज़ेदार आदमी हो तबीयत तुम्हारी बातों से खुश हो गई।'

'शुक्रिया,' तरुण ने सेक्रेटरी से हाथ मिलाया और चल दिया।

२४

फोर्ट विलियम से निकलकर युवक कलकत्ता के बाजारों में चक्कर काटने लगा। उन दिनों कलकत्ता का एक ही बाज़ार था, जिसके बीच में एक चौड़ी सड़क थी, जिसपर जगह-जगह गढ़े हो रहे थे और उनमें

पानी भरा था। सड़क के दोनों तरफ इकमंज़िली कच्ची दुकानें थीं, जिनमें अधिकांश की छतें खपरैल या फूस के छप्पर की थीं। दुकानों में नानवाई, मछुऐ, कसाई, मोदी, पंसारी अपनी-अपनी जिन्से लिए बैठे थे। हर दुकान पर हरे नारियलों के ढेर पड़े थे। यूरोपियन बड़े शौक से उनका पानी पीते थे। यह बाज़ार उस स्थान पर था जिसे आज धर्मतल्ला कहते हैं। वह बहुत देर तक घूमता-फिरता रहा। फिर वह धीरे-धीरे सेक्रेटरी के निवासस्थान की ओर चला। सेक्रेटरी ने स्वागत करके बिठाया और अब दोनों आदमी बेतकल्लुफी से बातें करने लगे।

सेक्रेटरी ने कहा, 'कलकत्ता में तो नये ही आए हो ?'

'कलकत्ता ही में क्यों, हिन्दुस्तान ही में नया हूं।'

'तो कलकत्ता अभी नहीं देखा ?'

'एक चक्कर बाज़ार में लगा आया हूं, जिन्स बहुत सस्ती हैं।'

'मजेदार हो, क्या कुछ सौदेबाज़ी भी कर आए ?'

'नहीं, सिर्फ घूम ही आया हूं। एक रुपये में बीस मुर्गियां बिक रही थीं।'

'बत्तखों और मुर्गाबियों का भी यही भाव है।'

'मछलियों का तो कोई भाव नहीं है। टोकरे बिक रहे थे।'

'मछलियां यहां पैदा भी तो बहुत होती हैं। समुद्र और हुगली तो है ही, लोग घर-घर एक पोखर रखते हैं, जहां मछलियां पाली जाती हैं।'

'अच्छा मोटा सूअर आठ आने को बिक रहा था।'

'इसीसे तो ये कम्बख्त पोर्चुगीज़ सूअर ही का मांस खाते हैं। वे ही क्या, अंग्रेज़ और डच भी सूअर के मांस को नमक लगाकर अपने जहाज़ों में रख लेते हैं।'

'बेशक बंगाल में भोजन की सामग्री बहुत सस्ती है।'

'क्या कहते हो ! भोजन ही क्यों, यहां औरतें सुन्दर भी हैं और सस्ती भी।'

बूड्ढे खुर्राट की रसिकता पर युवक झेंप गया। उसने जवाब नहीं दिया। केवल मुस्कराकर कहा, 'सस्ती कैसे ?'

'वे बहुत कम खाती हैं। वह भी सिर्फ तरकारी, चावल और घी

या मछली। इनपर दाम बहुत-बहुत कम लगता है।'

तरुण हंसने लगा।

बूढ़े ने कहा, 'यहां की ऊपजाऊ भूमि और औरतों की सुन्दरता देखकर सब यूरोपियन यही कहा करते हैं। बंगाल में आने की तो सैकड़ों राहें हैं, पर जाने की एक भी नहीं।'

'यहां की आबोहवा कैसी है ?'

'साल में आठ महीने ऐसी गर्मी पड़ती है कि धरती जल जाती है। जुलाई में जब गर्मी की हद हो जाती है तब वर्षा आरम्भ हो जाती है और लगातार तीन माह तक चलती रहती है। इससे गर्मी कम पड़ जाती है और धरती खेती के लायक हो जाती है। लेकिन हिन्दुस्तान का मौसम है बड़ा अजीब।'

'वह कैसे ?'

'अक्तूबर में जब वर्षा खत्म हो जाती है, तब दक्षिण समुद्र दक्षिण की ओर बहने लगता है। और उत्तर से ठंडी हवा बहती है जो चार-पांच महीने तक एक ही ओर बहती रहती है। इसके बाद दो महीने वह अनिश्चित चलती है। इसके बाद समुद्र उत्तर की ओर बहने लगता है और दक्षिणी हवा चलने लगती है। चार-पांच महीने यही हाल रहता है और फिर दो महीने हवा निश्चित चलती है। इन दो महीने समुद्र-यात्रा में बहुत तकलीफ होती है। और जब दक्षिण हवा चलती हो तब यात्रा सुहावनी और सुगम हो जाती है। इसीलिए भारतवासी बड़ी-बड़ी समुद्र-यात्रा कर लेते हैं।'

'क्या भारतवासी भी अच्छे नाविक हैं ?'

'मज़ेदार हो। अजी, वे बंगाल से तनासरम, कोचीन, मलाया, स्याम, मेडागास्कर की ओर अथवा मछलीपट्टम, सरनद्वीप, मालद्वीप, मुखा, बन्दर अत्वास तक अपने जहाज़ ले जाते हैं।'

'पर कभी तो उन्हें विपरीत वायु के कारण विपत्ति उठानी पड़ती होगी ?'

'उन्हें ही क्यों, यूरोपियन भी कठिनाई में फंस जाते हैं, खासकर दक्षिणी हवा चलने के बाद दो महीने तक जहाज़ों का चलना बहुत कठिन पड़ जाता है। इससे बढ़कर भयंकर कोई ऋतु नहीं होती। इस समय समुद्र के शान्त होने पर भी किनारों पर पचास-साठ मील

तक आंधी चलती रहती है। इसीसे वर्षा ऋतु समाप्त होते ही हम सूरत, मछलीपट्टम के बंदरों पर लंगर डालते हैं। क्योंकि जहाजों के भूमि से टकरा जाने का भय रहता है। मगर एक नसीहत मैं तुम्हें दूंगा।'

'ज़रूर दीजिए।'

'हमेशा इस बात का ध्यान रखना कि दस-बारह नौकर छांटकर अपने पास रखना। इस मुल्क में देशी नौकर बहुत सस्ते मिल जाते हैं, पर खुदा की मार उनपर, काम में बहुत सुस्त होते हैं, और बेईमान परले सिरे के। तुम खयाल रखना कि वे 'पंच' बनाकर न पीने पाएं और तुम भी दोस्त, देसी औरतों और शराब तथा तमाखू बेचनेवालों से दूर रहना। लेकिन अंगूरी शराब या कच्ची शीराज़ी पीने में हर्ज नहीं है। यहां की जलवायु में उससे फायदा ही होता है।'

'आपने बहुत काम की बातें बताईं महाशय। धन्यवाद। अब आप मेरे डेरे की कुछ व्यवस्था कर दें तो बड़ी कृपा हो।'

'मज़ेदार हो दोस्त। व्यवस्था हो गई। मेरा आधा बंगला खाली है। उसीमें आ जाओ। मज़ा रहेगा। गप्पें उड़ेंगी। किराया बहुत कम है। मछलियों और नारियलों के लिए कहीं जाना ही न पड़ेगा।'

'धन्यवाद महाशय! मैं कल डेरा-डंडा उठा लाऊंगा, अब नमस्कार।'

'लेकिन दोस्त, तुम्हारा नाम?'

'क्या आपने पढ़ा नहीं?'

'मज़ेदार हो। अब तुम्हीं बता दो, मैं तो भूल गया।'

'मैं वारेन हेस्टिंग्ज़ हूं, नमस्कार।'

'नमस्कार मिस्टर हेस्टिंग्ज़।'

सेक्रेटरी ने हाथ मिलाया, तरुण चल दिया।

२५

कासिम बाज़ार ध्वस्त हो चुका। उसका नाम शेष रह गया है। पर उन दिनों कासिम बाज़ार बंगाल का सबसे अधिक गुलज़ार शहर

था। यहां के तंग बाजार रात-दिन देशांतरों के मनुष्यों से भरे रहते थे। भिन्न-भिन्न वेशभूषा, भिन्न-भिन्न भाषा, हिंदुस्तानी, बंगाली, डच, पोर्चुगीज़, अंग्रेज़, फ्रेंच, आरमीनियन, भोटिए व्यापारी कोई बेचने और कोई खरीदने के लिए बाज़ार में सूर्योदय से सूर्यास्त तक चक्कर लगाते रहते थे। इन देश-विदेश के व्यापारियों की गगन-स्पर्शी अट्टालिकाएं, गंगा के किनारे पर अनगिनत जहाज़, बिक्री के लिए आए हुए माल के पहाड़ जैसे ढेर, नदी-तट पर मीलों तक गोदामों की पंक्ति, दर्जनों रेशम के कारखाने, फैक्टरियां, जुलाहों की लम्बी-लम्बी कपड़ों की दुकानों की कतारें, दुकानों के सामने चित्र-विचित्र रंग-बिरंगे लटकते हुए कपड़े, भांति-भांति के छींट के डिज़ाइन कासिम बाज़ार की शोभा का विस्तार करते रहते थे। काम-काजी लोगों की भीड़ में व्यस्त कर्कश आवाज़ से सौदा-सुलफ करते, लड़ते-झगड़ते दलालों की चखचख से कान बहरे होते थे। व्यापारियों के हथकण्डे, लटके, चुटकुले रोते आदमी को हंसाते और उड़ते पंछी को फंसाते थे। कासिम बाज़ार गंगा और जलंगी नदी के संगम पर था। ये दोनों नदियां दो दिशाओं से इस सम्पन्न नगरी को अंक में लपेटती हुई-सी प्रतीत होती थीं। गंगा को वहां हुगली कहते थे। यह समृद्ध नगर मुर्शिदाबाद से एक ही मील के अन्तर पर बसा हुआ था। मुर्शिदाबाद बंगाल के नवाबों की राजधानी था और कासिम बाज़ार फिरंगियों की क्रीड़ास्थली।

कासिम बाज़ार में अंग्रेज़ों की एक कोठी थी। कोठी गंगा के किनारे पर थी। उसे अंग्रेज फैक्टरी कहते थे। उस दिनों यूरोपियन बनिये व्यापार के प्रधान नगरों में इन फैक्टरियों की स्थापना करते थे। उनमें विलायत से आया हुआ माल बेचा जाता तथा भारतीय पैदावार अथवा वहां की बनी हुई वस्तु विलायत भेजने की जांच की जाती थी। इन फैक्टरियों का प्रबन्ध एक प्रेसीडेण्ट और उसके अधीन एक कौंसिल द्वारा होता था। ये फैक्टरियां प्रायः समुद्र या नदी-तट पर होती थीं और उनकी रक्षा के लिए शस्त्रधारी रक्षक नियत रहते थे। इन फैक्टरियों की सीमा में यहां के अध्यक्ष का ही अबाध अधिकार होता था। राज्य उनके मामलों में कोई दखल नहीं दे सकता था।

इन दिनों दक्षिण में कर्नाटक के उत्तराधिकार का झगड़ा चल

रहा था और क्लाइव की रण-दक्षता ने फ्रेंचों की भारतीय साम्राज्य की चिरअभिलाषा पर पानी फेर दिया था। परन्तु अभी इस झगड़े का असर बंगाल तक नहीं पहुंचा था। बंगाल में सभी विदेशी मिल-जुलकर व्यापार, लेन-देन करते थे। बंगाल की अंग्रेज़ी कोठियों में इस समय केवल कम्पनी की कोठियों के बहीखाते तथा माल के बीजक ही होते थे, जिनपर कोठी के अध्यक्ष से लेकर छोटे-छोटे कर्मचारी तक का पूरा ध्यान रहता था।

गर्मी बड़ी सख्त थी। उन दिनों गर्मी के दिनों में कोठी के दफ्तर का सब काम-काज, लेन-देन, बहीवट सिर्फ दोपहर तक हो जाता था। कम्पनी के गुमाश्ते, कर्मचारी जहां बैठकर कोठी का काम-काज देखते थे, वह कच्ची ईंटों की दीवारों पर खड़ा एक हालनुमा बड़ा कमरा था। इस समय अंग्रेज़ी फैक्टरी में दो सौ आदमी काम करते थे। इनमें सिपाही ही अधिक थे। इसी कमरे के एक कोने में बैठा हुआ वारेन हेस्टिंग्ज़ मेज़ पर झुका अपने आगे बही-खाता रखे हिसाब में उलझा हुआ था। उसका रंग-ढंग दूसरे साथियों से निराला था। कलकत्ता आने के कुछ दिन बाद ही उसकी बदली कासिम बाज़ार की कोठी में हो गई थी और लोग आपस में हंसी-मज़ाक, गपशप बीच-बीच में करते जाते थे, परन्तु वह चुपचाप बैठा अपने काम में लगा था।

इतने ही में बैरा ने आकर उसे सलाम किया और कहा 'साहब, बड़े साहब ने आपको सलाम बोला है, वे अपनी कोठी के पिछवाड़े-वाले लान में आपकी प्रतिक्षा कर रहे हैं। बखुदा, अभी तशरीफ ले जाइए। साहब परेशान नज़र आ रहे हैं।'

हेस्टिंग्ज़ ने किताब बन्द करके जेब में रखी और उसी समय साहब से मिलने उनकी कोठी की ओर चल दिया।

२६

वाटसन साहब, कासिम बाज़ार की कोठी के प्रधान गुमाश्ते और मैनेजर थे। उसकी उम्र पचास को पार कर गई थी। चेहरा उनका गम्भीर था और चांद गंजी थी। इस समय उनके चेहरे पर हवाइयां

उड़ रही थीं और वे जल्दी-जल्दी बदहवासी से चहलकदमी कर रहे थे। हेस्टिंग्ज़ के पहुंचते ही वे लपककर उसके पास जा पहुंचे। उन्होंने उसके कोट का कालर पकड़कर कहा, 'क्या मैं तुमपर भरोसा कर सकता हूं वारेन ?'

'मैं समझता हूं कि इसके लिए आपको कभी पछताना न पड़ेगा।'

'इसीलिए मैंने तुम्हींको चुना है।'

'मामला क्या है सर ?'

'बहुत गम्भीर। नवाब बदज़ाती करने पर उतर आया है।'

'क्या कोई नई बात हुई है ?'

'देखो, ये दोनों खत मुझे अभी मिले हैं। एक नवाब का है, दूसरा कलकत्ता के गवर्नर मि० ड्रेक का है।' उसने दोनों पत्र हेस्टिंग्ज़ को दे दिए। उसने दोनों पत्र पढ़े। ड्रक ने लिखा था कि नवाब ने अल्टीमेटम दिया है कि यदि पच्चीस तारीख तक फोर्ट विलियम न ढहा दिया गया तो कलकत्ता पर चढ़ाई करके किला ढहा दिया जाएगा और सब अंग्रेज मार डाले जाएंगे। दूसरे खत में नवाब ने वाटसन को लिखा था कि किशनदास को यदि २५ तारीख तक नवाब के हवाले न किया जाएगा तो कासिम बाज़ार की फैक्टरी को लूटकर उसमें आग लगा दी जाएगी।'

'पच्चीस तारीख तो आज ही है।'

'हां, आज ही।'

'फोर्ट विलियम तो ढहाया नहीं जा सकता।'

'कैसे ढहाया जा सकता है ? देखते नहीं, फ्रेंचों की तमाम फौज पांडीचेरी से आ-आकर चन्द्रनगर में इकट्ठी होती जा रही है। न जाने कब वे कलकत्ता पर टूट पड़ें।'

'नवाब से यह बात नहीं कही गई ?'

'सिराज को हम नवाब ही नहीं मानते। ऑनरेबुल कम्पनी की कौंसिल ने उसे नवाब स्वीकार ही नहीं किया है। हमारा सम्बन्ध तो सीधा दिल्ली के बादशाह से है।'

'लेकिन बंगाल का नवाब तो नाम के लिए दिल्ली के अधीन है। वास्तव में वह तो यहां का स्वाधीन शासक ही है।'

'फिर भी मुगल-साम्राज्य अभी अखण्ड है। अब तो हमें देखना

यह है कि बंगाल का शासक यदि दिल्ली से स्वतन्त्र ही है, तो वह ऑनरेबुल ईस्ट इंडिया कम्पनी है या वह दब्बू छोकरा, जो अपने को नवाब कहता है। इसलिए जब नवाब ने अपना दूत कलकत्ता इस आशय का पत्र लेकर भेजा था कि किला ढहा दिया जाए और खाई भर दी जाए, तब ड्रेक ने जवाब दिया था, हम ऐसा करने को तैयार हैं, पर यह खाई मुसलमानों के सिरों से भरी जाएगी।'

'लेकिन क्या उसकी ताकतों का हम मुकाबला कर सकते हैं ? अब भी उसके पास भारी फौजें हैं। यदि लड़ाई हुई तो उसके सामने हमारी पेश जानी मुश्किल है।'

'मुश्किल को हम आसान करेंगे मेरे नवयुवक मित्र। यहां हमको ताकत का संतुलन नहीं करना है, हमें यह देखना है कि मुगल-साम्राज्य सोने और चांदी से भरपूर है। वह साम्राज्य सदा से निर्बल और रक्षारहित रहा है। यह आश्चर्य की बात है कि सामुद्रिक शक्ति रखने-वाले किसी यूरोपियन राजा ने बंगाल को जीतने की अभी तक कोशिश नहीं की। यहां तो एक ही मार में सोने, हीरे, मोती का इतना भारी ढेर प्राप्त किया जा सकता है कि जिसके सामने ब्राजील और पेरू की खानें मात पड़ जाएंगी। तुम उनकी फौजों के सिपाहियों की गिनती करते हो, मगर यह भी तुमने देखा कि वे अपने मुसाहिबों और शराब के किस कदर गुलाम हैं।'

'लेकिन यह नौजवान नवाब तो जागरूक मालूम पड़ता है, जो हमारे किलों और फौजकशी पर चौकन्ना हो गया है।'

'बेशक, वह नहीं चाहता कि हम किले बनाएं या फौज रखें। उसे डर है कि यदि वह इन बातों से बेफिक्र रहा तो मुल्क खो बैठेगा। बूढ़ा नवाब अलीवर्दीखां बड़ा घाघ था। उसने उसे हमारी कूटनीति से आगाह कर दिया है। पर हम जानते हैं कि वह मूर्ख, हठी और अदूरदर्शी है। राजनीति वह नहीं जानता। उसमें कोई गुण नहीं है। जो हैं, उन्हें काम में लाने की उसमें शक्ति नहीं है। फिर अभी तो उसकी मूंछें भी नहीं निकलीं।'

'परन्तु उसके दरबारी, उमरा, सलाहाकार और वजीर भी तो हैं।'

'परन्तु वह परिस्थितियों का शिकार बनेगा। वह इस बात से बेखबर है कि उसे कैसे भयानक और शक्तिशाली दुश्मनों का सामना

करना है। उसका जोश तो महज़ बचपन की नादानी है।'

'ख़ैर, यह किशनदास का मामला क्या है ?'

'जैसाकि तुम कहते हो, हम फौजी ताकत में उसका मुकाबला नहीं कर सकते। महज़ अपनी रक्षा तथा नवाब पर दबाव डालने की योग्यता बढ़ाने के लिए किलों को दृढ़ कर रहे हैं तथा फौजें बढ़ा रहे हैं। परन्तु हमारी दूसरी कार्यवाहियां भी जारी हैं। तुम देखते हो हम व्यापारी हैं। कम्पनी बहादुर का बंगाल में करोड़ों का व्यापार है। हमारे गहरे सम्बन्ध मुल्क के बड़े-बड़े व्यापारियों से हैं। उनके भी भारी-भारी हित हमपर निहित हैं। अब तक तो ख़ैर व्यापार में लाभ उठाने ही का मामला था, परन्तु अब तो हमारी नज़र मुल्क की हुकूमत पर है। अब नवाब के रंग को देखकर हमें अपनी कार्यवाहियों को तेज़ करना पड़ा है। हमने नवाब के वज़ीरों और यहां के प्रभावशाली व्यापारियों को अपने साथ मिला लिया है। वे गुप्त रूप से भीतर ही भीतर हमारे साथी और सहायक हैं। इन लोगों में दरबारी मुसलमान तो वे लोग हैं जो नवाब को गद्दी से उतारकर नवाबी मसनद पर अधिकार करना चाहते हैं, और हिन्दू व्यापारी वे हैं जिन्हें हमने विश्वास दिलाया है कि यदि शक्ति हमारे हाथ में आ गई तो उन्हें बेहद इनाम और मुनाफा मिलेगा। किशनदास ऐसा ही आदमी है। वह मुर्शिदाबाद का करोड़पति सेठ है। वह हमारा पक्का दोस्त और मददगार है। नवाब ने हमारी दोस्ती के जुर्म में ही उसका घरबार लूट लिया है तथा परिवार के सब लोगों को कैद कर लिया है। केवल वह भागकर हमारी शरण आया है। उसे हम कैसे नवाब के सुपुर्द कर सकते हैं ?'

'बेशक नहीं कर सकते। ख़ैर, अब मुझे क्या हुक्म है ?'

'कलकत्ता में मैंने मि० ड्रेक के पास खबर कर दी है कि सावधान रहें। हमले का खतरा है। इधर मैं भी तैयार हूं। अब तुम इतना करो कि मुर्शिदाबाद जाओ और देखो कि हकीकत में वहां क्या तैयारी हो रही है। सम्भव हो तो नवाब के इरादे का भी पता लगाओ और जितना जल्द हो मुझे लौटकर खबर दो। तुम यहां अभी अपरिचित हो। अतः किसीको कानोंकान भी खबर तुम्हारे आने-जाने की न पड़ेगी। परन्तु तुम घोड़े पर नहीं, पैदल जाओ, जिससे किसीकी

नज़र तुमपर न पड़े। मैं समझता हूं कि मुर्शिदाबाद में तुम्हें कोई नहीं जानता।'

'जी नहीं।'

'इसीलिए मैंने तुम्हें चुना है। क्या मैं तुमपर विश्वास करूं?'

'अवश्य महाशय।'

वाटसन साहब ने कुछ गुप्त आदेश दिए। कुछ पत्र दिए, फिर कहा, 'तो बस अभी चल दो। सिर्फ एक मील ही तो है।'

वारेन तुरन्त ही तेज़ कदमों से उसी दम चल खड़ा हुआ।

२७

मुर्शिदाबाद बंगाल, बिहार और उड़ीसा के सूबेदारों नवाबों की राजधानी थी। राजधानी बंगाल में अपनी वही शान-शौकत रखती थी, जो उत्तर में आगरा और दिल्ली की थी। कासिम बाज़ार की अपेक्षा मुर्शिदाबाद पुराना शहर था। नवाबों के यहां बड़े-बड़े महल-प्रासाद थे, जिनमें नवाबी ज़नानखाने रहते थे। बड़े-बड़े दफ्तर थे, जहां हज़ारों अमले काम करते थे। बड़े-बड़े महकमों के सब दफ्तर और फौजदारी अदालतें मुर्शिदाबाद ही में थीं।

वारेन यद्यपि यहां अब तक नहीं आया था और गली-कूचों से भी वाकिफ न था फिर भी वह यहां दो-चार आदमियों के नाम लाया था। इनमें एकाध को तो वह स्वयं जानता था, बाकी के नाम वाटसन ने दिए थे। पहले उसने एक चक्कर सारे शहर का लगाया। घूमता-फिरता वह राजमहल के फाटक पर भी पहुंचा। शहर में भीड़भाड़ भी इतनी थी कि कंधे छिलते थे। यहां आकर उसने देखा, फौजें सफ बांधकर तैयार हो रही हैं। हाथी, घोड़े, प्यादों के दल पंक्तिबद्ध खड़े हैं। अफसर सेना की व्यवस्था कर रहे हैं। इतनी भारी सेना देखकर उसका कलेजा दहल उठा। वह बड़ी देर तक सेना के इर्द-गिर्द चक्कर लगाता रहा। किसीने उसे टोका भी नहीं और वह भी किसीसे नहीं बोला। इस वक्त आकाश में बादल घिर आए थे। अब बूंदा-बांदी भी होने लगी थी। वारेन के वस्त्र भीगने लगे तब उसे आश्रय की

आवश्यकता हुई। उसने नोटबुक निकालकर एक पत्र निकाला और गली-कूचों को पार करता हुआ नगर के किनारे पर एक अंधेरी गली में जा घुसा। गली में सफेद पुता एक दुमंज़िला मकान था। और मकान सब कच्चे थे, यही एक पक्का था। घर के द्वार पर पहुंचकर उसने द्वार खटखटाया। एक वृद्ध पुरुष ने आकर द्वार खोला। साहब को देखकर बोला, 'तुम कौन हो और मुझसे तुम्हारा क्या प्रयोजन है ?'

'क्या आप ही मोहनलाल घोष हैं ?'

'हां, मैं ही हूं।'

'तो मैं आप ही के पास आया हूं। आप यह निशान तो पहचानते ही होंगे ?' उसने डायरी खोलकर एक निशान दिखा दिया। वृद्ध ने भयभीत हो इधर-उधर देखा। फिर आहिस्ता से कहा, 'भीतर आओ।'

वारेन के भीतर घुसने पर उसने द्वार की सांकल चढ़ा ली।

स्वस्थ होकर बैठने पर घोष बाबू ने कहा, 'कहो, क्या काम है ?'

'काम मेरा नहीं, कम्पनी बहादुर का है।'

'वही कहो।'

'यह शहर में धूमधाम कैसी है ? फौज की तैयारियां कैसी हैं ?'

'फौज कलकत्ता जा रही है।'

'मगर किसलिए ?'

'आज पचीस तारीख है न।'

'तो इससे क्या ?'

'क्या तुम नहीं जानते ?'

'नवाब ने अल्टीमेटम दिया था। यही न ?'

'हां, मैं कलकत्ता सूचना भेज चुका हूं।'

'कासिम बाजार क्यों नहीं भेजी ?'

'खतरा था। नवाब मुझपर शक करने लगे हैं।'

'क्या कासिम बाज़ार पर भी फौज भेजी जाएगी।'

'कह नहीं सकता। हो सकता है।'

'बापूदेव शास्त्री का घर कहां है ?'

'यहां से काफी दूर है।'

'तो चलिए, मुझे वहां पहुंचा दीजिए, जल्दी कीजिए।'

घोष बाबू कंधे पर शाल रखकर उठ खड़े हुए। दोनों चुपचाप चल दिए। बापूदेव शास्त्री मुर्शिदाबाद के प्रसिद्ध विद्वान और ज्योतिषी थे। नवाब अलीवर्दीखां उन्हें बहुत मानते थे। बंगाल में उनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। वारेन ने उन्हें वाटसन का पत्र दिया। पत्र पढ़कर वे वारेन को एकान्त में ले गए। वहां उन्होंने देर तक उससे बातें कीं। जब वारेन वहां से निकला तो सन्ध्या होने में देर थी तथा बूंदा-बांदी अब भी हो रही थी।

वारेन ने घोष से कहा, 'घोष महाशय, आपको अभी मेरे साथ कासिम बाज़ार चलना होगा।'

'अच्छी बात है, मैं चलता हूं।'

'तो आप तुरन्त दो घोड़ों का बन्दोबस्त कीजिए। हमें तुरन्त ही वहां पहुंचना चाहिए।'

'मैं एक घोड़ा तुम्हें अभी दे सकता हूं। तुम उसे लेकर चलो, मैं पीछे आता हूं।'

दोनों तेज़ी से एक गली में घुस गए। वहां से घोड़े पर सवार होकर वारेन तेज़ी से कासिम बाज़ार की ओर सरपट दौड़ा। चलती बार उसने घोष महाशय से कहा, 'आप मुझे कान्त बाबू के मकान पर मिलिए, घोष महाशय!'

२८

जब वारेन सरपट घोड़ा दौड़ाता हुआ कासिम बाज़ार पहुंचा तो शाम हो चुकी थी। चिराग जल गए थे। नदी-तट की अट्टालिकाओं में से जलती दीपावली की कांपती हुई प्रतिच्छाया बड़ी मनोहर लग रही थी। अंग्रेज़ी बैण्ड बज रहा था। पार्श्ववर्ती हिन्दुस्तानी बस्तियों में बसनेवाले जुलाहों और वैष्णवों की खंजरी और करताल की ध्वनि वातावरण को मुखरित कर रही थी। सबकी मिली-जुली आवाज़ कानों को बड़ी प्रिय लग रही थी।

बहुत-से साहब लोग हवाखोरी के लिए कोठियों से बाहर निकले हुए थे। वे दो-दो, चार-चार की संख्या में टोलियां बनाए दोस्तों से

हंसी-ठिठोली करते हुए नदी की ओर जा रहे थे। बहुत-से अफसर घोड़ों, पालकियों, फीनसों आदि में बैठकर बगीचों में जा रहे थे। बहुत-से किश्तियों पर सवार हो अपनी-अपनी मेमों के साथ गंगा पर ठंडी हवा का आनन्द ले रहे थे। धनी-अमीर घोड़ों की जोड़ियों पर या चौकड़ी में घूमने निकले थे।

वारेन तावड़तोड़ अंग्रेज़ी फैक्टरी की ओर दौड़ा जा रहा था। इतने में ही उसने दूर से बन्दूकों का शब्द सुना। लोगों ने कहा कि अंग्रेज़ी फैक्टरी नवाब की सेना ने घेर ली है और दोनों ओर से गोलियों की घोर वर्षा हो रही है। बहुत-से अंग्रेज और हिन्दुस्तानी गुमाश्ते चीखते-चिल्लाते बदहवास भागे चले आ रहे हैं। किसीको किसीका ध्यान ही नहीं है। वारेन वहीं अटककर एक बगल आड़ में खड़ा होकर सोचने लगा कि वह क्या करे। पर उसकी समझ में कुछ भी नहीं आया। फैक्टरी में घुसना तो असम्भव ही था। अन्त में उसने बापूदेव के परामर्श पर अमल करने का निश्चय किया और घोड़े की बाग कान्तानाथ की हवेली की ओर मोड़ी, परन्तु तिलंगों ने उसे देख लिया। बहुत-से तिलंगे शोर मचाते और गोलियां दागते उसके पीछे दौड़े। अब भागने में जान-जोखिम समझ वारेन ने घोड़ा रोक लिया। तिलंगों ने उसे चारों ओर से घेरकर उसके हथियार और घोड़ा छीन लिया और उसे रस्सियों से बांधकर धकेलते हुए ले चले। उस भीड़-भड़क्के में धक्के खाते हुए उसने देखा, घोष महाशय भी साथ ही साथ चले आ रहे हैं। अवसर पाकर उसने घोष बाबू से कहा, 'कान्त बाबू को खबर कर दीजिए।'

मतलब समझकर घोष बाबू भीड़ से छिटककर एक ओर चल दिए। तिलंगों ने वारेन को एक कोठरी में ले जाकर बन्द कर दिया। धीरे-धीरे और भी बहुत-से अंग्रेज़ रस्सियों से बंधे हुए वहां आने लगे। उनमें वाटसन साहब भी थे।

२९

सब कैदियों को मुर्शिदाबाद ले जाकर शाही कैदखाने में बन्द कर

दिया गया। वहां यह भी खबर पहुंची की कलकता पर भी नवाब ने आक्रमण किया था। वहां के गवर्नर मि० ड्रेक और कमाण्डर ने भागकर हुगली और दामोदर के संगम पर स्थित फेल्टा द्वीप में आश्रय लिया। फोर्ट विलियम पर नवाब ने कब्ज़ा कर लिया। वहां के अंग्रेज़ और हिन्दुस्तानी कर्मचारियों को कैद कर दिया गया। कैदियों में हालवेल साहब भी थे।

कांत बाबू के साथ वारेन का पहले ही से परिचय था। उन्होंने घोष बाबू के साथ आकर जेल में कैदियों से बातचीत की। वाटसन साहब ने कहा, 'हमारे छुटकारे की बात आप छोड़िए। यह काम मुश्किल भी है तथा इसमें खर्च भी बहुत होगा। लाभ भी उससे कुछ नहीं है। आप वारेन को किसी तरह छुड़ा लीजिए।' कान्त बाबू ने बहुत दौड़-धूप की, खर्चा भी बहुत किया। अन्त में एक डच व्यापारी की जमानत पर वारेन की जेल से मुक्ति हो गई।' वारेन नया आदमी था। उसे कोई नहीं जानता था। जेल से बाहर आने से पहले वाटसन साहब ने कहा, 'तुम यहीं मुर्शिदाबाद में चक्कर काटते रहना तथा अवसर पाते ही हमें सब घटनाओं की सूचना देते रहना। कान्त बाबू और घोष बाबू तुम्हारो सहायता करेंगे और तुम्हें सब सुविधाएं मिलती रहेंगी। साथ ही तुम फेल्टा में बैठे हुए गवर्नर से भी सम्पर्क स्थापित करना और उनकी गतिविधि की सूचनाएं भी हमें देते रहना। मुर्शिदाबाद और कलकत्ता में घटनेवाली घटनाओं की भी सूचना उन तक पहुंचाते रहना। खबरदार रहना।'

सब बातों को सोच-समझकर वारेन बाहर आया और मुर्शिदाबाद में कान्त बाबू के घर में गुप्त रूप से रहने लगा। कान्त बाबू नहीं चाहते थे कि उनका अंग्रेज़ों से सम्पर्क प्रकट हो जाए। इसके गुप्त रहने ही में भलाई थी। परन्तु कान्त बाबू ने साहस का परिचय दिया। वारेन को अपने घर में शरण दी। आनेवाली विपत्तियों की परवाह न की।

इस समय वारेन के पास एक फूटी कौड़ी न थी। कान्त बाबू ने उसे रुपये भी दिए। कासिम बाज़ार में अंग्रेजों की कोठी के पास ही कान्त बाबू के पिता की दुकान थी। कोठी के आदमियों से उनका परिचय और लेन-देन था। कान्त बाबू उठती उम्र के तरुण थे। वे

बुद्धिमान भी थे और साहसी भी। वे उन दिनों अंग्रेज़ी कोठी में दलाली करते थे। वारेन से दो-चार बार उनका काम पड़ा था। इससे जान-पहचान घनिष्ठ हो गई थी। इस बार जो कान्त बाबू ने उन्हें रिहा कराकर और अपने घर रखकर तथा धन से सहायता कर उपकृत किया, इससे वारेन कान्त बाबू के अतिशय उपकृत हो गए। फिर उनके निकट सहवास तथा उनकी योग्यता से प्रभावित होकर वे परस्पर अभिन्न मित्र हो गए।

मुर्शिदाबाद जेल से रिहा होकर वारेन मुर्शिदाबाद और कासिम बाज़ार में बिना रोक-टोक घूमा करते थे। ज़मानत पर छूटा हुआ कैदी समझकर उन्हें कोई नहीं रोकता था। वे सब जगह आ-जा सकते थे। मुर्शिदाबाद में नवाब के 'खलीते' नित्य आते थे। उन 'खलीतों' के ज़रिये वारेन को नवाब के राई-रत्ती हालात मिल जाते थे, जिन्हें वे वाटसन और मि० ड्रेक के पास नित्य पहुंचाते रहते थे।

उन दिनों हुगली, मुर्शिदाबाद और कासिम बाजार में अंग्रेज़ों की पकड़-धकड़ चल रही थी। पर वारेन को कोई न छूता था। ज़मानती रिहाई का परवाना दिखाते ही उन्हें छुट्टी मिल जाती थी। उन्होंने जान हथेली पर रखकर फेल्टा द्वीप की यात्रा नाव में अकेले ही की। यह बड़े साहस का काम था। पर किसी साथी के ले जाने से भेद खुलता था। इससे वह अकेले ही गए और मुर्शिदाबाद तथा कलकत्ता के सब हाल-चाल मि० ड्रेक को सुनाए। उनकी हिदायतें लीं। ड्रेक ने उनसे सन्तुष्ट होकर अनुरोध किया कि वे इस कठिन समय में अंग्रेज़ों के भेदिये रहकर उनकी सेवा करें। वारेन ने इसे स्वीकार किया और फिर वे दूसरे-तीसरे दिन उनके पास जाने लगे। अब घण्टों मि० ड्रेक से उनकी बातें होती रहतीं। वारेन और कान्त बाबू के उद्योग से फेल्टा द्वीप में एक बाज़ार भी लगाने की नवाब ने अनुमति दे दी, जिससे गवर्नर ड्रेक साहब और उनके साथियों को खाने-पीने की आवश्यक सामग्री मिलने लगी। इस समय वारेन ने जिस बुद्धिमत्ता, कार्यपटुता और कौशल का परिचय दिया, उसके प्रभाव से ये इतने विश्वासपात्र हो गए कि गवर्नर ने अपनी कौंसिल में वारेन को भी शामिल कर लिया और अब वे मुर्शिदाबाद से एकदम भागकर फेल्टा ही में रहने लगे। भाग्योदय का यह उनका पहला कदम था।

सन् १७४२ में फ्रेंच सेनापति ने भारतीय राजाओं को शतरंज के मुहरे बनाकर राजनीति की शतरंज खेलनी आरम्भ की। उन्हीं दिनों ईस्ट इंडिया कम्पनी का प्रभाव भी तेज़ी से बढ़ रहा था। इस समय यूरोप में एंग्लो-फ्रेंच युद्ध चल रहा था। इससे दोनों शक्तियां टकरा गईं। इस टक्कर से भारत में प्रमुखता प्राप्त करने की प्रतिस्पर्द्धा ने उग्र रूप धारण कर लिया। इस समय डूप्ले पांडीचेरी का फ्रेंच गवर्नर था। वह असाधारण प्रतिभाशाली था। दिल्ली में इस समय मुहम्मदशाह रंगीले की रंगरेलियां अस्ताचल को जा रही थीं। नादिरशाह ने डगमगाते मुगल तख्त में ऐसी करारी ठोकर मारी थी कि उसके जोड़-जोड़ हिल चुके थे। सन् १७५० में डूप्ले ने ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर दी कि भारत के शासकों पर फ्रांस की शक्ति का आतंक बैठ गया और यह समझा जाने लगा कि फ्रांस की सेनाएं सारे देश पर छा जाएंगी। डूप्ले के मिज़ाज आसमान पर थे। पांडीचेरी में बड़ा भारी विजयोत्सव मनाया गया। मुज़फ्फरजंग स्वयं डूप्ले के हाथों से राजतिलक कराने के लिए विजयोत्सव में सम्मिलित हुआ। डूप्ले कृष्णा और कुमारी अन्तरीप के मध्यवर्ती प्रदेश का गवर्नर बना दिया गया।

इन दिनों मद्रास की अंग्रेज़ी फैक्टरी में एक उदासीन-सा युवक क्लर्की का काम कर रहा था। पर क्लर्की के काम में उसका मन नहीं लगता था। इसके अतिरिक्त वह सबसे लड़ाई मोल लेता रहता था। इसलिए दफ्तर में इसका कोई दोस्त-हमदर्द भी न था। उसको अफसर भी पसंद नहीं करते थे। वह उनसे भी उलझ चुका था। उन दिनों मद्रास का फोर्ट सेंट डेविट अंग्रेज़ों का केन्द्र था।

जब मद्रास फैक्टरी में अंग्रेजों के हारने के समाचारों से खलबली फैली हुई थी, तब क्लाइव ने अपनी सेवाएं अंग्रेज़ी सेना के अफसर के सम्मुख पेश कीं। उसने कहा, 'यदि अवसर दिया जाए तो मैं कुछ करके दिखा सकता हूं।' अफसर एक ऐसे ही साहसी की खोज में था। उसने उसे दो सौ अंग्रेज़ और तीन सौ हिन्दुस्तानी सिपाहियों की टुकड़ी देकर अर्काट भेज दिया। उसने अपने से कई गुना अधिक शत्रुओं को

दलित करके अर्काट जीत लिया। इससे अंग्रेज़ हर्ष से उछल पड़े। यह अप्रत्याशित विजय थी। इसके बाद ही कलकत्ता की पराजय और अपमान की खबर सुनकर उसने कलकत्ता जाने की अनुमति मांगी। जनरल ने उसे सारी स्थलसेना का कमाण्डर बनाकर बंगाल को रवाना कर दिया। क्लाइव ने कलकत्ता पहुंचकर आनन-फानन वहां के किलेदार मानिकचन्द को वहां से खदेड़ दिया और किले पर अंग्रेजी झंडा फहरा दिया। इस कार्यवाही में लोहे ने उतना काम नहीं किया जितना सोने ने। नवाब डर गया और उसने क्लाइव से सन्धि करके कलकत्ता पर अंग्रेज़ों का प्रभुत्व स्वीकार कर लिया और उन्हें अपना सिक्का ढालने की भी अनुमति दे दी।

परन्तु क्लाइव के हौसले कुछ और ही थे। वह अब बंगाल का वारा-न्यारा करने पर तुला था और यह सन्धि उसने केवल नवाब के विरुद्ध अपनी तैयारी के लिए की थी। क्लाइव इस कूटनीति का केन्द्र था और सिराजुद्दौला उसका शिकार।

इस समय यहां उसकी दो बाधाएं थीं : एक फ्रेंच, दूसरा नवाब। फ्रेंचों का अड्डा चन्द्रनगर में था। क्लाइव ने दोनों को अलग-अलग नष्ट करने का निश्चय किया। नवाब को तो उसने मीठे शब्दों की लोरियों में सुला दिया और कलकत्ता पर अधिकार करने के एक ही महीने बाद चंद्रनगर पर आक्रमण कर दिया। नवाब दूर खड़ा मुंह ताकता रहा। क्लाइव ने चंद्रनगर पर कब्ज़ा कर लिया।

नवाब अलीवर्दीखां पन्द्रह वर्ष नवाबी की मसनद पर बैठा और सन् १७५६ में मर गया। वह कोई दबंग शासक न था। पर उसका काल अच्छी तरह बीता। चोर-डाकुओं का उसने दमन किया, ज़मींदारों के विद्रोह को दबाया। उसका उत्तराधिकारी उसका दोहता सिराजुद्दौला जब गद्दी पर बैठा, तब वह बीस बरस का नवयुवक था। इस समय तक अंग्रेज़ों की सूरत, बम्बई, मद्रास और कलकत्ता की फैक्टरियां पूरे तौर पर किले का रूप धारण कर चुकी थीं। वहां अब सैनिक संगठन तेज़ी से होते जा रहे थे। अब वे व्यापार के नाम पर खुल्लमखुल्ला ज़ोर-ज़बरदस्ती और डाकेज़नी कर रहे थे। नवाब की ओर से उन्हें रोका जाता था तो वे झगड़ा करने को तैयार हो जाते थे।

अलीवर्दीखां ने मरते समय सिराजुद्दौला से कहा, 'इन फिरंगियों पर सख्त नज़र रखना। मैं ज़िन्दा रहता तो तुम्हें इस डर से मुक्त कर देता, अब तुम्हें ही यह काम करना होगा। बादशाहों की आपसी लड़ाइयों के बहाने उन्होंने हमारी सम्पत्ति को अपने लोगों में बांट लिया है। इनमें अंग्रेज़ ज़्यादा ज़ोरावर हैं। उन्हें किले या फौज में आगे मत बढ़ने देना, वरना मुल्क खो बैठोगे।'

पर सिराजुद्दौला जब गद्दी पर बैठा तो राजनीति से कोरा था। वह आराम और लाड़-प्यार में पला था। वह अदूरदर्शी और हठी था। बुद्धिमान भी न था, न उसकी सोहबत ही अच्छी थी। वह लबार और कायर भी था। उसमें गुण थे ही नहीं, जो थे उन्हें उपयोग में लाना नहीं जानता था। गद्दी पर बैठते ही उसके पर निकले। अपने लफंगे दोस्तों की सलाह से उसने राजशाही के राजा रामकृष्ण की बहिन रानी भवानी की बेटी तारा को अपने हरम में ज़बर्दस्ती पकड़ लाने के लिए सेना भेज दी। इससे सारे बंगाल में तहलका मच गया। रानी भवानी और राजा रामकृष्ण के प्रति बंगाल में बड़ी श्रद्धा थी। ये दोनों देवस्वरूप व्यक्ति थे। तरुण नवाब की इस दुस्साहसपूर्ण कलंक-चेष्टा से बहुत लोग उसके शत्रु हो गए। और जगत्सेठ, राजा रामदुर्लभ, राजा राजवल्लभ, मीरजाफर, अमीचन्द, ख्वाजा वाजिद आदि प्रमुख सम्भ्रान्त और राजपुरुष उसे सिंहासन से च्युत करने के गुप्त षड्यन्त्र रचने लगे।

वह न राजनीति जानता था, न कोई बात राज्य की समझता था। वह अपने दरबारी अमीर,उमरावों और मन्त्रियों पर निर्भर था। क्लाइव तो ऐसे ही अवसर की ताक में था। उसने अपने मतलब के आदमी छांट लिए। मीरजाफर को उसने बंगाल की मसनद कुछ शर्तों पर देने का प्रलोभन दिया। वाटसन को अपने प्रतिनिधि की हैसियत से नवाब के दरबार में बिठा दिया, जो षड्यन्त्र का मध्यबिन्दु बना। तीसरा था सेठ अमीचन्द, जो मीरजाफर और वाटसन के बीच दूत-कर्म करता था। उसे यह लालच दिया गया था कि उसे नवाब के खज़ाने से तीस लाख रुपये दिए जाएंगे। इसके अतिरिक्त खज़ाने का पांच प्रतिशत और दिया जाएगा। अन्य हिन्दू सेठ, व्यापारी एजेण्ट, राजपुरुष मीरजाफर के प्रभाव में थे। इस प्रकार वाटसन के नेतृत्व

में सिराजुद्दौला के चारों ओर फांसी का फंदा लटकाया जा रहा था, परन्तु बदनसीब सिराजुद्दौला बेखबर सो रहा था।

३१

मुर्शिदाबाद से बीस मील दूर प्लासी के जंगल में वह विश्वविदित निर्णायक युद्ध हुआ, जिसने भारत के भाग्य पर दो सौ बरस के लिए दासता की मुहर लगा दी। यह एक जादू का युद्ध था, जिसमें केवल आधे घण्टे ही विश्वासघात और षड्यन्त्र की फुलझड़ियां छूटीं और युद्ध जय हो गया। एक ओर था सिराजुद्दौला—फूलों की सेज पर पला हुआ, संसार की गतिविधि से बेखबर, अदूरदर्शी और नादान। दूसरी ओर था क्लाइव—कठिनाइयों की भट्टी में तपा हुआ, संसार की गतिविधि से सावधान, आठों गांठ कुम्मैत, धूर्त और साहसी। नवाब की सेना में थे पचास हज़ार पैदल, अठारह हज़ार घुड़सवार और तिरेपन बड़ी-बड़ी तोपें। प्लासी के मैदान में पहले उसीने मोर्चा जमाया था। वह थी केवल हथियारबन्द भीड़। अपने-अपने सरदारों के साथ नत्थी; न केन्द्र में भक्ति, न युद्ध में शिक्षित, सेनापति सब विश्वासघाती। क्लाइव के पास थे नौ सौ पचास यूरोपियन और दो सौ दोगले तथा इक्कीस सौ हिन्दुस्तानी सिपाही, आठ बड़ी और दो छोटी तोपें, पर सब नियन्त्रित और सुशिक्षित। दोनों दलों में कुछ बारूदी नोंक-झोंक हुई। केवल आधा घण्टा। और सिराज भाग निकला। जब वह भाग रहा था, क्लाइव सो रहा था। वाह !

इस घटना ने इंगलैंड को दो सौ बरस की साम्राज्य-विभूति और भारत को राजनीतिक दासता प्रदान कर दी। इस महायुद्ध में अंग्रेजों के केवल सात यूरोपियन और सोलह हिन्दुस्तानी सिपाही मरे।

सिराज भागकर मुर्शिदाबाद पहुंचा। वहां से किश्ती की राह राजमहल भागा, पर वह राह में ही पकड़ लिया गया। मुर्शिदाबाद छोड़ने के आठ दिन बाद ज़ंजीरों से बांधकर वह मुर्शिदाबाद फिर लाया गया। मीरजाफर तख्त पर बैठा था, उसी तख्त पर जिसपर आठ दिन पहले सिराज बैठता था। उसके सिर पर सिराज ही की रत्न-

जड़ित पगड़ी थी।

वह जाफर के सामने आकर घुटनों के बल गिर गया। आंखें उसकी भय से फैली हुई थीं। उसने रोकर कहा, 'मेरी जान बचा लो।'

इसपर जाफर का बेटा मीरन तलवार नंगी करके आगे बढ़ा। उसने कहा, 'इस मलऊन को अभी कत्ल करो।'

मीरजाफर ने कहा, 'लेकिन और सबकी राय क्या है? बेहतर है, अभी इसे कैद में रखा जाए और मामले पर गौर कर लिया जाए।'

मीरन ने कहा, 'आप इस वक्त महल में तशरीफ ले जाएं, मैं कैदी के लिए मुनासिब इंतज़ाम कर दूंगा।' मीरजाफर चला गया।

मीरन ने तेज़ आवाज़ में पुकारा, 'लालमुहम्मद!'

लालमुहम्मद सिराज के टुकड़ों पर पला हुआ एक गुलाम था। वह तेज़ तलवार लिए आ पहुंचा।

'इसे यहां से उठाकर उधर ले चलो।'

कैदी को एक गन्दी कोठरी में ले जाया गया। सिराज ने कातर स्वर से पूछा, 'क्या तुम मुझे कत्ल ही करोगे?'

'बेशक।'

'तो खुदा के लिए मेरे हाथ खोल दो। मैं खुदा की बन्दगी तो कर लूं।'

'यह हमपर फर्ज़ नहीं है।'

डर के मारे सिराज का हलक सूख गया। बड़ी कठिनाई से उसने कहा, 'पानी, ज़रा-सा पानी पिला दो।'

'अब पानी कितनी देर के लिए? बस तैयार हो जाओ।'

सिराज जमीन पर माथा रगड़ने लगा। फिर उसने सिर उठाकर लपटती हुई जबान से कहा, 'वे लोग—वे लोग—बंगाल के एक कोने में मुझे एक तिल-भर ज़मीन न देंगे? गुज़ारे को एक छोटी-सी रकम भी न देंगे? इसपर भी वे राजी नहीं हैं?'

'नहीं,' और इसके साथ ही तलवार गर्दन पर पड़ी। सिराज गिर गया। खून के जोश में उसके मुंह से निकला, 'मैं—म—म—रा, हु—हुसेन के खू—खून का बद—ला चु—चुका।' वह ज़मीन पर लेट गया और उसका दम निकल गया। लालमुहम्मद ने उसकी लाश के टुकड़े-टुकड़े कर दिए।

३२

मीरजाफर वह गधा था जिसपर क्लाइव सवार था। वह अलीवर्दीखां का बहनोई और सिराजुद्दौला का प्रधान सेनापति था। उसे विश्वास था कि मुर्शिदाबाद के खज़ाने में साठ करोड़ रुपया नकद है। पर जब खज़ाना खोला गया तो बीस करोड़ ही निकला। अंग्रेज़ अफसरों को जितनी रकम देने का वायदा किया था, उसमें अंग्रेज एक छदाम भी कम करना न चाहते थे। उसे प्रत्येक अंग्रेज़ सिपाही को पैंतालीस हज़ार रुपये, क्लाइव को पैंतालीस लाख और कौंसिल के प्रत्येक सदस्य को साढ़े सात लाख देने पड़े। साथ ही कलकत्ता और उसके दक्षिण की भूमि पर अंग्रेज़ों का अधिकार हो गया। कलकत्ता की क्षतिपूर्ति के लिए सतहत्तर लाख रुपये कम्पनी की सरकार को दिए गए। क्लाइव को मनसबदार बनाकर साढ़े चार लाख वार्षिक आय की एक जागीर भी बख्श दी गई। इन सब भेंटों के अतिरिक्त उसने यह भी प्रतिज्ञा की कि अंग्रेज़ी कोठी के साहब परदेशी गुमाश्ते प्रजा पर व्यापार-सम्बन्धी किसी प्रकार का अत्याचार करेंगे तो वह हस्तक्षेप न करेगा और अंग्रेज़ों की कोठी के किसी व्यक्ति के साथ यदि कोई झगड़ा करेगा तो वह अंग्रेज़ों की मदद करेगा।

इन सब भेंटों, रिश्वतों और नज़रानों में नवाब का सारा खज़ाना खाली हो गया। पर अंग्रेज़ अब बात-बात पर उसकी गर्दन दबोचते थे। मीरजाफर तख्त पर छटपटाने लगा। अब वह पूरी तरह चूसा जा चुका था और खज़ाने में फौज को तनख्वाह देने को भी रुपया न था। फौज बागी हो रही थी। क्लाइव अपनी रकम को पचाने इंगलैंड चला गया और बंगाल की शतरंज पर किसी दूसरे मोहरे को चलाने की चाल सोचने लगा। दूसरा मोहरा बना मीरकासिम, जाफर का दामाद। जाफर ने चिनसुरा के डच लोगों से सहयोग करना चाहा, पर इससे पूर्व ही वह मसनद से उतार दिया गया। जाफर को सिर्फ तीन साल ही गद्दी पर बैठना नसीब हुआ और उसे गद्दी से उतारकर मीरकासिम को बंगाल का नवाब बना दिया गया। बादशाह शाहआलम से उसे बंगाल की सूबेदारी का फर्मान भी दिला दिया गया। इस सिले में अंग्रेज़ी कौन्सिल को तीस लाख और गवर्नर वैन्सीटार्ट को साढ़े

सात लाख रुपये नज़राना देना पड़ा। कम्पनी को मिदनापुर और चिटगांव के समृद्ध इलाके मिले। मीरजाफर कलकत्ता में नज़रबन्द कर लिया गया। क्लाइव का गधा क्लाइव के तबेले में जा पहुंचा।

मीरकासिम ने भी तुरन्त समझ लिया, जिसे वह सिंहासन समझे हुए था, वह अंग्रेज़ों की खुली जेल थी। नवाब वह था, पर बंगाल के मालिक अंग्रेज़ थे। वे मनमानी करते थे—नवाब के साथ भी और प्रजा के साथ भी। उसने सबपर से चुंगी उठाकर अंग्रेज़ों का एकाधिकार नष्ट कर दिया और अंग्रेज़ों के प्रभाव से बचने के लिए मुंगेर अपनी राजधानी उठा ले गया और फौज को नये ढंग पर संगठित कर अंग्रेज़ों से लोहा लेने की तैयारी करने लगा। पर अंग्रेज़ों ने उसे अवसर न दिया। युद्ध छिड़ गया। मुंगेर में कुछ अंग्रेज़ उसके दरबारियों से षड्यन्त्र कर रहे थे। उसने उन अंग्रेज़ों को कत्ल करा दिया। राजा राजवल्लभ और उसके पुत्रों को गले में बालू का बोरा बंधवाकर गंगा में फिंकवा दिया। राजा रामनारायण, उमेदसिंह, बुनियादसिंह, फतेसिंह और कई सेठों को मौत के घाट उतार दिया और भागकर अवध के नवाब के शरणापन्न हुआ।

अब फिर शतरंज की नई चाल चली गई। मीरजाफ़र फिर गद्दी पर आया। पर वह जल्द मर गया और उसका नालायक बेटा नजमुद्दौला नवाब बना। उस समय क्लाइव बंगाल का गवर्नर-जनरल और कमांडर-इन-चीफ बनकर फिर आ गया था। पानीपत की तीसरी लड़ाई हो चुकी थी और मराठों की बधिया बैठ चुकी थी। दिल्ली में अन्धेरगर्दी मची हुई थी। बादशाह शाहआलम इलाहाबाद में नवाब-वज़ीर अवध का शरणापन्न था। मीरकासिम और अवध के नवाब शुजाउद्दौला ने बादशाह शाहआलम को मिलाकर बक्सर में फिर एक बार अंग्रेज़ों से लोहा लिया, पर भाग्य ने साथ न दिया। वह पराजित होकर भाग निकला और अज्ञात अवस्था में मर गया। क्लाइव ने अब बादशाह की गर्दन दबोची और उसकी लाचारी से लाभ उठाकर कम्पनी के नाम बंगाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी प्राप्त कर ली। जिस दिन बादशाह ने इस दुर्भाग्यपूर्ण फर्मान पर हस्ताक्षर किए, वह ९ अगस्त सन् १७६५ का दिन था। यही वह दिन है जिस दिन भारत में अंग्रेज़ सल्तनत का आरम्भ हुआ।

३३

१७७० में वर्षा नहीं हुई। भूमि सूख गई, तालाब सूख गए, नदियां काकपेया हो गईं और गंगा की सारी घाटी में दुर्भिक्ष की काली छाया व्याप गई। नाज़ुकबदन और सात पर्दे में रहनेवाली महिलाएं, जिन्होंने कभी घर की दहलीज़ के बाहर कदम नहीं रखा था, सड़कों पर आकर राह चलतों के आगे धरती पर माथा टेककर पेट के लिए एक मुट्ठी चावल मांग रही थीं। अंग्रेज़ों की कोठियों और बंगलों के सामने उनके बागीचों के बीच से हुगली के प्रवाह में प्रतिदिन हज़ारों दुर्भिक्ष-पीड़ितों की लाशें बहकर समुद्र में जा रही थीं। मरते हुओं और मरे हुओं से कलकत्ता के बाज़ार-रास्ते पटे पड़े थे। लोग अपने सम्बन्धियों की लाशें मरघट तक या गंगा तक भी ले जाने में असमर्थ थे। लाशें जहां की तहां पड़ी सड़ रही थीं और गीध-सियार दिन-दहाड़े उन्हें नोचते-खाते थे। कहीं-कहीं जीवित पुरुष मृत पुरुषों का मांस खा रहे थे।

धनी-निर्धन सबकी एक ही दशा थी। धनियों के घरों में रुपये और मुहरें थीं, परन्तु अन्न नहीं। कलकत्ता में अंग्रेज़ों ने बहुत-सा चावल एकत्र कर रखा है, यह सुनकर अन्न की आशा में पुर्निया, दीनाजपुर, बांकुड़ा, वर्द्धमान आदि नगरों से ठठ के ठठ लोग कलकत्ता की ओर चले आ रहे थे। कुलीन गृहस्थों की कुलबालाएं आंचल में अशर्फियां और स्वर्णाभरण बांधे बच्चों को संभालती गिरती-पड़ती कलकत्ता की ओर जा रही थीं। एक मुट्ठी अन्न मोल लेने की प्रतारणा में। दरिद्रों का तो पार न था। इनमें बहुत राह में ही भूखी-प्यासी दम तोड़ देती थीं। बहुतों के छोटे-छोटे सुकुमार बच्चे माता के सूखे स्तन चूसते ही ठण्डे पड़ गए। वे घरों से चली थीं भरी गोद लेकर, पर कलकत्ता पहुंचीं सूनी गोद लिए, केवल एक मुट्ठी अन्न के लिए, जो अंग्रेज़ों की कोठियों में भरा था, जो उन्हींका था, उन्हींने पैदा किया था। परन्तु कलकत्ता में जो अन्न रखा था, वह उनके भाग्य में न था। उनके जीने-मरने से अंग्रेज़ों का क्या हानि-लाभ था! उनकी नज़र में उनकी सेना थी। वे मर गए तो कौन यहां उनकी रक्षा कर सकता था! जो देश को शताब्दियों से अन्न देते रहे थे, वे

ही आज अन्न के बिना तड़प-तड़पकर मर रहे थे। गंगा के इस पार कलकत्ता में सान्ध्यवेला में बैंड की उत्तेजक ध्वनि पर विविध पक्वान्न खाकर शराब पी और नाच रहे थे और गंगा के उस पार सहस्रों नर-कंकाल प्राणों का भार लिए 'हा अन्न! हा अन्न।' पुकार रहे थे। पुकारते-पुकारते निष्प्राण होकर गिर रहे थे, कुछ पतित-पावनी गंगा की गोद में, कुछ उसके अंचल पर। उन मरे-अधमरे सबको सरकारी डोम टांगें पकड़-पकड़ घसीटकर गंगा में फेंक रहे थे। कलकत्ता की गलियों में एक जून भात के लिए स्त्रियां गोद के बच्चों को बेच रही थीं।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के हाथ बंगाल की लगाम आते ही लार्ड क्लाइव ने नमक पर एकाधिकार प्राप्त कर लिया। कम्पनी बंगाल का समूचा नमक बारह आना मन के भाव से खरीदती और उसे देशी व्यापारियों के हाथ पांच रुपये मन के हिसाब से बेचती थी। बाद में डाइरेक्टरों के दबाव से नमक का भाव दो रुपये मन कर दिया गया। इस समय लार्ड क्लाइव बीमार होकर और इस्तीफा देकर विलायत चले गए थे। वैरोलस्ट ने इस कमी की पूर्ति धान और चावलों के व्यापार से की। इस समय कार्टियर कलकत्ता के गवर्नर थे।

बंगाल के सबसे अधिक अत्याचारी नवाब शाइस्ताखां के ज़माने में भी बंगाल में रुपये का आठ मन चावल बिकता था। अलीवर्दीखां ने इस बात पर कड़ी नज़र रखी थी कि विदेशी व्यापारी चावल या धान का व्यापार न करें। उसकी अमलदारी में अंग्रेज़, फ्रांसीसी, आरमिनियन, पुर्तगीज़ किसीको भी चावल खरीदने की आज्ञा नहीं थी।

सन् १७६६ में अंग्रेज़ों ने धान का व्यापार आरम्भ किया। १७६८ में धान बंगाल में बहुत कम हुआ। प्रजा में लगान देने की भी शक्ति न रही। पर लगान सख्ती से वसूल किया गया। १७६९ में फिर पानी नहीं बरसा। किसानों के पास बीज तक न था। इसलिए बहुत कम धान उपजा। वह सब कम्पनी के गवर्नर ने खरीदकर अपने अधिकार में कर लिया। सारे बंगाल में हाहाकार मच गया। बंगाल में इस समय कोई प्रजावत्सल राजा न था। बंगाल का नायब सूबेदार मुहम्मदरज़ाखां इस समय राजमहल की सेजों पर सुख से सो रहा था। उसका काम कड़े हाथों लगान वसूल करके कम्पनी के खज़ाने

में भेजना था। प्रजा के सुख-दुःख से उसे क्या काम !

ओह, कैसा हृदय-विदारक दृश्य है! राह के किनारे एक स्त्री पड़ी है, उसकी छाती से चिपटा हुआ बालक उसके स्तन को चूस रहा है। स्त्री मूर्छित है और स्तनों में दूध के स्थान पर खून निकलकर बूंद-बूंद बालक के मुंह में जा रहा है। और यह क्या भीषण दृश्य है! एक माता झाड़ी की ओट में पड़ी अपने मृत शिशु को खा रही है। हे ईश्वर, हे भगवान !

वैरेलस्ट और कार्टियर व्यस्तभाव से कलकत्ता के कौंन्सिल हाउस में परामर्श कर रहे थे।

वैरेलस्ट ने कहा, 'इस समय हम लोगों पर भारी दायित्व आ पड़ा है। इस दुर्भिक्ष का सामना कैसे किया जाए, समझ में नहीं आता। लगान कैसे वसूल होगा? खेतों में तो कुछ पैदावार हुई ही नहीं। लगान वसूल न हुआ और मुकर्रिर रकम समय पर हम न भेज सके तो बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स हमें मंसूख कर देगा। हम कहीं के न रह जाएंगे।'

'तो मुनासिब यह है कि इस बार पांच फीसदी लगान माफ कर दिया जाए। अगले साल दस फीसदी बढ़ाकर हम कसर निकाल लेंगे। इसके अलावा बाज़ार में और किसानों के घरों में जो भी धान हो, सब खरीद लिया जाए।'

'बारिश पिछले साल भी नहीं हुई थी। पैदावार बहुत कम हुई थी, फिर भी हमने कौड़ी-कौड़ी मालगुज़ारी वसूल कर ली थी। ज़ोरो-ज़ुल्म से परेशान किसानों ने बीज का धान तक बेचकर मालगुज़ारी अदा की थी। इधर बीज की कमी और वर्षा के अभाव से इस साल फसल बोई ही नहीं गई।'

'बाज़ार में चावल तो अभी है।'

'नायब सूबेदार मुहम्मदरज़ा ने सब चावल खरीदकर कोठियों में भर लिया है। वे जानते हैं कि ये गंटू मर जाएंगे, पर मांस खाकर धर्मभ्रष्ट न होंगे। अब वे मुंह-मांगे दामों बेच रहे हैं।'

'उनके पास पैसा कहां है? वे तो अब फटाफट मर रहे हैं। उन्होंने जो फसलें बोई थीं उन्हें और लोग काट ले गए। वे भूखे मर रहे हैं। कम्पनी के गुमाश्तों ने उनका तमाम अनाज खरीदकर अपने

गोदामों में भर लिया है। उनका बीज तक का अनाज छीन लिया गया है। कम्पनी के गोदामों में इस समय तीन लाख मन चावल भरा हुआ है।'

'तो हमको भी तो अपना मरना-जीना देखना है। हम और हमारी फौज तो भूखी नहीं मर सकती। मुल्क के अनाज पर तो कम्पनी का अधिकार होना ही चाहिए। और लगान कड़ाई से वसूल होना चाहिए।'

'और लाखों लोग जो भूखों मर रहे हैं?'

'उनके लिए पचास हज़ार मन चावल रज़ाखां ने कलकत्ता भेजा था न?'

'लेकिन कम्पनी के गुमाश्ते यह चावल ऊंचे दामों में मद्रास ले जाकर बेच रहे हैं।'

'कोर्ट आफ डाइरेक्टर्स के पास शिकायतें पहुंची हैं। उन्होंने हमसे जवाब तलब किया है।'

'इसका जवाब लिख दिया जाएगा कि हमारी सेना को उतने समय में जितने अन्न की आवश्यकता है, उतना ही हमने खरीदकर अपने गोदामों में भरा है। हम गरीबों के कष्ट-निवारण की भी चेष्टा कर रहे हैं।'

'परन्तु सारी आबादी का एक-तिहाई भाग भूख और बीमारी से मर गया है। और जितनी भूमि पर खेती होती थी वह सबकी सब बंजर हो गई है।'

'सो तो होगा ही। लोग खाने न खाने की वस्तु खाएंगे तो बीमारी तो फैलेगी ही।'

'लेकिन तीस लाख आदमी मर गए हैं, साहब!'

'हिन्दुस्तानी औरतें बचपन से ही बच्चे पैदा करने लगती हैं। बहुत जल्द वे फिर उतने ही हो जाएंगे। इसके अतिरिक्त किया भी क्या जाए?'

'क्या हम भी उनके साथ ही मर जाएं?'

'कम्पनी के कर्मचारी भी तो स्वार्थी और घूसखोर हैं। उनमें न आत्मसम्मान है, न कर्तव्य की भावना। वे तो धन बटोर रहे हैं।'

'अब इसमें हमारा क्या बस है? उन्हें जिन अनगिनत हिन्दुस्तानी एजेण्टों और दलालों से काम लेना पड़ता है, वे सब पक्के लालची,

कमीने और बेहया हैं। वे ही प्रजा पर घोर अत्याचार भी करते हैं और यूरोपियन अफसरों को भी बिगाड़ते हैं।'

'इसमें उनका क्या दोष है? ऊपर से उनपर हमारा डंडा भी तो पड़ता है कि जैसे बने रुपया वसूल करो।'

'तो डंडा तो हमपर भी बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स का है। वहां रुपया न भेजा जाएगा तो हमारी पतंग न कट जाएगी?'

'ऐसा तो हरगिज़ न होना चाहिए मिस्टर वैरेलस्ट, वरना हम कहीं के न रहेंगे। हमारे हाथ-पल्ले तो कुछ लगा ही नहीं।'

'लगेगा भी कहां से! अब नवाबी तो खत्म ही हो गई। रही रियाया, सो भूखी, नंगी और तबाह है।'

'खैर, तो अब कोर्ट आफ डाइरेक्टर्स के खरीते का क्या जवाब लिख दिया जाए?'

'यही कि यद्यपि अकाल और महामारी ने मुल्क को तबाह कर दिया है, मगर आॅनरेबुल डाइरेक्टर्स को परेशान होने की कोई ज़रूरत नहीं है। अनावृष्टि के कारण धान की फसल पूरी न होने पर भी कम्पनी की मालगुजारी वसूल होने में कोई विघ्न न होगा।'

'लेकिन कैसे हो जाएगी?'

'यह हमारे सोचने और करने की बात है। आप यह जवाब लिख दीजिए और फिर इसे सफल करने में जुट जाइए।'

३४

क्लाइव और वारेन हेस्टिंग्ज़ दोनों ही इस समय अपनी-अपनी कमाई लंदन में पचा रहे थे। इन लोगों की शाहखर्ची और ठाट-बाट देखकर लंदन के नर-नारी आश्चर्यचकित हो रहे थे। वे लोग इन्हें 'नवोव' कहकर पुकारते थे, जो भारतीय नवाब का इंगलिश उच्चारण था। वे इस कदर फिज़ूलखर्ची कर रहे थे कि लंदन में चीज़ें महंगी बिकने लगी थीं। उनके नौकरों की वर्दी ड्यूक की वर्दी को मात कर रही थी। उनकी शानदार गाड़ी के सामने लन्दन के मेयर की गाड़ी नगण्य थी। इस प्रकार की चेष्टाओं से वे अपनी बिरादरी से दूसरी

बिरादरी में घुसने की चेष्टा कर रहे थे। वे शरीफों की श्रेणी के पुरुष न थे, लुच्चों की जमातवाले थे, जो एडवांचरर कहाते थे। पर धन के मद में अकड़कर अब वे लार्डों से स्पृहा कर रहे थे। निस्संदेह उनके पास बेतोल सम्पदा थी। इस सम्पदा का मुकाबिला उस समय लंदन के लार्ड नहीं कर सकते थे। इसलिए जहां उनके जाति वाले उनसे ईर्ष्या और द्वेष करते थे, वहां ये बड़े लोग उन्हें घृणा और हिकारत से देखते थे, इसी तरह जैसे यहां भारत में कभी किसी भंगी-चमार को भले आदमियों जैसे कपड़े या सोना पहनते देख कुलीन हिन्दू बौखला उठते थे। यही दशा उस समय इन 'नवोव' लोगों की इंगलैंड में थी। परन्तु इनके प्रशंसक भी थे, जो इनकी बदौलत मालामाल हो रहे थे। जिनके स्वार्थ ईस्ट इंडिया कम्पनी के साथ बंधे थे, क्योंकि इन 'नवोव' ने केवल अपनी ही गांठ न भरी थी, अपितु इन्होंने इन्हीं तीन वर्षों में आठ करोड़ रुपये मूल्य का सोना बंगाल से इंगलैंड भेजा था, जिससे बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स की आंखों में सरसों फूल उठी थी। फिर भी क्लाइव उन लार्डों में सबसे अधिक योग्य, सबसे अधिक धनी, सबसे अधिक प्रसिद्ध और सबसे ऊंची पदवी धारण कर चुका था। वह बड़ी शान से बर्कले स्क्वायर के अपने महल में रहता था। उसका एक महल आयशायर में था और दूसरा क्लेयर मौण्ट में। उसने लंदन के कपड़े तैयार करनेवाली एक प्रसिद्ध फर्म को अपने नाप की दो सौ कमीज़ें तैयार करने का आर्डर दिया था। पार्लियामेंट में वह बड़ी-बड़ी टक्करें ले रहा था। परन्तु लोग उसपर खुली व्यंग्य-वर्षा करते थे, जो तीर की भांति उसके हृदय को छेदती थी।

उसका चरित्र भी बहुत हीन था। भारत में उसकी धूर्तता और हृदयहीनता प्रकट हो चुकी थी। प्रसिद्ध था, बंगाल में उसने अनेक सम्भ्रान्त कुल की महिलाओं का सतीत्व नष्ट करने की चेष्टा की थी। यहां लंदन में आकर उसने खुला खेल आरंभ कर दिया। उसने एक प्रतिष्ठित विवाहिता लेडी पर हाथ साफ किया। उसने उस उच्च-कुलीन महिला के टाइटिल के स्थान पर अपना प्रेम-पत्र रख दिया। महिला ने उसकी अच्छी भर्त्सना की। इससे इंगलैंड में सब छोटे-बड़े उससे घृणा करने और चरित्र की दृष्टि से उसे कोढ़ी समझने लगे। जैसे लोग कोढ़ी की छूत से बचते हैं, वैसे ही लंदन के शरीफ उससे दूर

रहने लगे। वह अनंत धन-संपत्ति से भरा-पूरा होने पर भी लंदन में मित्र-रहित एकाकी रह गया।

और अंत में उसपर गाज पड़ी। पार्लियामेंट के समक्ष उसपर बड़े-बड़े संगीन आरोप लगाकर मुकदमा चलाया गया। उसकी रिश्वतों और गुप्त भेंटों का भंडाफोड़ किया गया। उसके करोड़पति बनने की पोल खोल दी गई। उसका प्रतिस्पर्द्धी कर्नल बोर्गोनी था। विरोधियों ने उसके अनाचारों-अपराधों को खोलकर सर्वसाधारण के समक्ष रख दिया। समर्थकों ने उसकी देशसेवा का लम्बा-चौड़ा बखान किया। लम्बा विवाद चला। गर्मागर्म बहस हुई। अन्त में पार्लियामेंट ने निर्णय दिया—उसने अपराध किए हैं परन्तु देश की बहुत बड़ी प्रशंसनीय सेवा भी की है। उसे छोड़ दिया गया। पार्लियामेंट के इस निर्णय से यह पद्धति कायम हो गई कि भारत पर शासन करनेवाले अंग्रेज़ों के अपराध का निर्णय पाप-पुण्य के मानदण्ड से न होकर इंगलैंड की स्वार्थ-सिद्धि के मानदण्ड से होगा।

पार्लियामेंट से वह बरी हो गया। परन्तु इंगलैंड-भर उससे घृणा करने लगा। वह सुस्त और कभी-कभी विक्षिप्त रहने लगा। जब वह अपना नया विशाल प्रासाद बनवा रहा था तो लोग देखकर कहते थे, 'वह अपने चारों ओर मंडराते हुए शैतान के दूतों से बचने के लिए यह महल बनवा रहा है।'

दुराचार ने उसे जर्जर कर दिया और अनेक गन्दी बीमारियां, जो उन दिनों इंगलैंड में आम थीं, उसने अपने शरीर में बटोर लीं। अब वह अफीम खाने लगा था और उदास, खोया-खोया फिरा करता था। उसने दिल बहलाने के लिए मध्य यूरोप की यात्रा की, पर व्यर्थ। उसका मनस्ताप बढ़ता ही गया और एक दिन चाकू से उसने आत्मघात कर लिया।

३५

दुर्भिक्ष के कारण सारा देश किसानों से खाली हो गया। कुछ मर गए, कुछ भाग गए। सारी ज़मीन परती पड़ी रह गई। माल-

गुजारी भी वसूल नहीं हुई। कम्पनी के कारोबार में भारी अड़चन आ गई। अत्याचार, अकाल और अव्यवस्था की ये खबरें इंगलैंड पहुंचीं। पार्लियामेंट ने कम्पनी के डाइरेक्टरों से जवाब तलब किया। डाइरेक्टरों ने इस विपत्ति का सामना करने के लिए वारेन हेस्टिंग्ज़ को बंगाल का गवर्नर बनाकर भेजा।

वह पंद्रह बरस बंगाल में रह चुका था। वहां उसके बहुत-से मित्र-मददगार थे, मुन्शी नवकृष्ण, कांत पोद्दार, गंगागोविन्दसिंह, छिदाम विश्वास और अन्य लोग भी। वह एक ठिगने कद का, दुबला-पतला, विचारशील व्यक्ति था। क्लाइव की भांति बंगाल में बदनाम न था। वह अपने इन हिन्दुस्तानी मित्रों के साथ मिलकर काम कर चुका था। छिदाम विश्वास को पहले-पहल इसने ही कासिम बाज़ार की कोठी में प्यादा नियत किया था। कांत पोद्दार से उसकी गहरी दोस्ती थी। विपत्ति के दिनों वह उसका शरणापन्न रह चुका था। ये सब वारेन हेस्टिंग्ज़ के गवर्नर बनकर आने से पहले प्रसन्न हुए। उन्होंने बड़ी खुशियां मनाईं, उन्हें बड़ी-बड़ी आशाएं बंधीं। क्लाइव सिपाही था, पर वारेन राजनीति-कुशल था। उसका ठण्डा दिमाग उसका सबसे बड़ा सहायक था। परन्तु रुपये का लालची वह भी था। वह पहले भी काफी रुपया लूट चुका था। वह जन्मतः गरीब घर का लड़का था। बचपन में अपने पड़ौस के डेलसफोर्ड कैसल को ललचाई आंखों से देखता और यह सोचा करता था कि एक दिन इसे खरीदकर छोड़ूंगा। वह यद्यपि काफी रकम भारत से बटोर ले गया था, पर वह इतनी न थी कि डेलसफोर्ड कैसल को खरीद ले। इस बार वह बंगाल का गवर्नर बनकर आ रहा था। उसका हृदय उच्चाकांक्षाओं से भरपूर था। इस बार लौटने पर वह जरूर डेलसफोर्ड कैसल को खरीद सकेगा, इसका उसे पूरा विश्वास था।

बंगाल के गवर्नर की कुर्सी पर बैठकर हेस्टिंग्ज़ के गुण और अवगुण दोनों ही का विकास हुआ। बाद में तो वह भारत का गवर्नर-जनरल बन गया। वह तेरह वर्ष कुर्सी पर रहा। इन तेरह वर्षों में उसने क्लाइव के द्वारा डाली गई बुनियाद पर ब्रिटिश-साम्राज्य का महल खड़ा कर दिया।

जिस समय उसने कुर्सी संभाली, वहां दुअमली चल रही थी।

नवाब नाम के लिए बंगाल का शासक था, शासन की सारी बागडोर कम्पनी के ही हाथों में थी। कम्पनी की ओर से मुहम्मदरज़ाखां फौजदार मुकर्रर था। सैनिक और विदेशी मामलों को छोड़ शेष सब महकमे रज़ाखां की देख-रेख में चलते थे। उसे एक लाख रुपये वार्षिक वेतन मिलता था। परन्तु नवाब के सब खर्च उसीके माफिक होते थे और वही लगान आदि की वसूली करता था, इसलिए उसकी ऊपर की आमदनी भी बेशुमार थी। असल में बंगाल का कर्ता-धर्ता वही था।

वारेन हेस्टिंग्ज़ ने इस दुअमली को खत्म करने की ठान ली। उसने नवाब और रज़ाखां दोनों को खत्म करके शासनसूत्र अपने हाथ लेने की ठान ली। उसने सोचने-विचारने में समय नष्ट नहीं किया। एक दिन आधी रात के समय अचानक बिना सूचना दिए अंग्रेज़ी फौज ने रज़ाखां का महल घेर लिया और उसे गिरफ्तार कर लिया गया। यही सलूक उसके सहकारी राजा सिताबराय के साथ किया गया। दोनों पर कम्पनी के धन के दुरुपयोग का मुकदमा कलकत्ता में चला।

कुछ दिन मुकदमे का नाटक चला। फिर दोनों को अचानक ही रिहा कर दिया गया। रज़ाखां के विरुद्ध नन्दकुमार से गवाही दिलाई गई। इस बदले में नन्दकुमार को पदच्युत रज़ाखां के स्थान पर नियुक्त करने का वचन दिया गया था। परंतु वारेन हेस्टिंग्ज़ ने वचन पूरा नहीं किया। नन्दकुमार के आंसू पोंछने को उसके लड़के गुरदास को नवाब के निजी खजाने का खज़ांची बना दिया गया। नन्दकुमार से वारेन हेस्टिंग्ज़ की पुरानी दुश्मनी थी। अब इस नई धोखाधड़ी से वह वारेन का पूरा शत्रु बन गया। उसने रज़ाखां से दुश्मनी भी मोल ली और उसके हाथ भी कुछ न लगा।

३६

इसी समय पार्लियामेंट ने भारत के संबन्ध में रेगूलेशन एक्ट पास किया। उसके आधार पर वारेन हेस्टिंग्ज़ गवर्नर-जनरल बन गया, और चार सदस्यों की एक कौन्सिल उसकी सहायता के लिए नियत

की गई। न्याय-व्यवस्था के लिए कलकत्ता में एक सुप्रीम कोर्ट की स्थापना हुई, जिसका चीफ जस्टिस सर एलीज़ा इम्पे नियत हुआ। उसके तीन सहायकों में एक फिलिप फ्रान्सिस था, जो एक उल्लेखनीय व्यक्ति था।

उन दिनों बोर्ड ग्राफ डाइरेक्टर्स तो रुपये की हाय-हाय कर ही रहा था, भारत में आया प्रत्येक अंग्रेज भी धन बटोरने में लगा था। वारेन ने भी इस सुअवसर से लाभ उठाया। उसने दोनों हाथों से धन बटोरना आरम्भ कर दिया। जब उसकी सलाहकार कौन्सिल के सदस्य भारत पहुंचे तो देखा कि गवर्नर-जनरल अनुचित रीति पर धनार्जन करने के लिए बहुत बदनाम हो चुका है। सदस्यों में सर फ्रान्सिस बड़े न्यायनिष्ठ और स्पष्टवक्ता थे। उन्होंने तुरन्त वारेन की कुचेष्टाओं में बाधा डालनी शुरू कर दी। वारेन भी उचित-अनुचित का विचार छोड़ उनसे भिड़ गया। दोनों कट्टर शत्रु बन गए। दोनों के संघर्ष का शिकार बना नन्दकुमार। वह फ्रान्सिस का सहायक बन गया। बापूदेव शास्त्री की सीख उसने भुला दी और षड्यन्त्रों के कुचक्र में फंस गया।

महाराज नन्दकुमार ने एक अभियोग-पत्र सर फिलिप फ्रान्सिस की मार्फत कौन्सिल में भेजा। उसमें लिखा था—

'हेस्टिग्ज़ जैसे शक्तिशाली पुरुष की शिकायत करके अपनी रक्षा के लिए मैं परमात्मा पर ही भरोसा करता हूं। आत्ममर्यादा को मैं प्राणों से भी बढ़कर मानता हूं। और यदि अब भी असली भेद न खोलूं और मौन रहूं तो मुझे और भी विपत्तियां झेलनी पड़ेगी। लाचार होकर मैं यह रहस्य प्रकट करता हूं।

'यह कि हेस्टिग्ज ने तीन लाख चौवन हज़ार एक सौ पांच रुपये का गबन किया है। मुहम्मदरज़ा से भी भारी रिश्वत लेकर उसे रिहा किया है। जगतचन्द, मोहनप्रसाद, कमालुद्दीन आदि उनकी इस गबनगोष्ठी में सम्मिलित हैं। वे मेरे भी सर्वनाश का षड्यन्त्र रच रहे हैं, क्योंकि मैंने उनका साथ नहीं दिया।'

पत्र में और भी विस्तार से बातें लिखी थीं। जब पत्र कौन्सिल में सुनाया गया तो हेस्टिग्ज़ का चेहरा फक हो गया। वह क्रुद्ध होकर बकझक करता कौन्सिल को बर्खास्त करके उठ गया।

दो दिन बाद फिर कौन्सिल बैठी तो महाराज नन्दकुमार का एक और पत्र खोला गया, उसमें उन्होंने प्रार्थना की थी यदि कौन्सिल अनुमति दे तो मैं स्वयं कौन्सिल में उपस्थित होकर सब बातों का प्रमाण पेश करूं और घूस के रुपयों की रसीद दाखिल करूं। पत्र सुनकर कर्नल मानसून ने प्रस्ताव किया कि नन्दकुमार को कौन्सिल में उपस्थित होकर सबूत पेश करने की आज्ञा देनी चाहिए। यह सुन कर गवर्नर ने कड़े होकर कहा, 'यदि नन्दकुमार हमारा अभियोक्ता बनकर कौन्सिल में आएगा तो हम इस अपमान को कभी बर्दाश्त नहीं कर सकेंगे। हमारी अधीनस्थ कौन्सिल को हमारे कार्यों की आलोचना करने का बिलकुल अधिकार नहीं है। यदि कौन्सिल ऐसा करेगी तो हम वहां नहीं बैठेंगे। हम कौन्सिल की बैठक भी स्थगित कर देंगे।'

इसपर कर्नल ने कहा, 'तब यह मामला सुप्रीम कोर्ट में जाना चाहिए।'

वाद-विवाद बहुत हुआ, अन्त में तय यह हुआ कि नन्दकुमार को कौन्सिल में हाज़िर होकर सबूत पेश करने दिया जाए। परन्तु गोरे गवर्नर पर काला आदमी दोषारोपण करे, यह अनहोनी बात थी।

हेस्टिंग्ज़ उठकर चल दिया। तीनों सदस्यों ने एकमत हो जनरल क्लीयरिंग को सभापति बनाया। महाराज नन्दकुमार के पेश किए गए प्रमाणों के आधार पर अभियोग प्रमाणित हो गया। कौन्सिल ने वारेन को अपराधी घोषित किया और कहा, 'वह तमाम गबन का रुपया कम्पनी के खज़ाने में जमा कर दे।' पर हेस्टिंग्ज़ ने प्रस्ताव ठुकरा दिया। तब कौन्सिल ने कम्पनी की ओर से सुप्रीम कोर्ट में दावा दायर करने के लिए सब कागज़ात कम्पनी के सालीसिटर-जनरल के पास भेज दिए।

हेस्टिंग्ज़ ने उसी रात सुप्रीम कोर्ट के चीफ जस्टिस सर इम्पे की कोठी पर गुप्त मन्त्रणा की। सर इम्पे उसके बालसखा और सहपाठी थे। उसके अगले ही दिन मोहनप्रसाद ने सुप्रीम कोर्ट में हलफिया बयान दाखिल करके नन्दकुमार के खिलाफ जालसाज़ी का मुकदमा खड़ा कर दिया। महाराज नन्दकुमार गिरफ्तार कर लिए गए। उसके विरोधी जहां यह आशा करते थे कि वारेन हेस्टिंग्ज़ को कम्पनी की

ग्रोर से दण्ड दिया जाएगा, यह देखकर अचम्भे में रह गए कि उनका मुख्य गवाह नन्दकुमार गिरफ्तार हो गया है।

३७

न्यायमूर्ति चीफ जस्टिस पीली गाउन पहनकर प्रधान न्यायाधीश के आसन पर आ विराजे। उनके सामने ग्रभियुक्त की हैसियत से महाराज नन्दकुमार खड़े हुए। उनके गुमाश्ता चैतन्यनाथ ग्रौर दामाद राय राधाचरण बहादुर तथा बैरिस्टर फरार साहब उनके पीछे खड़े हुए। कान्त पोद्दार और दूसरे गवाह हेस्टिंग्ज़ के सहचर दर्शकों की सीट पर ग्रा बैठे। नन्दकुमार पर बीस ग्रभियोग लगाए गए थे। बारह जूरी भी ग्रपने आसन पर थे, जो सब हेस्टिंग्ज़ के गुट के आदमी थे। कोर्ट के प्रधान दुभाषिए विलियम्स चैम्बर किसी तरीके से गैर-हाज़िर कर दिए गए थे ग्रौर गवर्नर के कृपापात्र इलियट को उनका काम सौंपा गया था। महाराज के बैरिस्टर ने ग्रापत्ति की तो इम्पे साहब ने उन्हें घुड़क दिया। क्लर्क ग्राबद क्राउन ने अभियोग-पत्र पढ़ा।

मुकदमा एक जाली दस्तावेज़ का था। जब महाराज नन्दकुमार ग्रपने गुरु बापूदेव शास्त्री से मिलने गए थे, तो वे कुछ आभूषण उनकी पुत्री प्रमदादेवी के लिए भेंट-स्वरूप ले गए थे। परन्तु जब उन्होंने सुना कि प्रमदादेवी विधवा हो गई है, तो उन ग्राभूषणों का जिक्र उन्होंने उनसे नहीं किया। अब हकीकत यह थी कि उन्होंने वे ग्राभूषण मुर्शिदाबाद के एक साहूकार बुलाकीदास के यहां रख दिए थे। बुलाकीदास ने उनके एवज़ में अड़तालीस हज़ार इक्कीस रुपयों का एक दस्तावेज़ लिख दिया था। कुछ काल बाद बुलाकीदास मर गए। जब कलकत्ता में ग्रकाल पड़ा तो प्रमदादेवी ने पीड़ितों की सहायता करनी चाही और अपना विचार राजा नन्दकुमार पर प्रकट किया। नन्दकुमार ने तब उन ग्राभूषणों की बात प्रमदादेवी से कही और उनकी स्वीकृति पाकर वे रुपये बुलाकीदास की गद्दी से वह दस्तावेज़ दिखाकर ले लिए। उन रुपयों का ग्रन्न खरीदकर प्रमदादेवी ने भूखों को बांट दिया। ग्रब उसी दस्तावेज़ को जाली कहकर यह मुकदमा खड़ा किया गया था।

जब फरियादी के गवाहों की जबानबन्दी आरम्भ हुई तो पहली गवाही मोहनलाल की हुई।

यह वही आदमी था जिसकी पहली दरख्वास्त का मसौदा स्वयं कोर्ट के जजों ने बनाया था। पर यह बात फैसला हो चुकने पर प्रमाणित हुई। दूसरी साक्षी कमालुद्दीनखां की हुई। उसने कहा, 'महाराज ने मेरे नाम की मुहर मुझसे मांगी थी, आज चौदह वर्ष हुए मुझे वह वापस नहीं मिली।' जज के दस्तावेज़ दिखाने पर उसने अपनी मुहर की छाप को पहचान लिया। उसने यह भी कहा कि इस बात की खबर ख्वाजा पैट्रिक सदरुद्दीन और मेरे नौकर हुसैनअली को भी है।'

दस्तावेज़ पर मुहर में अब्दुल कमालुद्दीन की छाप थी। जिरह में जब उससे पूछा गया कि तुम्हारा नाम तो कमालुद्दीनखां है, यह मुहर तुम्हारी कैसे? तब गवाह ने कहा, 'धर्मावतार! मैं कभी झूठ नहीं बोलूंगा। मैं दिन में पांच बार नमाज़ पढ़ता हूं। मेरा नाम पहले अब्दुल कमालुद्दीन ही था। पर अब मेरी हैसियत बढ़ गई है, इसलिए मैंने अपने नाम के आगे का टुकड़ा छोड़कर नाम के पीछे लगा लिया।'

जिरह में जब पूछा गया कि तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि तुम्हारा नाम गवाही में दर्ज है? तब उसने कहा, 'महाराज ने मुझसे खुद ज़िक्र किया था कि हमने तुम्हारे नाम की मुहर गवाहों में लगा दी है; ज़रूरत पड़े तो इसके सबूत में तुम्हें गवाही देनी पड़ेगी। पर मैंने झूठी गवाही से साफ इन्कार कर दिया था। अल्ला-अल्ला! भला मैं झूठी गवाही दे सकता था!'

हुसैनअली, ख्वाजा पैट्रिक और सदरुद्दीन ने भी उसकी बात की पुष्टि की। दस्तावेज़ पर अब्दुल कमालुद्दीन, शिलावतसिंह और माधवराव के भी दस्तखत थे। कमालुद्दीन की गवाही तो हो चुकी, बाकी दोनों मर चुके थे। शिलावतसिंह के दस्तखत पहचानने को राजा नवकृष्ण आए थे। ये कायस्थ थे। इन्होंने शपथपूर्वक कहा कि यह शिलावतसिंह के दस्तखत नहीं हैं।

इतनी साक्षी होने पर भी मामला ज़ोरदार नहीं हुआ। वादी मोहनप्रसाद नौ बार और उसका गुमाश्ता कृष्णजीवनदास चौबीस बार गवाहों के कटहरे में खड़े किए गए। बार-बार जिरह किए जाने पर कृष्णजीवन ने झुंझलाकर कहा, 'पद्ममोहनदास के हाथ का लिखा एक

इकरारनामा बुलाकीदास ने स्वयं लिखा था; उसमें बुलाकीदास ने महाराज के १७६५ में अड़तालीस हज़ार इक्कीस रुपये के एक तमस्सुक की बाबत साफ-साफ लिखा था।'

कृष्णजीवन के इस इज़हार से कोर्ट के जजों और हेस्टिंग्ज़ के चेहरों का रंग फक हो गया। पर इम्पे साहब ने गम्भीरता से कहा, 'कृष्णजीवन ने अब तक जो गवाही दी थी, वह करारेपन से दी थी, पर इस इकरारनामे की बात कहती बार उसका कण्ठ अवरुद्ध हुआ है। इसलिए अन्तिम बात झूठ जान पड़ती है। निस्संदेह पद्ममोहन ने महाराज नन्दकुमार की साज़िश से एक इकरारनामा तैयार कर लिया था।'

उधर कान्त पोद्दार, मुन्शी नवकृष्ण, गंगागोविन्दसिंह और स्वयं हेस्टिंग्ज़ साहब नये-नये गवाह तैयार कर रहे थे और किसी तरह काम बनता न देखकर, उन्होंने आज़िमअली को गवाहों के कटहरे में लाकर खड़ा किया।

आज़िमअली नमक की कोठी के एजेण्ट एक अंग्रेज़ का खानसामा था। क्लाइव की प्रतिष्ठित सभा के सभ्य आवश्यकता होने पर इसे बहुधा सरकारी गवाह बनाया करते थे, क्योंकि उस समय सरकारी वकील नहीं होता था। जब किसी पर नमक की चोरी का अपराध लगाया जाता था तो आज़िमअली गवाह बनता था। पर अब वह सभा लोप हो गई थी। आज़िमअली ने अब एक औरत से निकाह पढ़ाकर लालबाज़ार में जूते की दुकान खोल ली थी।

तीसरी जून से सबूत के गवाहों की ज़बानबन्दी आरम्भ हुई थी। और ग्यारहवीं जून को सबूत की गवाही समाप्त हो गई थी। फिर भी बारहवीं जून को आज़िमअली गवाह पेश किया गया। यह कार्यवाही बेज़ाब्ता थी, पर इस मुकदमे में ज़ाब्ता ही क्या था!

गवाहों के कटहरे में आज़िमअली को खड़ा होते देख महाराज के गुमाश्ते और उनके दामाद के देवता कूच कर गए। वह एक सिद्धहस्त गवाह था। वे समझ गए, बस यह चश्मदीद गवाह बनकर आया है। चैतन्य बाबू ने इस समय धूर्तता से काम लिया। उन्होंने हाथ के इशारे से आज़िम को सौ, फिर दो सौ, फिर तीन सौ रुपये देने का इशारा किया, पर आज़िम न माना। वह हलफ उठाकर कहने लगा—

'मैं महाराज नन्दकुमार का मकान जानता हूं। उनके गुमाश्ता चैतन्यनाथ ने मेरी दूकान से जूता लिया था। मैं सन् १७६९ के जुलाई मास में चैतन्य बाबू से जूतों के दामों का तकाज़ा करने महाराज नन्द-कुमार के मकान पर गया। उसके दस दिन पहले बुलाकीदास की मृत्यु हो गई थी। वहां मैंने चैतन्य बाबू को काम में फंसे हुए पाया। पूछने पर उन्होंने कहा—इस समय महाराज एक जाली दस्तावेज़ बना रहे हैं, उसीमें मैं इस समय फंसा हूं। इसके बाद देखा, महाराज बैठक में नाक पर चश्मा चढ़ाकर एक बक्स में से पचीस-तीस मुहरें निकाल-कर उनका नाम ज़ोर-ज़ोर से पढ़ रहे हैं। एक मुहर को उन्होंने कमालुद्दीन की कहकर चैतन्यनाथ को दिखाया भी था।'

आज़िम का यह इज़हार सुनकर कोर्ट के जजों की आनन्द से बत्तीसी खुल गई। वे उत्सुकता से कहने लगे, 'गो ऑन।'

आज़िमअली ने कहा, 'हुज़ूर, इसके बाद तमस्सुक की शक्ल के कागज़ पर वह मुहर छाप दी गई।'

'कहे जाओ, कहे जाओ।'

'इसके बाद चैतन्य बाबू से महाराज ने कहा कि जहां मुहर लगाई है, उसके पास ही अब्दुल कमालुद्दीन का नाम भी लिख दो।'

'कहे जाओ।'

'चैतन्य बाबू ने कमालुद्दीन का नाम लिख दिया।'

'क्या तुम लिख-पढ़ सकते हो?'

'हुज़ूर, अब तो आंखों से दिखाई ही कम देता है, पर आगे फारसी पढ़-लिख सकता था।'

सर इम्पे ने कहा, 'फिर?'

'हुज़ूर, इसके बाद उसी कागज़ पर महाराज ने शिलावतसिंह और माधव के नाम भी गवाहों में लिख दिए।'

इस इज़हार से घबराकर चैतन्य बाबू ने एक हज़ार रुपये का इशारा किया। सब आज़िम ने भी इशारे ही से कहा, 'घबराओ मत, सबपर पानी फेरे देता हूं।' उधर जज और फरियादी के वकील अधीर होकर, 'गो ऑन,' 'गो ऑन' कहने लगे।

आज़िमअली ने कहा, 'सब काम खत्म होने पर महाराज उसे पढ़ने लगे।'

जजों ने अत्यानन्दित होकर कहा, 'अच्छा, अच्छा' फिर क्या हुआ?'

आज़िमअली ने कहा, 'बस, पढ़कर महाराज ने उसे अपने बक्स में रख लिया। तभी हमने सुना कि बुलाकीदास ने महाराज को तमस्सुक लिख दिया है।'

'फिर ! फिर !!'

'हुज़ूर, बस इसके बाद ही घर के भीतर मुर्गी बोली और मेरी नींद टूट गई। मेरी छोटी बीवी ने कहा---मियां ! आज क्या बिस्तर से नहीं उठोगे ? देखो, कितनी धूप चढ़ गई है !'

यह सुनते ही दुभाषिए इलियट साहब ने आज़िमअली के मुंह की ओर देखा। मुंह फटा का फटा रह गया। उनके मुंह से निकला, 'अयं !'

उधर इम्पे साहब ने दुभाषिए से अन्तिम बात समझाने को कहा और उधर गवाह से कहा, 'गो ऑन।'

आज़िमअली ने कहा, 'हुज़ूर इसके बाद मैंने अपनी छोटी बीवी से कहा---मीर की बेटी, मैंने ख्वाब में देखा है कि मैं महाराज नन्द-कुमार के मकान पर गया हूं और वे बुलाकीदास के नाम से एक जाली दस्तावेज़ बना रहे हैं।'

जब इलियट साहब ने गवाह की बातों को इम्पे को समझाया तब तो सुप्रीम कोर्ट के सुयोग्य जज विमूढ़ हो आज़िम के मुंह को देखने लगे। पर अब आज़िम ने 'गो ऑन' की प्रतीक्षा न कर कहना जारी रखा, 'धर्मावतार ! मेरी बात सुनकर मेरी छोटी बीवी ने कहा---मियां, तुम हमेशा राजा, उमराव, साहबों के मकानों पर आते-जाते हो, इसीसे सपने भी तुम्हें ऐसे ही दीखते हैं।'

गवाह के रंग-ढंग देखकर सारी अदालत सन्नाटे में आ गई। अन्त में इम्पे साहब ने महाराज के बैरिस्टर फरार साहब से पूछा, 'क्या आपको इस गवाह की साक्षी प्रमाण रूप से ग्रहण करने में कुछ उज्र है ?'

बैरिस्टर ने कहा, 'जब गवाह स्वप्न की बात कह रहा है तो मैं नहीं समझ सकता कि उसकी साक्षी कैसे प्रमाणभूत मानी जा सकती है।'

न्यायमूर्ति इम्पे ने कहा, 'मि० फरार ! इस गर्म मुल्क में पूरी-पूरी नींद शायद ही किसीको आती हो। प्रायः लोग अर्द्धतन्द्रावस्था में

रहते हैं। ऐसी दशा में यदि कोई मनुष्य ग्रांख, कान ग्रादि इन्द्रियों द्वारा कोई विषय ग्रहण करे तो उसके कथन को लॉर्ड थॉरलों साक्षी रूप से ग्रहण किए जाने में कोई आपत्ति उपस्थित न करेंगे।'

बैरिस्टर ने कहा, 'मुझे लॉर्ड थॉरलो के मतामत से कुछ मतलब नहीं। यदि आप इसकी गवाही प्रमाण मानना ही चाहते हैं तो मेरा भी उज्र दर्ज कर लिया जाए।'

न्यायमूर्ति इम्पे साहब ने मातहत तीनों जजों से सलाह करके आज़िमअली की गवाही प्रमाणस्वरूप ग्रहण कर ली ग्रौर ग्रासामी के बैरिस्टर को सफाई के गवाह पेश करने की ग्राज्ञा दी। बैरिस्टर फरार ने कहा कि ग्रासामी पर जुर्म प्रमाणित ही नहीं हुग्रा, तब सफाई कैसी? आसामी निर्दोष है। उसे रिहाई मिलनी चाहिए।

जज ने कहा, 'ग्रपराध सिद्ध हुग्रा है, ग्राप सफाई पेश न करेंगे तो हमें जूरियों को समझाने के लिए संगृहीत प्रमाणों की ग्रालोचना करनी पड़ेगी।'

३८

महाराज की ग्रोर से सफाई की गवाहियां पेश हुईं। बड़े-बड़े लोगों ने गवाहियां दीं। गवाही समाप्त हो चुकने पर जजों ने जूरियों को मुकदमा समझाया ग्रौर उसपर एक लम्बी वक्तृता समाप्त होने पर जूरी लोग दूसरे कमरे में उठ गए। आधे घंटे के बाद उन्होंने लौटकर कहा, 'महाराज नन्दकुमार अपराधी हैं।'

यह सुनते ही महामति इम्पे साहब ने महाराज को फांसी का हुक्म दे दिया।

हुक्म सुनाकर महाराज फिर जेल में भेज दिए गए। इस बार खेमे के बजाय एक दुतल्ला मकान उन्हें दिया गया। हजारों लोग—शत्रु-मित्र—उनसे मिलने ग्राते थे। नवाब मुबारकुद्दौला ने कौन्सिल की सेवा में एक पत्र भेजा। उसमें उसने प्रार्थना की थी कि इंगलैंड के महाराज की आज्ञा आने तक महाराज की फांसी रोकी जाए।

स्वयं महाराज ने भी जनरल क्लीवरिंग ग्रौर सर फ्रांसिस के पास

एक पत्र इस आशय का भेजा था—

'सर्वशक्तिमान ईश्वर के बाद आप पर मुझे आशा है। मैं ईश्वर के नाम पर नम्रतापूर्वक आपसे अनुरोध करता हूं कि इंगलैंड के बादशाह की आज्ञा आ लेने तक आप मेरी मृत्यु-आज्ञा को मुल्तवी करा दें। हिन्दुओं के मतानुसार मैं न्याय के दिन इस संकट से उबारने के लिए आपको आशीष दूंगा।'

सुप्रीम कोर्ट से फैसला होने पर भी कौंसिल को इतनी शक्ति थी कि वह इंगलैंड से आज्ञा आने तक फांसी रोक दे। परन्तु कौंसिल के सभ्यों ने इस मामले में पड़ना पसन्द नहीं किया। नवाब मुबारकुद्दौला के अलावा महाराज के भाई शम्भूनाथ राव आदि कई व्यक्तियों ने भी आवेदनपत्र भेजे, परन्तु उनका कुछ फल न हुआ।

महाराज को पांचवीं अगस्त को फांसी दी गई। किन्तु जनरल क्लीवरिंग ने १४ अगस्त को महाराज का वह पत्र कौंसिल में खोला। उस दिन महाराज का दशम संस्कार भी हो चुका था। १६ अगस्त को एक मन्तव्य बनाकर उस पत्र की प्राप्ति कौंसिल के कागज़-पत्रों में से निकाल दी गई।

क्लीवरिंग को जो पत्र उर्दू में महाराज ने लिखा था, उसके विषय में हेस्टिग्ज़ ने कहा कि इसमें जजों के आचरण की आलोचना की गई है। अतः यह पत्र जजों के पास भेज देना चाहिए। परन्तु फ्रांसिस साहब ने कहा, 'ऐसा करने से पत्र का महत्त्व बढ़ जाएगा। इसमें लिखी हुई बातें झूठी और जजों का अपमान करनेवाली हैं। मेरी राय में यह पत्र शेरिफ साहब को दे दिया जाए ताकि वे इसे किसी आम जगह में सब लोगों के सामने किसी जल्लाद के हाथ से जलवा दें।' दूसरे दिन सोमवार को वह पत्र चौराहे पर जल्लाद के हाथ से जलवा दिया गया।

३९

हेस्टिग्ज ने और भी बड़े-बड़े कारनामे किए। रज़ाखां की गिरफ्तारी के बाद नवाबी के रहे-सहे अवशेष भी खत्म हो गए। मुर्शिदाबाद का

खज़ाना कलकत्ता के फोर्ट विलियम में आ गया। अब तो कम्पनी का खजाना लबरेज था और हेस्टिंग्ज़ उसे भरे जा रहा था। उसने बादशाह की तीस लाख रुपये वार्षिक पैंशन भी कम कर दी। गोंडा और इलाहाबाद के ज़िले पांच लाख में नवाब अवध को बेच दिए। इसके बाद रुहेलखण्ड की लड़ाई में नवाब अवध को सहायता देने के बदले साठ लाख रुपये और सेना का खर्च नवाब से वसूल किया। इस युद्ध ने रुहेलखण्ड की घाटियों में आग लगा दी। एक लाख से अधिक व्यक्ति घरबार छोड़कर जंगलों में भाग गए। उन्हें अपने बीवी-बच्चों सहित भुखमरी, ज्वर और कांटों से भरे जंगलों का सामना करना पड़ा। अपने वैरी सर फ्रान्सिस को उसने द्वन्द्व-युद्ध में परास्त किया।

अंग्रेज़ों के लिए यह विकट परिस्थिति थी। उन दिनों इंगलैंड अमेरिका और यूरोप में बुरी तरह उलझा हुआ था। अमेरिका ने अंग्रेज़ों के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा खड़ा किया था, और इस सुयोग से लाभ उठाकर इंगलैंड के पुराने शत्रु फ्रांस ने भी सिर उठाया था। भारत में भी कम्पनी की सरकार ने महाराष्ट्र, मैसूर आदि राज्यों के संघर्ष सिर पर उठा लिए थे। इस बीच हेस्टिंग्ज़ बहुत धन इंगलैंड भेज चुका था। अब उसने और धन बटोरने को पूना और मैसूर की सरकारों से लड़ाई छेड़ दी थी। उसे अधिक से अधिक रुपयों की ज़रूरत थी। उसने बनारस के राजा चेतसिंह पर हाथ डाला। वह साढ़े बाईस लाख रुपया हर साल कम्पनी को देता रहा था। अब उससे और पांच लाख की रकम मांगी जा रही थी। वह मिल गई तो हर साल मांगी जाने लगी। उसने दो लाख रिश्वत भी दी, पर उसका छुटकारा न हुआ। और अब उससे चालीस लाख वार्षिक रकम मांगी जा रही थी। अन्त में उसका राज्य खुर्द-बुर्द हो गया और बनारस शहर ही उजड़ गया। राजा चेतसिंह को गृहहीन की भांति ग्वालियर में जीवन के शेष दिन काटने पड़े।

अब वह नवाब अवध की ओर झुका और नवाब की सलाह से अवध की विधवा बेगमों को धर दबोचा। बेगम चालीस लाख पहले ही दे चुकी थीं, पैंतालीस लाख अब और दिए और वादा ले लिया कि अब और तंग न की जाएंगी। पर छः बरस बाद ही फिर अंग्रेज़ी फौजों

ने बेगम का महल घेर लिया। उसने ज़बर्दस्ती महल के द्वार खुलवा लिए, बेगमों को कमरों में बन्द कर दिया। खज़ाने की चाभियां मांगी गईं। चाभियां न दी गईं तो नौकरों पर अत्याचार प्रारम्भ किए गए। अन्त में बेगमों ने हार मानी और पन्द्रह लाख के जवाहर देकर जान छुड़ाई।

ये मोटे-मोटे आंकड़े थे। छोटों का अन्त न था। अन्त में पटाक्षेप का समय आया। द्वन्द्वयुद्ध में हारे हुए सर फ्रांसिस ने लंदन में हेस्टिंग्ज़ के अत्याचारों का धूम-धाम से भण्डाफोड़ कर दिया था। भारत में उसके दोस्त सर इम्पे से उसकी खटक गई। अन्त में वारेन हेस्टिंग्ज़ को वापस बुला लिया गया। सर इम्पे को भी बर्खास्त कर दिया गया।

इंगलैंड में हेस्टिंग्ज़ के सिर पर वज्र गिराने की सब तैयारी हो चुकी थी। उसके दोस्तों ने उसका स्वागत किया। पर लंदन पहुंचे अभी उसे एक सप्ताह भी न हुआ था कि इंगलैंड के प्रसिद्ध राजनैतिक अग्रणी और अपने समय के सर्वोत्कृष्ट वक्ता एडमण्ड बर्क ने पार्लियामेंट में उसके विरुद्ध प्रस्ताव उपस्थित किया। इस मुकदमे से सारा इंगलैंड हिल गया। मुकदमा आठ बरस चला। बर्क ने गरजकर कहा, 'इस मुकदमे का सम्बन्ध केवल भारत के हितों के फैसले ही से नहीं है, अंग्रेज़ जाति के यश और मान से भी है।' उसके सब काले कारनामे राई-रत्ती खोलकर रखे गए। पर अन्त में उसे छोड़ दिया गया। मुकदमे में वारेन की सब कमाई खर्च हो गई और वह लगभग कंगाल हो गया।

सर इम्पे पर भी अन्याय करने, झूठी गवाहियां बनाने और झूठे हलफनामे तसदीक करने के मुकदमे चले, पर उसे यह कहकर छोड़ दिया गया कि ज़ुल्मों का प्रकट हो जाना ही काफी है।

छठा खण्ड

१

प्लासी की लड़ाई से पहले जैसा गुलज़ार और आबाद शहर कासिम बाज़ार था, लगभग वैसा ही सैदाबाद था। कासिम बाज़ार में अंग्रेज़ों की कोठी थी और सैदाबाद में फ्रैंचों, डचों और आरमीनियों की कोठियां थीं। यद्यपि कासिम बाज़ार में भी फ्रांसीसी, डच और आरमीनियन लोगों की कोठियां थीं, परन्तु यहां अंग्रेज़ों का ही बोल-बाला था और अंग्रेज़ कोठीवाले इस बात की सख्त ताकीद रखते थे कि कोई तन्तुकार जुलाहा अंग्रेज़ों के अतिरिक्त फ्रांसीसियों या डचों के हाथ कपड़ा न बेचे। यदि वह ऐसा करता था तो अंग्रेज़ी कोठी के गुमाश्ते और साहब लोग उसका घर लूट लेते और उसे जेल में डाल देते थे। उनकी स्त्रियों का भी अपमान करते थे। फ्रांसीसी और डच उन्हें कपड़े का अच्छा दाम देते थे, पर अंग्रेज़ों के भय से कोई उन्हें माल बेचता ही न था। फिर भी झूठी-सच्चा बातों की कोई जांच नहीं होती थी और जिसपर यह शक होता था कि उसने उन लोगों से व्यापार किया है, उसपर गज़ब ढहा दिया जाता था। उनकी स्त्रियां भ्रष्ट कर डाली जाती थीं। इसपर जातिवाले उन्हें जातिच्युत कर देते थे। उन दिनों कासिम बाज़ार में जुलाहों की बड़ी भारी बस्ती थी। पर जिस दिन मीरकासिम हारकर भागा उसी दिन सात सौ जुलाहे अपना गांव छोड़कर भागे और सैकड़ों ने अपने अंगूठे काट डाले।

सैदाबाद में अंग्रेज़ों के अत्याचार कम होते थे। उन दिनों सैदाबाद में दो भाई जगाई और छदाम रहते थे। दोनों जाति के गोप शूद्र थे। वे बहुत गरीब आदमी थे। थोड़ी-सी ज़मीन उनकी थी। उसीमें धान

बोकर या मेहनत-मज़दूरी करके वे अपनी गुज़र करते थे। इनकी उम्र पच्चीस या तीस बरस की हो चुकी थी, फिर भी इनका व्याह नहीं हुआ था। बचपन ही में इनके पिता की मृत्यु हो गई थी और उनका पिता कौन था, इसकी याद भी उन्हें नहीं थी। ये लोग खेतों में तरकारी बोते और उसे सिर पर रखकर फिरंगियों की कम्पनी में बेचा करते थे। छदाम छोटा भाई ही यह फेरी का धंधा करता था। बड़ा भाई खेतीबारी में लगा रहता था। फेरी लगाते-लगाते उसका परिचय बहुत-से साहब लोगों से हो गया। वह तरकारी और नीबू बेचने कासिम बाज़ार भी जाता था। कभी-कभी वारेन को दो-चार नीबू उपहार में दे देता था। इससे प्रसन्न होकर वारेन हेस्टिंग्ज़ ने उसे रेशम की कोठी में दलाली करने का परवाना दे दिया और वह दलाली करने लगा। आदमी बुद्धिमान था। उसका बुद्धि-कौशल देख वारेन साहब की ज़मानत पर उसे कोठी में प्यादा नियत कर दिया गया। उन दिनों कोठी के प्यादों को बहुत आमदनी होती थी। फिर छदाम तो वारेन का प्रिय व्यक्ति था। प्यादा बनकर उसे केवल आर्थिक लाभ ही नहीं हुआ, इज़्ज़त भी बढ़ गई। प्यादा होने के बाद उसने छः ही महीने के भीतर अपने भाई जगाई का तथा अपना व्याह भी कर लिया। अब छदाम को अंग्रेज़ों की कोठी में दलाली करते आठ-नौ बरस हो चुके थे। उसने काफी रुपया जमा कर लिया था। इसी समय विलियम वोल्ट्स कासिम बाज़ार की फैक्टरी के प्रधान नियत होकर आए। उन दिनों कम्पनी के आदमी अपना निजी कारोबार करके भी रुपया कमाते थे। उन्होंने छदाम की दक्षता देख उसे अपने निजी व्यापार का दीवान बना लिया।

छदाम में व्यापारिक सूझ-बूझ तो थी ही, एक और भी गुण था, जिसे अंग्रेज़ बहुत पसन्द करते थे। वह जब कोई काम करने पर तुल जाता था तब उचित-अनुचित का विचार नहीं करता था। न ज़ुल्म, अत्याचार, झूठ और बेईमानी करने में उसे संकोच होता था। इन गुणों के कारण छदाम शीघ्र ही बड़े साहब की नाक का बाल हो गया और केवल चौदह महीने में ही उसने डेढ़ लाख रुपया पैदा कर लिया। वोल्ट्स साहब को भी उसकी सहायता से इन दिनों नौ लाख का मुनाफा हुआ। परन्तु छदाम के अत्याचारों से घबराकर सैकड़ों जुलाहे

घरबार छोड़कर भाग खड़े हुए। सैंकड़ों ने अपने हाथों के अंगूठे काट लिए।

छदाम ने अब बहुत-सी ज़मींदारी मोल ले ली तथा पुख्ता हवेली भी बना ली। अब वह फीनस या पालकी में आफिस आता था। उसे कोई छदाम बाबू, कोई विश्वास महाशय और कोई बड़े बाबू के नाम से पुकारते थे। अब उनका नाम छदामचन्द्र विश्वास और जगन्नाथ विश्वास हो गया था। गांव के लोग अब उन्हें शूद्र नहीं मानते थे और पूछने पर वे अपने को कायस्थ कहते थे। बंगाल में कायस्थों की दो श्रेणियां हैं। एक बंगज कायस्थ, दूसरे दक्षिणबाढ़ी कायस्थ। चौबीस परगना में जो यशोहर राज्य था, वहां के राजा प्रतापादित्य के वंशज बंगज कहाते थे। ये कुलीन थे और प्रायः बाखरगंज आदि पूर्वी प्रदेशों में रहते थे। दक्षिणबाढ़ी कायस्थ अधिकतर हुगली, वर्द्धमान, कृष्णनगर आदि नगरों में रहते थे। छदाम विश्वास ने अपने को दक्षिणबाढ़ी कायस्थों में शुमार कर लिया। अब वे बड़े आदमी अवश्य हो गए थे परन्तु रिश्ते अभी कुलीन कायस्थों में नहीं हुए थे। छदाम विश्वास के केवल एक इकलौती बेटी थी। उसकी उम्र जब दस बरस की हुई तो उन्होंने घटक को बुलाकर कहा, 'रुपया चाहे जितना खर्च हो, पर लड़की की शादी घोष, वसु, मित्र और गुह इन चारों में ही किसी घराने में करेंगे।' कायस्थों के ये सर्वोच्च कुलीन घराने थे। घटक ने बहुत जोड़-तोड़ लगाए, पर कोई कुलीन कायस्थ लाख रुपया लेकर भी छदाम बाबू की लड़की लेने को राज़ी नहीं हुआ। बंगाल में घटक ही कुलीनों के वर तलाश करते हैं। इस घटक ने ही छदामचन्द्र की यह कुल-परम्परा तैयार कर ली थी कि छदाम के प्रपितामह अनूपनारायण विश्वास इस प्रदेश के एक प्रतिष्ठित आदमी थे। बड़े सदाचारी एवं कुलीन थे। बड़े-बड़े कुलीन कायस्थों में उनके रिश्ते होते थे। नवाब के दरबार में उनका बड़ा मान था। उनकी मृत्यु के समय उनके पुत्र छदाम के पितामह नाबालिग थे। इसलिए उनकी रियासत ज़ब्त हो गई और धीरे-धीरे ये लोग बहुत गरीब हो गए। पर छदाम बाबू तो अब देश के राजा हैं। उन्होंने अतोल धन कमाया है। बंगला-फारसी के उस्ताद हैं। उनका घराना बहुत पुराना और प्रतिष्ठित है। परन्तु इतनी विरद बखानने पर भी कोई कुलीन उनकी लड़की लेने

को राज़ी नहीं हुआ। छदाम और जगन्नाथ ने आज तक अपने प्रपिता का नाम नहीं सुना था। अपनी यह विरुदावली सुनकर वे कहने लगे, 'हां-हां, अनूपनारायण विश्वास ही हमारे परदादा थे, पर उनके दादा और पिता कौन थे, यह वे अभी तक भी न जान पाए थे। इन्हीं दिनों चांचड़ा गांव के ताल्लुकेदार कृष्णमोहन दत्त बड़े परेशान थे। वे ऐयाश आदमी थे। शराब और ऐयाशी से क़र्ज़े में डूब गए थे। ताल्लुके की बहुतसी मालगुज़ारी उनके ज़िम्मे बाकी पड़ी थी और सरकारी प्यादे उनका वारण्ट लिए फिरते थे। इससे वे अपने सुयोग्य पुत्र के साथ इधर-उधर सिर छिपाए फिर रहे थे! पुत्र भी उनका पूरा आवारागर्द, गंजेड़ी और निरक्षर था। उनकी घटक से मुलाकात हुई और केवल दस हज़ार नकद लेकर वे छदाम की लड़की से अपने पुत्र का विवाह करने को राज़ी हो गए। छदाम को दत्तों का कुलीन घराना सस्ते ही में मिल गया। कृष्णमोहन ने कहा, 'मेरे यहां सम्बन्ध करने से देश-भर के कुलीन बारात में उनके घर आएंगे और उनका छुआ भात खाएंगे।'

उन दिनों कुलीनता का बड़ा प्रताप था। न वर का चरित्र देखा जाता था, न शिक्षा। बस, कुल देखा जाता था।

बड़े समारोह से छदाम विश्वास की बेटी का ब्याह दत्तों के कुलीन खानदान में हो गया। छदाम ने कोई पचास हज़ार रुपया खर्च किया। पर लोगों ने कहा, 'दस लाख खर्च हुआ पन्द्रह लाख हुआ है।' इसके बाद उन्होंने दामाद को घर-जमाई बनाकर रखा। दामाद अपढ़ था, इसलिए उन्होंने रामदास शिरोमणि और हरिदास तर्करत्न की पाठशाला में दामाद को भरती करना चाहा, पर उन्होंने स्वीकार नहीं किया। उन्होंने कहा, 'ब्राह्मण के अतिरिक्त शास्त्र पढ़ने का किसीको अधिकार नहीं है। तुम्हारे दामाद को पढ़ाने से हमें पतित होना पड़ेगा।' छदाम खुद भी पढ़ना-लिखना नहीं जानते थे। पर लोग उन्हें बंगला-फारसी का मुन्शी कहते थे। पढ़ने की कीमत वे जानते थे। उन्होंने दो सौ रुपये महीना देने का वादा करके तर्करत्न महाशय को गुप्त रीति पर पढ़ाने के लिए राज़ी कर लिया। छदाम के दुश्मन बहुत थे। बहुतों को वे तबाह कर चुके थे। एक दिन किसीने घर लौटते समय उनका खून कर दिया। इस घटना के थोड़े दिन बाद ही

छदाम की कन्या का भी देहान्त हो गया। पर दामाद ने घर नहीं छोड़ा। कुछ दिन बाद छदाम की विधवा और दामाद के सम्बन्ध में बहुत-से अपवाद उठ खड़े हुए। तब एक दिन सास-दामाद दोनों, जो मालमता, जेवर हाथ लगा, लेकर वैष्णव बन प्रेमानन्द बाबा के अखाड़े में रहने लगे। वहां अवसर पाकर सब मालमता कब्जे में कर दामाद महाशय कहीं चम्पत हो गए और बेचारी छदाम की विधवा को वैष्णवियों के साथ भिक्षावृत्ति पर शेष जीवन व्यतीत करना पड़ा।

ज़मीन-जायदाद सब जगन्नाथ विश्वास के हाथ लगी। उनके बुढ़ापे में एक संतान हुई। बालक का नाम रखा गया यादवेन्द्र। बालक बुद्धिमान और होनहार था। उसने अंग्रेजों को अपनी सेवा और योग्यता से प्रसन्न कर लिया और महाराज का खिताब पाया। इस समय महाराज यादवेन्द्रनाथ विश्वास कलकत्ता के सब कुलीन बंगालियों के शिरोमणि और सबसे बड़े धनिक प्रसिद्ध थे।

२

इस समय महाराज यादवेन्द्र विश्वास ने अपने नये महल में धूम-धाम का जलसा किया। अंग्रेजों ने उन्हें महाराजा बहादुर का खिताब दिया था और पुण्यरूपा रानी भवानी के पौत्र राजा रामकृष्ण की सब ज़मींदारी खरीदकर वे इस समय बंगाल के सबसे बड़े ताल्लुकेदार बन गए थे। महल उन्होंने अंग्रेज़ी ढंग का बनाया था। उसमें अंग्रेज़ी ढंग की फुलवारी और क्यारियां लगवाई गई थीं। इस समय नौकरों की एक फौज भी उनके महल में भरी हुई थी। महाराजा बहादुर की उम्र पैंतीस ही तक पहुंची थी। अभी उन्होंने विवाह नहीं किया था। इतने दिन बाद अब इस वर्ष उन्होंने अपना विवाह किया था, वर्द्धमान के प्रसिद्ध मित्र परिवार की लड़की से। मित्र परिवार कभी बड़ा सम्पन्न था। उसका बड़ा मान और दबदबा था। ज़मीन-जायदाद भी काफी थी। प्रथम श्रेणी के कुलीन थे। आरम्भ में इस परिवार के गोविन्द मित्र कम्पनी बहादुर के गवर्नर-जनरल कार्नवालिस के दाहिने हाथ थे। उन्होंने कार्नवालिस द्वारा प्रस्तावित चिरस्थायी बन्दोबस्त

पद्धति को बंगाल में प्रसारित किया था। इसीसे बड़े लाट के वे कृपा-भाजन हुए। उनके ठाट-बाट राजाओं के समान थे। रानी भवानी की उन्होंने एक बार कठिन समय पर सहायता की थी। जिसके पुरस्कारस्वरूप उन्होंने उन्हें पांच गांव पुरस्कार में दिए थे। परन्तु अब उनके उत्तराधिकारी अपनी पद-मर्यादा कायम न रख सके। धीरे-धीरे ज़मींदारी बिक गई और अब मित्र परिवार का केवल नाम का महत्त्व ही रह गया। परन्तु यह महत्त्व भी असाधारण था। महाराजा बहादुर ने ज़िद की थी कि मित्र परिवार की कन्या से ही विवाह करेंगे। धन-सम्पत्ति तो उनके पास थी। अब महाराजा बहादुर का खिताब पाकर उनकी व्यावहारिक मान-मर्यादा भी बहुत बढ़ गई थी। बड़े-बड़े अंग्रेज़ अफ़सर उनके यहां आ चुके थे। छदाम विश्वास ने कुलीनों से सम्बन्ध किया था, पर इतने पर भी उनकी सामाजिक मर्यादा हीन थी। जाननेवाले जानते ही थे कि वे जात के गोप शुद्र हैं। रुपया कमाने ही से वे बड़े आदमी हो गए। यों तो मनुष्य चरित्र, गुण से लोक-पूजित होता है पर हमारे देश भारत में बहुत दिन से धनवान व्यक्ति ही बड़े कहाने लगते हैं। हकीकत में साहसिक अंग्रेज़ साहसिक भारतीयों को चुनकर राय बहादुर और राजा बहादुर बना देते थे। साहसिकजन की पहचान तो यही थी कि विना भले-बुरे का विचार किए कार्यसिद्धि पर दृष्टि रखे। अंग्रेज यही स्वयं करते थे। गवर्नर-जनरल से लेकर छोटे से छोटा अंग्रेज़ भी कार्यसिद्धि को महत्त्व देता रहा। परन्तु भारतीय परम्परा में साहसिकजन नहीं हैं, भद्रजन हैं। अतः इन नीच जाति में उत्पन्न जनों की संतान जब धन-सम्पन्न हो गई तो उन्होंने अपने भद्रजनोचित नाम रखकर भद्रजनों की श्रेणी में प्रवेश किया।

महाराज यादवेन्द्र विश्वास ने भी यही किया। धन-सम्पदा, उपाधि आदि से वे बड़े आदमी बन गए थे, पर जाननेवाले तो जानते थे कि वे जाति के गोप शूद्र हैं। इसीलिए उन्होंने मित्रों के खानदान की लड़की से ब्याह कर भद्र श्रेणी में आगे और एक कदम बढ़ाया। इस ब्याह में उन्हें बहुत खर्च करना पड़ा। बारात ठाट-बाट की गई और दोनों ओर का व्यय राजा बहादुर के मत्थे पड़ा। पर इससे महाराज बहादुर खुश ही थे। उन्होंने बड़ी धूम-धाम से अपने घर पर

जलसा किया। जलसे में गवर्नर से लेकर सभी छोटे-बड़े अंग्रेज़ आए। बहुत-से बंगाली भद्रजन रईस भी आए। केवल रानी भवानी के पौत्र राजा रामकृष्ण ने उनके घर आने में संकोच किया। परन्तु अंत में आना उन्हें भी पड़ा।

इस समारोह में एक और व्यक्ति बिना बुलाए ही आ गया था। अंग्रेज़ी बाजा बज रहा था। रोशन चौकी की धूम थी। बाहर भारतीय और अंग्रेज़ मेहमानों का तांता लग रहा था। महाराजा स्वयं व्यस्त भाव से उनके स्वागत सत्कार में लगे थे। ज़नाने में बड़ी-बड़ी रानियां और भद्र परिवार की महिलाएं तथा अंग्रेज़ लेडियां नई रानी को बड़ी-बड़ी सौगातें देने आई थीं। महारानी साहबा जड़ाऊ गहने पहनकर गम्भीर भाव से गद्दी पर मसनद के सहारे बैठी सबसे भेंट-मुजरे ले रही थीं। इतनी सम्भ्रांत महिलाएं वहां जुड़ी थीं, पर किसीका साहस न था कि महारानी के बराबर गद्दी पर बैठे। सभी सामने कालीन पर बैठकर जुहार-मुजरा कर रही थीं। इस समय एक स्त्री सादा धोती पहने रानी के सम्मुख आ खड़ी हुई। आगन्तुका स्त्री की आयु बहुत कम थी। कोई बीस वर्ष होगी। उसका यौवन और रूप बिखरा पड़ रहा था, यद्यपि उसके शरीर पर एक ही सफेद धोती थी तथा उसके अंग पर एक भी गहना न था। गहने के नाम एक लाल धागा उसकी कलाई में बंधा था। फिर भी वह स्त्री निःशंक आकर रानी के सामने खड़ी हो गई। उसकी दृष्टि में दैन्य न था। सभी स्त्रियां आश्चर्यचकित होकर उसकी ओर देखने लगीं। आश्चर्य की बात यह थी कि किसने इस भिखारिणी को महल में घुस आने दिया। एक प्रगल्भा महिला ने पूछा, 'तुम कौन हो और किस अभिप्राय से महारानी-जी की सेवा में आई हो?'

'अनुग्रह करने के अभिप्राय से।' उसने आगे बढ़कर रानी से कहा, 'तुम कदाचित् मुझे नहीं पहचानती हो। तुम्हारे दादा गोविन्द मित्र मेरे श्वसुर के शिष्य और यजमान थे। मैं सप्तग्राम के भट्टाचार्य महाशय की पुत्रवधू हूं।'

उस स्त्री के ये वाक्य सुनकर रानी आंखें फाड़-फाड़कर आगन्तुक स्त्री की ओर देखने लगी। फिर हठात् गद्दी छोड़कर उठ खड़ी हुई। उसने कहा, 'आप सप्तग्राम के भट्टाचार्य महाशय की पुत्रवधू हैं?'

उसने गले में आंचल डालकर उस स्त्री की चरणधूलि मस्तक पर चढ़ाई और गद्दी पर मसनद के सहारे बिठाकर कहा, 'मेरे अहोभाग्य, किन्तु···!'

आगे की बात उसके मुंह से नहीं निकली और रानी उसकी विपन्नावस्था देख लज्जा से सिर नीचा किए उसके सम्मुख बैठी रह गई। सभी स्त्रियां आश्चर्य और कौतूहल से उस एकवस्त्रधारिणी स्त्री को देखने आ जुटीं।

रानी ने कहा, 'मैं आपको जानती हूं। आपके श्वसुर ने पचास हज़ार रुपया ऋण देकर मेरे दादा को बन्दीगृह से छुड़ाया था तथा सारी मालगुज़ारी अदा कर दी थी। परन्तु दुर्भाग्य कि अगले वर्ष कम्पनी बहादुर ने फिर मालगुज़ारी वसूल की। और उसे अदा न कर सकने से हमारी सब ज़मींदारी कुर्क हो गई। हम विपन्नावस्था में पड़ गए। आपके श्वसुर का रुपया भी न दे सके। इसी दुःख में मेरे दादा की मृत्यु हो गई।'

'परन्तु मेरे श्वसुर ने वे रुपये तुम्हारे दादा को कर्ज़ तो दिए न थे। तुम्हारे दादा मेरे श्वसुर के शिष्य थे—उनकी संकटावस्था जान सहायता की थी। इसी प्रकार और शिष्यों को भी उन्होंने रुपये दिए थे। किसीको बीस हज़ार, किसीको पन्द्रह हज़ार, किसीको पच्चीस हज़ार। इससे बहुतों की ज़मींदारियां बच रहीं। परन्तु मेरे श्वसुर अपनी मालगुज़ारी न दे सके, इससे उन्हें उनकी ज़मींदारी से बेदखल कर दिया गया और उन्हें तथा मेरे पति को कैद कर लिया गया। इसके बाद हमारी ब्रह्मोत्तर ज़मीन भी कम्पनी सरकार ने छीन ली और हम निरीह निराश्रय रह गए। हमारे यजमान भी सब संकटग्रस्त हो गए थे। देश में दुष्काल पड़ा था। मेरे श्वसुर की मृत्यु जेलखाने ही में हो गई। पीछे मेरे पति बड़ी कठिनाई से छूटे। परन्तु वे तेजस्वी पुरुष हैं, इस अवस्था में कहीं आते-जाते नहीं हैं। चण्डी-मण्डप में उन्होंने पाठशाला खोली है। वहीं वे देश-देशांतर से आए शिष्यों को न्याय पढ़ाते हैं।'

'और भट्टाचार्य महाशय का निर्वाह अब कैसे होता है।?'

'इसमें कोई दिक्कत नहीं है। विद्यार्थी भिक्षा ले आते हैं। मैं भात रांध देती हूं। भट्टाचार्य महाशय और विद्यार्थियों के आहार के बाद

जो शेष बचा रहता है मैं खा लेती हूं। हमारा काम मजे में चल रहा है ?'

उस स्त्री ने मृदु मुस्कान होंठों पर ला रानी की ओर देखा, जो इस समय हीरे, मोती और रत्नों से लदी थी।

रानी के नेत्रों से आंसुओं की धार बह निकली। उसने कहा, 'कैसे आश्चर्य की बात है, दीनाजपुर, मालवा और रंगपुर के ज़िलों के सभी सम्भ्रान्त ज़मींदार और श्रीमन्त लोग जिनकी चरणधूलि सिर पर चढ़ाकर अपने को धन्य मानते थे, जो नवद्वीप-भर में न्याय के सूर्य माने जाते थे, जिनकी ब्रह्मोत्तर ज़मीन की वार्षिक आय पचास-साठ हज़ार रुपयों से कम न थी ; विवाह और श्राद्ध समारोहों में जिन्हें बुलाने के लिए बारह हाथी, आठ-दस घोड़े, एक-दो पालकी और बीस-पच्चीस नौकर-गुमाश्ते जाते थे ; जिनकी चरणधूलि पड़ने से सब गृहस्थों के घर पवित्र हो जाते थे, उनकी जेलखाने में मृत्यु हुई। अपना सर्वस्व दूसरों को देकर स्वयं विपद्ग्रस्त बने। और यह उनकी पुत्रवधू इस वेश में आई हैं, मेरे ऊपर अनुग्रह करने के अभिप्राय से। कैसे मैं इस अनुग्रह से उऋण हो सकती हूं भला ?'

रानी की आंखों में ज़ार-ज़ार आंसू बह चले। आगन्तुक स्त्री ने आंचल से एक काठ की डिबिया निकालकर उसमें का सिंदूर रानी की मांग में डालते हुए कहा, 'अनुग्रह से उऋण होने की आवश्यकता नहीं है बहिन, तुम हमारी यजमान हो। भट्टाचार्य महाशय कहीं आते-जाते नहीं हैं। न्यायशास्त्र के पठन-पाठन से उन्हें अवकाश नहीं मिलता है। इसीसे जब मैंने सुना कि तुम सौभाग्यवती हुई हो तो सिंदूर-दान देने चली आई। लो अब मैं चली। विद्यार्थी सब आ गए होंगे। भात बनाकर देना होगा मुझे।'

वह ब्राह्मणी उठकर चल दी। रानी और दूसरी स्त्रियां हक्का-बक्का खड़ी देखती रह गईं। उनके मुंह से बोल भी न फूटा।

३

वर्षा ऋतु थी। भादों का महीना। गंगा के पश्चिमी तट पर

तनिक हटकर गौरीपुर गांव था। गंगा-तट से गांव तक वृक्षों की एक लम्बी कतार दूर तक चली गई थी। गंगा पूरे वेग से बह रही थी। घाट पुराना था। टूटा-फूटा सा, पर अभी दो-चार पक्की सीढ़ियां उसमें बनी थीं। उनमें कुछ पानी में डूब गई थीं। घाट पर इस समय बड़ी भीड़-भाड़ थी। बहुत स्त्री-पुरुष घाट पर जमा थे। घाट से गांव तक आदमियों का तांता लगा था।

गौरीपुर के ज़मींदार राधामोहन मजूमदार के पुत्र की अचानक ही हैज़े से मृत्यु हो गई थी और अब उसकी नवविवाहिता बालपत्नी सती हो रही थी। सारा वातावरण शोक और हाहाकार से भरा हुआ था। घाट पर चिता बनी हुई थी और उसपर मृत तरुण का शव रखा हुआ था। बहुत-से ब्राह्मण आवश्यक उपचार कर रहे थे। चिता के निकट घाट की पत्थर की सीढ़ी पर पैर लटकाए वह बिलकुल अबोध बालिका लगभग बेसुध-सी बैठी थी। उसका नखशिख-शृंगार किया गया था। नवीन रंगीन चुनरी पहनाई गई थी। मांग में सिन्दूर दिया गया था। हाथों में सुहाग का चूड़ा था। उसकी आयु अभी केवल तेरह वर्ष की होगी। उसके मुख पर अभी भी बालभाव था। विवाह हुए अभी एक वर्ष भी नहीं हुआ था और वह अभी पितृगृह में ही थी, जो यहां से दो-तीन कोस पर था। आज भोर ही में उसके वैधव्य का समाचार मिला था और उसे वहां से पति के साथ सहगमन करने को बुलाया गया था। उसीकी प्रतीक्षा में कई घण्टों तक चिता प्रज्वलित नहीं की गई थी। बालिका को होश नहीं था। उसे भांग और धतूरा अधिक मात्रा में पिलाया हुआ था। वह सीधी नहीं बैठ सकती थी। दो प्रौढ़ा ब्राह्मणियां उसे दोनों ओर से मज़बूती से जकड़े बैठी थीं।

इसी समय चिता की सब तैयारी सम्पूर्ण हो गई। किसीने उच्च स्वर से कहा, 'सती को गंगा-स्नान कराकर चिता पर लाओ।' ब्राह्मणियों ने उसे उठाकर एक डुबकी दी। एक बार उसने आंखें खोलीं पर फिर उसकी आंखें बन्द हो गईं। एक प्रकार से घसीटते हुए उसे चिता तक ले आया गया। चिता पर उसे मृत पति के चरण गोद में लेकर बिठा दिया गया। गोद में बहुत-सा कपूर घृत में डुबोकर रख दिया गया। जगह-जगह घृत और राल चिता पर छिड़क दी गई। एकाएक सब बाजे, डफ, ढोल, दमामे ज़ोर से बज उठे। चिता में आग लग गई।

चिता ज्वलनशील पदार्थों के संयोग से एकबारगी ही जल उठी। बाजों के शब्द से या आग की असह्य ज्वाला से या मृत्यु के प्रत्यक्ष दर्शन से वह बालिका एकाएक चैतन्य हो गई। वह एक ज़ोर की चीत्कार कर लुढ़कती हुई चिता से कूद पड़ी।

यह देख पांच-सात ब्राह्मण अपने जनेऊ संभालते आगे बढ़े। अधर्म, पाप, कलियुग, घोर कलियुग आदि शब्द उनके मुंह से निकले। उनके हाथ में गीले बांसों की बनी एक-एक ठठरी थी, जो कदाचित् ऐसे ही समय के लिए बनी हुई थी। उसी ठठरी से उन्होंने बालिका को दबोच लिया। वह ठठरी के नीचे से छटपटाने और आर्तनाद करने लगी। पर इसी समय उन ब्राह्मणों ने उसे हाथों-हाथ उठाकर चिता में झोंक दिया। चिता की आग अब चैतन्य हो चुकी थी। बालिका का नशा जाने कहां गायब हो चुका था। वह मृत्यु को प्रत्यक्ष देख रही थी। उसकी दोनों आंखें फटी हुई थीं और वह दोनों हाथ ऊपर उठाकर फिर चिता से भागना चाह रही थी कि इतने ही में उन ब्राह्मणों ने वही बांसों की ठठरी उसके ऊपर डालकर उसे दबोच दिया। एकाएक बालिका के बालों और वस्त्रों में आग लग गई। बाजे फिर ज़ोर से बज उठे। बालिका की चीत्कार बाजों के तुमुल नाद में खो गई।

इसी समय बन्दूक का शब्द हुआ। एक, दो, तीन, चार। लगातार बन्दूकों के छूटने और गोलियों से आहत हुए स्त्री-पुरुषों की चीत्कार से उपस्थित भीड़ में हलचल मच गई। जिसका जिधर मुंह उठा भाग निकला। निरन्तर बन्दूकों की बाढ़ दागते हुए तीन-चार फिरंगी चिता तक धंसे चले आए। एक ने साहस करके चिता पर चढ़कर बालिका को उठाकर गेंद की तरह बाहर फेंक दिया। दूसरे फिरंगी ने उसे हाथों-हाथ ले लिया। वह साहसी फिरंगी भी चिता से कूद पड़ा। इस समय तक सब लोग वहां से भाग चुके थे। फिरंगियों ने फिर उन पर गोलियों की बाढ़ दागी और मूर्छित बालिका को लेकर गंगा की ओर रुख किया। गंगा-तट पर एक नाव बंधी थी। उसपर तीन-चार मांझी खड़े थे। उन्होंने सहारा देकर आरोहियों को नौका पर बिठाया। नौका गंगा के बीच धार में तेज़ी से चल दी। गंगा के बीच में एक कोशा खड़ी थी। कोशा में कोई बीस सशस्त्र गोरे थे। बीच में एक छोटा-सा छप्पर का घर था। बालिका को लेकर फिरंगी

घर में चले गए। एक ने हुक्म दिया, 'कोशा खोल दो और बहाव में जाने दो।' सिपाहियों को हुक्म दिया, 'कोई नाव-डोंगी पीछा करे तो गोली चला दो।' कोशा तेज़ी से चल दी।

४

जो साहसिक फिरंगी बालिका को चिता से उठा लाया था उसका नाम मेकडानल्ड था। कलकत्ता की ग्यारह नम्बर गोरी रेजीमेंट में वह लेफ्टीनेंट था। कोशा में उसकी रेजीमेंट की टुकड़ी थी। कोशा सरकारी थी और वह गंगा में गश्त के लिए निकली थी। उन दिनों गंगा में जो जल-डकैतियां होती थीं उन्हींकी देखभाल तथा व्यापारी नावों की सुरक्षा आदि के लिए यह कोशा गंगासागर तक गश्त लगाया करती थी। लेफ्टीनेंट मेकडानल्ड इसका अफसर था। ज्योंही कोशा गौरीपुर घाट के निकट पहुंची, लेफ्टीनेंट ने सुना कि वहां एक स्त्री को सती किया जा रहा है। वह तुरन्त आठ-दस सैनिकों को संग ले किनारे पर उतर आया और ठीक समय पर उसने बालिका की रक्षा उस भयंकर मौत से कर ली। कोशा पर फौजी डाक्टर भी था। उसने बालिका का समुचित उपचार किया। अभी उसके शरीर को कोई गम्भीर क्षति नहीं पहुंची थी। सिर्फ बाल झुलस गए थे और कपड़ों में आग लग गई थी तथा वह इस समय गहरी मूर्छा में थी। डाक्टर ने उपचार के बाद गर्म पानी में मिलाकर थोड़ी ब्रांडी उसके मुंह में डाली, और कहा, 'अब इसे आराम करने दिया जाए।'

कोशा पर कोई स्त्री न थी। इससे लेफ्टीनेंट मेकडानल्ड बहुत व्यग्र भाव से कोठरी से बाहर आए और एक बंगाली खलासी से कहा, 'किनारे पर कोई गांव आने पर कोशा रोक दो, और एक हिन्दू दाई जैसे बने ले आओ।'

गांव आया। फिरंगियों की नाव पर कोई औरत आने को राज़ी नहीं होती थी। बड़ी कठिनाई से एक बुढ़िया राज़ी हुई। वह कोशा पर आकर बालिका की सुश्रूषा डाक्टर के कहे अनुसार करने लगी। लेफ्टीनेंट मेकडानल्ड बाहर आ सन्तुष्ट भाव से पाइप पीने लगे।

रात-भर कोशा चलती रही। सूर्योदय होने से कुछ पूर्व ही बालिका की मूर्छा भंग हुई। उसने दाई को देखकर पूछा, 'मैं कहां हूं ?'

'तुम फिरंगियों की नाव पर हो।'

'तुम कौन हो ?'

'मैं तुम्हारी दासी हूं। अब तुम सो जाओ, मैं साहब को खबर करती हूं।'

वह चली गई। सूचना पाकर लेफ्टीनेंट और डाक्टर भीतर आए। बालिका होश आने पर भी हतज्ञान थी। सामने दो गोरों को आते देख चीख मारकर फिर बेहोश हो गई।

डाक्टर ने आवश्यक हिदायतें दाई को दीं और बाहर चले गए।

दिन-भर और फिर रात-भर कोशा चलती चली गई। दाई मूर्छित अवस्था में ही ब्रांडी मिला दूध उसके मुंह में डालती रही।

प्रातःकाल होने पर उसे होश आया। सूचना पाकर डाक्टर और लेफ्टीनेंट भीतर आए।

डाक्टर ने देखकर कहा, 'अब कोई भय नहीं है। आप बातें कीजिए।' इतना कहकर डाक्टर बाहर चले गए। लेफ्टीनेंट टूटी-फूटी हिन्दुस्तानी में बातें करने लगे। उन्होंने कहा, 'फेअर लेडी, अब डर का बाट नेई। टुम अच्छा होगा तो अम तुमकूं टुम बोलेगा भेजने सकेगा।'

'साहब आप कौन हैं ?'

'अम लेफ्टीनेंट मेकडानल्ड। कम्पनी सरकार का आदमी।'

'मैं यहां कैसे आई ?'

'टुम कुच याड करता हाए ?'

'इतना याद आता है—कोई बुरा सुपना देखा था। वे मुझे जला रहे थे। बड़ी भारी आग थी। उस आग में सारी दुनिया जल रही थी। किसने मुझे उस आग से बचाया ?'

'पनमेसुर गाड ने फेअर लेडी। अम भौत ठीक पौचा। अमारा मिहनत कारगर हुआ। टुमारा जान बच गया।'

बेचारी बालिका इतना भी नहीं समझ सकी कि साहब को धन्यवाद देना चाहिए। उसने भीतमुद्रा से कहा, 'लेकिन वे लोग कौन थे ?'

'शयतान हाय। बट अबी टुम सो जाव, कमज़ोर है। बाट फिर

होगा ।'

'वे मुझे फिर तो नहीं जलाएंगे ?'

'नो, नो, हियर दे कैननाट काम । टुम इत्मीनान से रहो ।'

युवती चुप हो गई । उसने आंखें बन्द कर लीं । उसकी आंखों से आंसू ढरक चले ।

साहब तेज़ी से बाहर चले गए ।

कोशा चलती गई । बालिका फिर होश में आई । थोड़ा दूध और मछली का शोरबा उसे दिया गया । तब साहब ने उससे फिर बात की । भाषा की दिक्कत से बात बड़ी कठिनाई से हुई । बातचीत का सारांश यह था कि मेरा कोई नहीं है । अब मुझे वहां मत भेजिए । साहब ने स्वीकार किया, 'वहां तुम्हें नहीं भेजा जाएगा ।'

अब साहब चिन्ता में पड़े—कहां इस स्त्री को भेजा जाए । सैनिक सन्निवेश में वे उसे अपने साथ नहीं रख सकते थे । परन्तु शीघ्र ही उन्होंने कर्तव्य का निर्णय कर लिया ।

कलकत्ता आ गया । अभी डेढ़ पहर दिन शेष था ।

५

कलकत्ता के उत्तरी विभाग में लालबाज़ार एक पुराना स्थान है । नवाबी अमलदारी के समय यहां फौजदारी बालाखाने में हुगली के फौजदार आकर कचहरी किया करते थे । आरमीनियन, पुर्तगीज़ तथा डच व्यापारी इसी पश्चिमी भाग में बसे हुए थे । लालबाज़ार के पश्चिम में लाल दीघी है । इसका अंग्रेज़ी नाम 'टास्क स्क्वायर' है । जिन दिनों की बात हम लिख रहे हैं, उन दिनों टास्क स्क्वायर के एक पार्श्व में एक छोटा-सा सफेदी किया हुआ एकमंज़िला मकान था । मकान में रेवरेण्ड पादरी जानसन रहते थे । जानसन बड़े सज्जन और दयालु थे । वे लन्दन की क्रिश्चियन नालेज सोसाइटी की ओर से भारत में ईसाई धर्म का प्रचार करने आए थे । अब उन्हें कलकत्ता में रहते बीस वर्ष हो गए थे । वे एक विद्वान और शान्त प्रकृति के पुरुष थे । कलकत्ता के सभी छोटे-बड़े अंग्रेज़ अफसर और हिंदुस्तानी लोग

भी उनका बहुत आदर करते थे। शुरू-शुरू में बंगाली-जन फादर शब्द का शुद्ध उच्चारण नहीं कर सकते थे। इसलिए उन्होंने इस नाम का भारतीयकरण करके 'पादरी' शब्द बना लिया था और वे सब भारतीय ईसाई फादर जानसन को पादरी साहब कहकर पुकारते थे। आगे यह पादरी शब्द सभी ईसाई मिशनरियों के लिए आम हो गया। पादरी जानसन बड़े सच्चरित्र भी थे। कहना चाहिए कि वे अंग्रेज़ों में अपवाद थे। उनकी पत्नी भी बहुत नेक थीं। पहले वे एक धनी उच्च व्यापारी की पत्नी थीं। उसके मरने पर उन्होंने पादरी साहब से विवाह किया। यद्यपि उनकी उम्र विवाह के समय पचास वर्ष की थी और पादरी साहब से कुछ अधिक ही थी, परन्तु दोनों बहुत मज़े में रह रहे थे। मेम साहब के धन से पादरी साहब ने एक छोटा-सा अनाथालय और अस्पताल खोल रखा था। अनाथालय का प्रबन्ध खुद उनकी पत्नी करती थी, और अस्पताल पादरी साहब खुद चलाते थे। उन्होंने विलायत ही में थोड़ी डाक्टरी की शिक्षा पाई थी। उसीका वे वहां सदुपयोग करते थे। इन दोनों कामों से उनका उद्देश्य खूब पूरा हो रहा था। बहुत स्त्री-पुरुषों और अनाथ बालकों को उन्होंने ईसाई बना लिया था।

लेफ्टीनेंट मेकडानलड ने चिता से उद्धार की गई बालिका को इन्हीं जानसन साहब की संरक्षता में रख दिया। पादरी जानसन बहुत अच्छी बंगला भाषा जानते थे। बालिका के रूप, शील और बुद्धि को देख वे बहुत प्रभावित हुए। बालिका का जलती चिता से उद्धार किया गया है, यह सुनकर वे द्रवित हो गए। उन दिनों बंगाल में सती का बड़ा प्रचार था। वहां बचपन ही में हिन्दू ब्याह कर देते थे, इसलिए बहुधा दुधमुंही बच्चियों को निर्दयतापूर्वक जला दिया जाता था। इससे सभी अंग्रेज हिन्दुओं की इस क्रूर प्रथा के प्रबल विरोधी थे। इसीसे उन्होंने यत्नपूर्वक इस बालिका को अपने यहां आश्रय दिया और उसे अंग्रेज़ी भाषा तथा साहित्य एवं बंगला तथा फारसी की शिक्षा भी लेफ्टीनेंट के अनुरोध से देने लगे।

पादरी साहब के पास कभी-कभी एक हिन्दू युवक आया करता था। अभी इसकी उम्र बाईस बरस की ही थी। यह बंगाल के उच्च धनी ब्राह्मण परिवार का युवक था तथा शिक्षित और मेधावी था।

कलकत्ता में केवल यही एक तरुण ऐसा था जो बालविवाह और सती-प्रथा का विरोधी था। बचपन ही से इस तरुण का झुकाव धर्मविवेचन की ओर था। इस समय तक भी बंगाल की राजभाषा उर्दू ही थी और सब प्रतिष्ठित बंगाली उर्दू का विद्वान बनने के लिए फारसी भाषा पढ़ना आवश्यक समझते थे। इनके पिता रामकान्तराय बड़े कट्टर हिन्दू थे। माता भी धर्मप्राण साध्वी थी। परन्तु यह तरुण नई प्रतिभा का था। पिता ने इन्हें फारसी का आलिम बनाने के लिए पटना भेज दिया था। वहां उसने फारसी के साथ अरबी भी पढ़ी और कुरान का पाठ भी किया। इस्लाम और उसके तसव्वुफ का उसपर प्रभाव पड़ा तथा कुरान को पढ़ने के बाद उसके मन में एकेश्वरवाद का बीज अंकुरित हुआ। यहीं उसकी भेंट प्रसिद्ध दार्शनिक सुरेश्वराचार्य से हुई। उनसे इन्होंने उपनिषद पढ़ा और ब्रह्मजिज्ञासा पर मनन किया। देवता और मूर्तिपूजा से ये विमुख हो गए तथा अंग्रेज़ों के सम्पर्क और अंग्रेज़ी पढ़ने से सुधारवादी भी हो गए। इसीसे इनके पिता इनसे रुष्ट रहने लगे। तो भी इन्होंने अपना मत बदला नहीं। इन्होंने तुहफुतुल मुवाहिदीन नामक एक पुस्तक फारसी भाषा में लिखी और उसकी भूमिका अरबी में लिखी, जिसमें एकेश्वरवाद की प्रशंसा थी। वे रंगपुर के कलक्टर के दीवान थे, और अब नौकरी छोड़कर कलकत्ता आ गए थे तथा हिब्रू और ग्रीक भाषा पढ़ रहे थे, जिससे यहूदी और ईसाई बाइबिल का अध्ययन मूल भाषाओं में कर सकें। पादरी जानसन के सौजन्य और सद्विवेक से ये बहुत प्रभावित थे और बहुधा उनके पास आकर धार्मिक और सामाजिक मामलों में वाद-विवाद करते रहते थे। पादरी जानसन को विश्वास था कि एक दिन यह भद्र कुलीन धनी बंगाली ब्राह्मण अवश्य ईसामसीह की शरण आएगा। अतः वे इनकी बहुत आवभगत करते थे तथा प्रेम से वार्तालाप भी करते थे। तरुण का नाम राममोहनराय था। आगे चलकर यही तरुण राजा राममोहनराय के नाम से ब्रह्म-समाज के मूल संस्थापक के रूप में संसार में प्रसिद्ध हुए। हाल ही में ये बौद्ध धर्म का अध्ययन करने को तिब्बत की हज़ारों मील की दुरूह यात्रा पैदल करके चार बरस में लौटे थे। इससे भी इनका नाम भारतीय तथा अंग्रेज़ दोनों ही क्षेत्रों में काफी प्रसिद्ध हो गया था।

राममोहन के आते ही पादरी ने उनका स्वागत करते हुए कहा,

,आज तो मैं बहुत ही हर्षित हूं।'

'यह सुनकर मैं प्रसन्न हुआ। किन्तु क्या इस हर्ष का कोई विशेष कारण है ?'

पादरी साहब ने बालिका की हृदयविदारक करुण कहानी कह सुनाई। राममोहन ने बालिका से भेंट की। उसीके मुंह से उसकी दुर्भाग्य-कहानी सुनी। सुनकर उनकी आंखों से चौधारा आंसू बहने लगे। फादर जानसन ने कहा, 'यदि लेफ्टिनेंट मेकडानल्ड जान पर खेलकर उसके प्राण न बचाता तो वह अब तक जलकर राख का ढेर हो गई होती। यह तो तुम जानते ही हो कि आजकल हिन्दू स्त्रियों और खासकर विधवाओं की कितनी दुर्दशा है। तुम्हारे जैसे तरुण को इसके विरुद्ध आवाज़ उठानी चाहिए। हमारी आवाज़ वे नहीं सुनते। हमें वे विदेशी और विधर्मी कहते हैं। पर तुम तो उसी धर्म में पैदा हुए हो, तुम्हारी आवाज़ वे अनसुनी नहीं कर सकते।'

'मेरी अनुपस्थिति में मेरे बड़े भाई का देहांत हो गया तथा मेरी भावज सती हो गई। मेरे दिल पर इसका दाग है। मैं जानता हूं कि देश में प्रतिवर्ष सैकड़ों-हजारों निरीह स्त्रियां इस प्रकार जीवित जला दी जाती हैं। मैं चाहता हूं कि इस विषय में मैं ऐसी आवाज़ बुलन्द करूं कि बहरे भी उसे सुन लें।

'हमारे घरों में विधवा स्त्रियों को जो आजीवन कष्ट भोगना पड़ता है, उसे मुझसे अधिक कौन जानता है! वह कष्ट और अपमान इतना असह्य है कि उसकी अपेक्षा इस प्रकार चिता पर जल मरना वे पसन्द करती हैं। जन्म-भर दारुण दुःख भोगने की अपेक्षा यह क्षण-भर का कष्ट उन्हें अखरता नहीं। पर इस अबोध बालिका की तो बात ही जुदा है। जिसने पति को देखा तक नहीं; पति के घर गई ही नहीं; पति-पत्नी-सम्बन्ध क्या होता है, यह वह जानती ही नहीं।'

'मैंने १८२७ की रिपोर्ट में सरकारी आंकड़े देखे हैं। उस साल बंगाल में तीन सौ नौ स्त्रियां जीवित जलाई गई थीं। परन्तु यह अधूरी रिपोर्ट थी। इससे पूर्व १८१५-१८१८ तक तीन वर्षों में कम से कम साढ़े तीन हज़ार विधवाएं जीवित जलाई गई हैं जिनमें बहुत-सी इसी बालिका की भांति अबोध थीं। अकेले कलकत्ता के आस-

पास के स्थानों में जलाई गई विधवाओं की संख्या डेढ़ हज़ार से कम नहीं है।'

'मैं तो इसे एक जातीय क्षय-रोग समझता हूं। यह भारत के माथे पर कलंक का टीका है फादर।'

'निस्संदेह राममोहन, यह भारतीयों की ज्ञानशून्यता और गिरावट का चिह्न है।'

'मैं तो इसके निवारण के तीन सूत्रों को महत्त्व देता हूं, यदि सरकार हमारी सहायता करे तो ही सफलता प्राप्त हो सकती है।'

'तीन सूत्र कौन-से हैं ?'

'प्रथम, सती-प्रथा का कानूनन विरोध ; दूसरे, पुनर्विवाह का कानूनन वैध माना जाना; तीसरे, स्त्रियों के उत्तराधिकार का ज़ोरदार समर्थन। बिना इन तीन सूत्रों के भारतीय स्त्रियों की दशा नहीं सुधर सकती।'

'तुम ठीक कहते हो अज़ीज़मन। इस काम में मैं तुम्हारे साथ हूं।'

'आपकी बड़ी कृपा है फादर, मैं शीघ्र ही सती-प्रथा के विरोध में एक पुस्तक लिखूंगा और मैंने जो बंगला पत्रिका 'कौमुदी' निकालना आरम्भ किया है, उसमें तो मैंने सती-प्रथा पर इसी मास एक लेख लिखा है। आपने उसे अवश्य देखा होगा।'

'कहां, मैंने तो नहीं देखा। लेकिन इस नेक काम के लिए मैं तुम्हारा अभिनन्दन करता हूं, राममोहन।'

'वह पत्रिका मैं आपके पास भेजूंगा।'

'ज़रूर भेजना। पर मेरी राय है कि तुम एक रिलीजियस कमेटी बनाओ और बंगाल-भर में उसकी शाखाएं फैला दो। इस कमेटी के सदस्यों का यह कर्तव्य होना चाहिए कि वे जहां भी सती होने का समाचार पाएं, वहां पहुंचकर उसे रोकें और सरकार को भी सूचना दें।'

'आपका प्रस्ताव उत्तम है। मैं अवश्य ही ऐसा करूंगा।'

'बहुत-बहुत धन्यवाद राममोहन। तुम्हें कदाचित् मालूम हो कि इस समय कौंसिल में दो विवाद ऐसे उठ खड़े हुए हैं जिनमें हमारे गवर्नर-जनरल सर विलियम बैंटिक को बहुत दिलचस्पी है। पर देशवासियों में मतभेद है।,

'कैसा विवाद ?'

'एक तो यही सती-प्रथा का, दूसरे भारत में अंग्रेज़ी शिक्षा-प्रचार का।'

'मैं तो कह ही चुका, मैं सती-प्रथा का कट्टर विरोधी हूं और उसे समाप्त करने में मुझसे जो कुछ बन पड़ेगा, उठा न रखूंगा।'

'और दूसरे विषय में तुम्हारी क्या राय है ?'

'स्पष्ट है कि इस समय केवल फारसी या संस्कृत-शिक्षा पर्याप्त नहीं है। मैं चाहता हूं कि मेरे देशवासी प्राचीन पद्धति की शिक्षा के साथ-साथ अंग्रेज़ी भाषा और नवीन विषयों की भी शिक्षा प्राप्त करें। मैं अंग्रेज़ी की उपादेयता की ओर भी देशवासियों का ध्यान खींचने का प्रयत्न कर रहा हूं।'

'शाबाश, मेरे नवयुवक दोस्त। तुम तो एक सच्चे ईसाई की तरह बोल रहे हो, फिर क्या कारण है कि तुमने अभी तक बपतिस्मा नहीं लिया, और अभी तक उस नापाक मज़हब के चक्कर में पड़े हो।'

'फादर, मैं पैदा ही वहीं हुआ हूं। क्या किया जाए ! फिर मैं उसे नापाक भी नहीं मानता। कदाचित् आपने उपनिषद् की पवित्र वाणी कभी नहीं पढ़ी, जो ब्रह्म-जिज्ञासा का रहस्य मनुष्य के सामने खोलती है।'

'क्या उनमें ऐसी बातें हैं, जो होली बाइबल में नहीं।'

'हैं फादर।'

'हो नहीं सकता है। प्रभु ईसामसीह की नियामत तो होली बाइबल ही है।'

'पर उपनिषदें तो प्रभु ईसामसीह से बहुत पुरानी हैं।'

'पुरानी होने से क्या हुआ ! उनमें होंगे तो वही झूठे किस्से-कहानियां।'

'उनमें किस्से-कहानियां नहीं हैं, ब्रह्म का भेद बताया गया है, जो अमर हैं, अगोचर हैं और अविनाशी हैं।'

'माई गाड ! मेरे प्यारे, तुम इतने अच्छे नौजवान होकर कैसे ऐसी वाहियात बातें कर रहे हो ?'

राममोहनराय हंस पड़े। उन्होंने कहा, 'फादर, मैंने अपने को कुएं का मेंढक नहीं रहने दिया। मैं एक बहते दरिया के समान हूं।

जहां से जो ज्ञान मिलता है, ले लेता हूं। मैंने कुरान पढ़ा, बाइबल पढ़ा, फिर तिब्बत के खौफनाक पहाड़ों में जाकर बौद्धधर्म के रहस्य जाने। वेद-वेदान्त और उपनिषद् का मनन किया, और भी कर रहा हूं। आप भी ऐसा ही कीजिए फादर। सब धर्मों का सच्चा ज्ञान प्राप्त कीजिए।'

'शैतान ले जाए सब धर्मों को और उनकी गंदी किताबों को भी। तुम फौरन प्रभु ईसामसीह की शरण आओ, जो हमारी नैया का पार खिवैया है।'

'फादर, मेरे सामने इससे भी महत्त्वपूर्ण काम हैं। यह हमारे देश का अंधकारपूर्ण और निराशा का काल है। सारा देश भ्रांति, रूढ़ि और कुरीतियों के भंवर में फंसा है। मैं उनके मानसिक धरातल को उन्नत करने के लिए अंग्रेज़ी शिक्षा का समर्थन कर रहा हूं। परन्तु यह नहीं चाहता कि भारतीय उच्छृंखल और नास्तिक हो जाएं, और उन्हें भारतीय वस्तु तथा संस्कृति से घृणा हो जाए। मैंने ब्रह्मसमाज की स्थापना की है, जो आस्तिकवाद का धर्म है। इसका मूल सिद्धांत एकेश्वरवाद है और आधार उपनिषद् है। इस अंधयुग में मैंने सुधार का यह दीपक जलाया है फादर। रूढ़िवाद और नास्तिकता दोनों ही का उन्मूलन करके देशवासियों के मन में अपनी दशा सुधारने की प्रवृत्ति के अंकुर उत्पन्न करना चाहता हूं।'

६

पांच वर्ष पूर्व चिता से उठाई गई बालिका फादर जानसन के निकट रही। अब उसकी उम्र सत्रह वर्ष की हो चुकी थी। वह असाधारण सुन्दरी और प्रतिभाशालिनी लड़की थी। इस बीच उसने न केवल बहुत अच्छी अंग्रेज़ी सीख ली थी, वह सब प्रकार के अंग्रेज़ी रहन-सहन व व्यापार सीख गई थी। वह अब अपने को पादरी जानसन की बेटी समझती तथा उन्हें फादर न कहकर पापा कहती थी। उसके रूप, यौवन और योग्यता को देख बहुत अंग्रेज़ अफसर उसके प्रणयाभिलाषी हुए थे। परन्तु प्रेम की गांठ लेफ्टीनेंट मेकडानल्ड के साथ उसकी बंध

चुकी थी। मेकडानल्ड अब मेजर हो चुके थे। वे बहुधा उससे मिलने के लिए आते रहते थे। पर उन्होंने अभी उससे प्रणय-निवेदन नहीं किया था। वे अभी केवल उसके संकेत की प्रतीक्षा कर रहे थे।

बालिका ने, जो अब एक आकर्षक युवती बन चुकी थी, अपना रहन-सहन तो बदल दिया था, पर अपना नाम शुभदा नहीं बदला था। न अपना धर्म, विश्वास बदला था।

पादरी जानसन के बंगले पर एक शानदार डिनर का आयोजन था। डिनर वास्तव में कर्नल मेकडानल्ड के ऑनर में दिया गया था। डिनर में मेकडानल्ड के अतिरिक्त तीन व्यक्ति और थे। एक थे तरुण बंगाली राममोहनराय, दूसरे थे सर जान, तीसरे स्वयं फादर जानसन और चौथी मिस शुभदा। भोज में अनेक प्रकार की देशी और विलायती शराब, अनेक प्रकार के मांस और फल आदि थे। राममोहनराय केवल फल खा रहे थे। यह देख शुभदा भी केवल फल खाने लगी। यह देखकर मेकडानल्ड ने कहा, 'यह क्या मिस, तुम केवल फल ही ले रही हो? लो, यह सेण्डविच तो ज़रा चखो, बहुत अच्छा बना है।'

'धन्यवाद कर्नल, पर आज मैं केवल फलाहार ही करूंगी।'

'यह किसलिए?'

'आप देख नहीं रहे! यहां हमारे परमबन्धु राय साहब उपस्थित हैं और वे केवल फल ही खा रहे हैं।'

मेकडानल्ड ने ज़रा तीखी नज़र से राममोहनराय की ओर देखकर कहा, 'महाशय क्या आप मांस नहीं खाते?'

'नहीं कर्नल, मुझे खेद है। मैं मांस नहीं खाता।'

'इसका कारण?'

'मांस खाने के लिए जीवहत्या करनी पड़ती है। वह मुझे पसंद नहीं।'

'और सब बंगाली ब्राह्मण तो मांस खाते हैं।'

'केवल ब्राह्मण होने के कारण नहीं, प्राणियों पर दया-भाव के कारण मैं मांस नहीं खाता।'

इसपर पादरी जानसन हो-हो करके हंसने लगे। उन्होंने कहा, 'आप प्राणियों पर दया की बात कहते हैं। परन्तु सारे बंगाल में कितनी जीवहिंसा होती है। पालतू जानवरों पर कितना निर्दय व्यवहार किया

जाता है, यह भी आप देखते हैं !'

'यह भी देखता हूं और यूरोप के लोग अपने संस्कारों में स्वयं कितने निर्दय और क्रूर हैं, वह भी मैं देखता हूं। मेरे बहुत-से मित्र-बांधव मांस खाते हैं, परन्तु मैं व्यक्तिगत रूप से मांसाहार को पाशविक कर्म समझता हूं।'

'इसीसे मैं आपसे सहानुभूति रखती हूं राय महाशय। अन्ततः मैं भी आप ही की भांति एक कुलीन ब्राह्मण की बेटी हूं।' शुभदा ने कहा।

'सो तुम अभी तक ब्राह्मण की बेटी हो? अब तुम मेरी बेटी बन चुकी हो और शीघ्र ही प्रभु ईसामसीह की शरण में आओगी।' पादरी ने कहा।

'परन्तु मेरे संस्कार ब्राह्मण के हैं फादर। प्रभु ईसामसीह की मैं भक्त हूं, परन्तु आपकी शरण में आकर भी मैं उसी प्रकार ब्राह्मण हूं, जिस प्रकार कर्नल अंग्रेज़ हैं।

'ओह, तब तो यही देखना बाकी रह गया, कि यह कुछ अच्छी बात भी है या नहीं।' कर्नल ने तीखी नज़र से राममोहन की ओर देखते हुए कहा।

राममोहनराय ने कहा, 'जहां तक संस्कार का प्रश्न है, मैं इसे संसार की बहुत अच्छी बात समझता हूं कर्नल।'

'क्यों? आप तो सदैव ही यह कहा करते हैं कि मैं जन्म से ब्राह्मण अवश्य हूं, पर सभीको समान समझता हूं।' पादरी ने कहा।

'बेशक, मेरा अभिप्राय यह है कि मैं अभिजात्य को महत्व नहीं देता।' राममोहन ने गम्भीरता से कहा।

'तो मिस शुभदा का अभिप्राय शायद अभिजात्य की श्रेष्ठता से नहीं है।'

'नहीं कर्नल, तनिक भी नहीं। मैं तो केवल संस्कार ही तक सीमित हूं। अभिजात्य की भावना मेरे मन में होती तो मैं आपके साथ बैठकर कैसे खा-पी सकती थी!'

'तुम बहुत अच्छी लड़की हो मेरी प्यारी शुभदा। खैर, अब चूंकि कर्नल मुहिम पर बर्मा जा रहे हैं, इसलिए उनके मंगल के लिए एक-एक जाम पीना चाहिए।' पादरी ने प्रसंग बदलते हुए कहा।

'अवश्य, परन्तु मैं केवल पानी ही पीऊंगा।' राममोहन ने कहा।

'और मैं भी।' शुभदा ने अपने और राममोहन के गिलासों में पानी भरते हुए कहा।

कर्नल मेकडानल्ड को यह अच्छा नहीं लगा। वह स्तब्ध बैठा रहा। पादरी जानसन ने बात का रंग बदलते हुए कहा, 'क्या बर्मा में हमारी स्थिति बहुत नाज़ुक है कर्नल?'

'बहुत, हमारी सेना को वहां बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है। वहां की नम आबोहवा और मलेरिया का सामना करना हमारे लिए कठिन पड़ रहा है। हम दो महीने से रंगून पर कब्ज़ा किए बैठे हैं, परन्तु अब वर्षा में वहां हमारी फौज एक प्रकार से कैद हो गई है। हम चारों ओर से पानी से घिर गए हैं। इधर बर्मा का बहादुर सेनापति बुन्देला बंगाल पर आक्रमण की तैयारी कर रहा है।'

'क्या बर्मा की लड़ाई हमारे लिए बहुत आवश्यक थी?'

'आवश्यक नहीं, अनिवार्य थी फादर। इस समय ऊपर से तो हमारा शासन और दबदबा बहुत शानदार दीख रहा है। रामेश्वर से दिल्ली तक सभी मुख्य केन्द्रों में अंग्रेज़ी सेना की छावनियां छाई हुई हैं और ऐसा मालूम होता है कि अब ब्रिटिश हुकूमत को हिलाना आसान नहीं है। बहुत-सी बड़ी-बड़ी रियासतें हमारे साथ सबसीडियरी सन्धि में बंधी हैं। शेष ने अधीनता स्वीकार कर ली है। राजपूताना के सिर पर हमारा पैर जमा रहे इसलिए अजमेर को अलग प्रान्त बनाकर उसपर हमारा सीधा शासन हो रहा है। लार्ड हेस्टिंग्ज़ बड़े भाग्यशाली थे। उन्हें चार ऐसे-ऐसे सहायक मिल गए थे, जिनमें से प्रत्येक सफल शासक होने की योग्यता रखता था। मौण्ट स्टुअर्ट एलफिंस्टन सफल शासक होने के अतिरिक्त इतिहास-लेखक भी हैं। सर चार्ल्स मेटकाफ ने दिल्ली की हुकूमत पर गहरा पदचिह्न छोड़ा है। सर जान मालकम और सर टामस मनरो जैसे शासकों की सहायता के बिना लार्ड हेस्टिंग्ज बंगाल और मद्रास की गुत्थी नहीं सुलझा सकते थे। अब बज़ाहिर शांति की चोटी पर हमारा झंडा अवश्य फहरा रहा है, परन्तु भीतरी दृश्य नाज़ुक है।'

'क्या बहुत नाज़ुक कर्नल?'

'उसे नाज़ुक ही कहा जा सकता है, फादर। भारत में हमारी संख्या अभी भी बहुत कम है। इस कमी को हम अभी तक मित्र-

भावना से पूरा कर सकते थे, जिसे हम न्याय, बुद्धि और नर्म व्यवहार से प्राप्त करते। वह मित्र-भावना हमें आक्रमणों से बचा सकती थी, परन्तु इस समय वह मित्र-भावना हमें कहीं भी दिखाई नहीं पड़ रही है। हमारे चारों ओर नोक-झोंक चल रही है।'

तरुण राममोहनराय थोड़े उत्तेजित होकर बोले, 'निस्संदेह यह एक महत्त्वपूर्ण सचाई आप प्रकट कर रहे हैं कर्नल। अंग्रेज़ों को जब-तब युद्धों में जो छोटी-छोटी सफलताएं प्राप्त हुई हैं, उन्होंने राजा लोगों के हृदय में उनके प्रति शत्रुता के भाव उत्पन्न कर दिए हैं।'

'यही बात है राय महाशय, हमने अपने आस-पास की रियासतों से व्यर्थ की छेड़छाड़ करके जो विरोध और षड्यन्त्र का वातावरण पैदा कर लिया है, केवल हमारी शक्ति की डाह से उससे आधा भी पैदा न हो पाता। और अब इस बात की शंका के यथेष्ट कारण हैं कि जब कभी हम किसी शत्रु से उलझे होंगे, जिसको दबाने के लिए हमें अपनी अधिकतर सेनाएं काम में लानी पड़ें, तो ये सब रियासतें एक होकर हमारे विरोध में खड़ी हो सकती हैं।'

'यह तो आनेवाले तूफान का एक भयंकर चित्र तुमने खींच दिया कर्नल,' पादरी जानसन ने माथे पर बल डालते हुए कहा 'ईसूमसीह कृपा करें और भारत अनन्त काल तक उसकी छत्रछाया में रहे।'

कर्नल ने अपने वक्तव्य को जारी रखते हुए कहा, 'अब हमें सबसे प्रथम बंगाल की सीमा को सुदृढ़ बनाना है। बर्मा के राजा अलोम्प्ता के उत्तराधिकारियों ने मनीपुर और आसाम पर कब्ज़ा कर लिया था। इससे बर्मा की सीमा बंगाल की सीमा से मिल गई थी। परन्तु हम कैसे आसाम और मनीपुर को दूसरों के हाथों देख सकते हैं। परन्तु वे यहीं तक संतुष्ट नहीं रहे। वे चटगांव, ढाका, मुर्शिदाबाद और कासिम-बाज़ार को भी हमसे मांगने लगे।'

राममोहनराय ने ज़रा टेढ़ी नज़र से कर्नल की ओर देखकर कहा, 'लेकिन इसका कारण तो यही प्रतीत होता है कि बर्मा के सब भगोड़े बंगाल के इन्हीं इलाकों में अधिक हैं। वे समय-समय पर बर्मा में घुस-कर छापे मारते हैं, और इधर आ छिपते हैं। बर्मा के ये शत्रु भारत की सीमा में सुरक्षित हैं।'

'तो हम क्या करें? शरणागतों को कैसे हम शत्रु के सुपुर्द कर

दें। हमें निरुपाय हो बर्मा से युद्ध-घोषणा कर देनी पड़ी और अब वहां हमारी सेना घोर संकट में पड़ गई है। उसे तत्काल ही सहायता की आवश्यकता है।'

'इसीसे शायद आप लोगों ने बैरकपुर में वह भयानक काण्ड कर डाला?' राममोहनराय ने तनिक दृढ़ स्वर में कहा।

'वह खतरनाक सिपाही-विद्रोह था राय महाशय, और उसे दबाना हमारा कर्तव्य था।'

'परन्तु कर्नल, उसे 'कत्लेआम' भी आसानी से कहा जा सकता है।'

'आप कैसे यह कहने की जुर्रत करते हैं मिस्टर राय?' कर्नल ने क्रोध से लाल होकर कहा।

परन्तु राममोहन ने सहज स्वर में कहा, 'आप ही कैसे उसे सिपाही-विद्रोह कह रहे हैं?'

'स्पष्ट है कि सिपाहियों ने अपने अफसरों की आज्ञा मानने से इन्कार कर दिया था।'

'कर्नल, आप अच्छी तरह जानते हैं कि इस रेजीमेंट में ऊंचे दर्जे के हिन्दू थे। अभी तक देश में सुधार की कोई चर्चा ही नहीं है। कुलीन लोग अधिकतर रूढ़िवादी हैं। अधिकतर कुलीन हिन्दू यह विश्वास करते हैं कि समुद्र-यात्रा करने से उनका धर्म भ्रष्ट हो जाएगा। रंगून जाने के लिए उन्हें जहाज़ पर चढ़ना पड़ता। जब सिपाहियों को नौकर रखा गया था, तब यह बात स्पष्ट नहीं की गई थी कि उन्हें समुद्र-यात्रा भी करनी पड़ेगी। इसके अतिरिक्त उनकी भी शिकायतें हैं। उनकी तनख्वाह बहुत कम है। उन्हें चार से साढ़े छः रुपये माहवार में गुज़ारा करना पड़ता है, क्या आप समझते हैं कि एक आदमी की जान की कीमत चार रुपये काफी है? फिर उनकी वर्दी, बुगचे बहुत खराब हो गए थे। उन्हें जब एक जगह से दूसरी जगह जाना पड़ता है, उन्हें खच्चर और घोड़ों का बन्दोबस्त खुद करना पड़ता है। सेना के अफसर उन्हें कोई मदद नहीं देते।'

'लेकिन उन्होंने बर्मा जाने से कतई इन्कार कर दिया था। यह भयंकर सैनिक अपराध है, राय महाशय।'

'इन्कार उन्होंने नहीं किया, उन्होंने विनीत प्रार्थनापत्र अपने उच्च अफसर की सेवा में भेजा था कि यदि उन्हें बर्मा भेजा ही जा रहा है

तो उन्हें अलग भत्ता दिया जाए, जैसे बैलगाड़ीवालों तथा सफरमैना के दूसरे कर्मचारियों को दिया जाता है।'

'तीस अक्तूबर को जब इस रेजीमेंट को परेड पर आने का हुक्म दिया गया तो वे अपने बुगचे साथ नहीं लाए, यह उनका अक्षम्य अपराध था, और इसकी रिपोर्ट बाकायदा कमांडर-इन-चीफ सर एडवर्ड पैजेट को भेज दी गई, और उनसे आदेश मांगा गया।'

'वे बुगचे कैसे ला सकते थे। वे बोसीदा हो गए थे। बाहर ले जाने के योग्य न थे। यह कोई ऐसा गम्भीर आरोप न था। आप अच्छी तरह जानते हैं कर्नल कि उन गरीब सिपाहियों के साथ इतनी-सी बात पर क्या सुलूक किया गया।'

'ज़रूर जानता हूं। वह रेजीमेंट मेरी ही थी और मामले की रिपोर्ट कमांडर-इन-चीफ को दी जानी आवश्यक थी। उनके साथ वही सुलूक किया गया जो उचित था।'

'यानी जब वे परेड में आए तो उन्हें दो गोरा रेजीमेंट, एक तोपखाने की कोर और गवर्नर-जनरल के अंगरक्षक घुड़सवारों की ट्रूप ने घेर लिया।'

'बेशक, और उन्हें हुक्म दिया गया कि या तो सीधी तरह बर्मा चलो, या हथियार रख दो।'

'और जब उन गरीबों ने अपने आवेदनपत्र की बात कही, तो एकदम तोपों के मुंह खोल दिए गए। उन बेचारे बेगुनाह सिपाहियों पर गोलों की बौछार होने लगी, बहुत-से वहीं मर गए, बहुत-से नदी की ओर भागे; उनमें बहुत-से डूबकर मर गए। यह उन लोगों को आपने इनाम दिया, जो केवल चार रुपये माहवार पर आपके लिए जान देने को तैयार थे।'

'जी हां, और अब वह रेजीमेंट तोड़ दी गई है। और जो लोग बचकर भाग गए हैं, उनका कोर्ट मार्शल किया जाएगा।'

'यानी उन्हें ढूंढ-ढूंढकर फांसी के तख्ते पर चढ़ा दिया जाएगा। कर्नल, आप किस तरह इस तरह की कार्यवाही को उचित कह सकते हैं?'

'राय महाशय, आप कदाचित् दायित्व के सम्बन्ध में नहीं सोचते। जब दायित्व का प्रश्न आता है तो छोटे-छोटे व्यक्तिगत प्रश्नों से ऊपर हमें सोचना पड़ता है।'

'आप मुझे क्षमा कर कर्नल, मैं यह कहना चाहता हूं कि आपको कुछ और बातें भी सोचनी चाहिए।

'कौन-सी और बातें ?'

'कि इन बेचारे सिपाहियों के भी कुछ विचार हो सकते हैं, और उन्हें चार रुपये माहवार से अधिक तलब मांगने का अधिकार है। इसके अतिरिक्त उनसे मिलकर उन्हें समझा-बुझाकर शांत करने की भी आवश्यकता थी। पर अफसोस है, सर पैजेंट ने ऐसा नहीं किया। वे शायद यह समझते हैं कि अंग्रेज़ हुकूमत करने के लिए और हिन्दुस्तानी हुक्म मानने के लिए पैदा हुए हैं।'

'एक हद तक यह बात सच भी है मिस्टर राय।'

'अफसोस है कि आप ऐसा समझते हैं। आपको याद रखना चाहिए कि आपने इन्हीं हिन्दुस्तानी सिपाहियों की बदौलत हिन्दुस्तान को जीता है। राशन कम होने पर उन्होंने मांड़ पीकर दिन काटे और भात अंग्रेज़ सिपाहियों को दिया। आप जानते हैं कि ये सिपाही शराब नहीं पीते, उनसे काम लेना बहुत आसान है। इतने कम वेतन पर आपको कहीं भी ऐसे अच्छे सिपाही नहीं मिल सकते।'

'लेकिन उन्होंने विद्रोह किया था।'

'ऐसा आपका कहना सरासर अन्याय है, क्योंकि मुझे ज्ञात हुआ है कि उनको कत्ल करने के बाद जब उनकी बन्दूकें देखी गईं तो वे खाली थीं। उनका विद्रोह करने का कतई इरादा न था।'

'हम उन्हें तनख्वाह देते हैं। हमारे प्रति नमकहलाल होना उनका कर्तव्य है। फिर, सेना में डिसिप्लिन का मूल्य बहुत है।'

'चार रुपये माहवार कोई तनख्वाह नहीं है कर्नल। और नमकहलाली की बात महज़ हिमाकत है। एक दिन वे यह बात समझ लेंगे और तब शायद आप उन्हें इस तरह आसानी से गोलियों और गोलों से न भून सकेंगे ?'

राममोहनराय बहुत उत्तेजित हो गए थे। उनके इस वक्तव्य से कर्नल मेकडानल्ड क्रोध से लाल हो गया। वह एकदम उठ खड़ा हुआ। उसने कहा, 'आप मेरा अपमान कर रहे हैं मिस्टर राय, आप माफी मांगिए।'

'मैंने एक सच बात कही है कर्नल, और अब मैं जाता हूं।'

वे उठकर चल दिए। पादरी ने कर्नल का हाथ पकड़कर कहा, 'बैठो बेटे, बात उसने सच ही कही है।'

'आप भी ऐसा ही समझते हैं फादर ?'

'कर्नल, क्या तुमने अभी कुछ देर पूर्व नहीं कहा था कि उस तरह की सख्तियां किस कदर खतरनाक नतीजे ला सकती हैं ? क्या इस तरह हिन्दुस्तान के एक-एक आदमी के दिल में अपने लिए घृणा के भाव पैदा करना हमारे लिए अच्छा होगा ?'

कर्नल बैठकर चुरुट सुलगाने लगा। इसी बीच शुभदा चुपचाप वहां से उठकर चली गई। उसका मुंह भरे हुए बादलों के समान गम्भीर हो रहा था।

७

शुभदा जो इस प्रकार उठकर चली गई तो कर्नल मेकडानल्ड स्थिर नहीं रह सका। वह उठकर उसके पीछे-पीछे चला गया।

दूसरे कमरे में जाकर उसने कोमल स्वर में कहा, 'क्या तुम्हें बुरा लगा शुभदा ?'

'बुरा क्यों न लगेगा भला ! क्या तुम्हारी बातचीत से यह प्रकट नहीं होता कि तुम हम भारतीयों को तुच्छ समझते हो और हमसे घृणा करते हो ?'

'तुम जानती हो शुभदा, मैं तुम्हें प्यार करता हूं।'

'अजीब बात है, तुम प्यार का बातें करते हो। कहीं घृणा और प्यार भी एकसाथ हो सकते हैं ?'

'किन्तु शुभदा, भारतीय कितने पतित होते हैं। इसका एक जीता-जागता उदाहरण तो वह भयानक व्यवहार है जो उन्होंने तुम जैसी स्त्री के साथ किया। क्या तुम्हारे साथ कुछ कम अत्याचार हुआ ?'

'अत्याचार ही क्या जातीय श्रेष्ठता का मापदण्ड है। अंग्रेज यूरोप में और यहां भी क्या कम अत्याचार करते हैं ? भारतीय तो रूढ़ि के बंधन में बंधे हैं। परन्तु आप लोग तो नई दुनिया के आदमी हैं। आप तो अपने स्वार्थों के लिए क्रूर अत्याचार करते हैं, जो रूढ़ि-

वादियों की अपेक्षा कहीं अधिक खराब है। क्या मैं नहीं देखती कि अंग्रेज़ कितने निर्मम, क्रूर और संगदिल हैं।'

'परन्तु हम जातीयता के नाम पर जूझ मरनेवाले आदमी हैं, शुभदा।'

'बस, तो यही समझ लो कि हिन्दू जाति के दोष और गुण मुझे ज्ञात हैं। दोष उसमें ऊपर से लादे हुए हैं, और गुण उसके परम्परा के संस्कारों से हैं।'

'परन्तु वह तरुण बंगाली तो सीधा वार करता है।'

'इसलिए कि वह सच्चा है। उसे अपनी जातीय हीनता का ज्ञान है, और उसे वह सहन नहीं कर सकता। वह उन दोषों को दूर करने पर तुला हुआ है।'

'ओह, तुम तो उसकी ज़रूरत से ज़्यादा तारीफ कर रही हो!'

'मैं समझती हूं कि उसकी पूरी योग्यता मुझपर प्रकट नहीं है। उसकी बातें मैंने सुनी हैं। वह एक अवतारी पुरुष है।'

'खैर, मैं देखता हूं कि तुम क्रिश्चियन-सोहबत में रहने और अंग्रेज़ी की उच्च शिक्षा पाने पर भी अन्ततः हिन्दू ही हो।'

'हिन्दू ही क्यों, हिन्दुस्तानी भी हूं। और यह बात मैंने जितनी अब अंग्रेज़ों के संसर्ग में आकर सीखी है, उतनी हिन्दू संस्कारों में नहीं सीखी।'

'तब तो तुम्हें अंग्रेज़ों का कृतज्ञ होना चाहिए।'

'कृतज्ञ तो मैं हूं ही, खासकर तुम्हारे प्रति। तुमने एक वीर पुरुष की भांति मेरे जीवन की रक्षा ही नहीं की, मेरे जीवन को आलोक से भर दिया। अब मैं अपने जीवन को भली-भांति देख और समझ सकती हूं।'

'लेकिन तुम तो मुझीसे नाराज़ हो।'

'और किससे नाराज़ होऊं भला? तुम्हारा कोई दोष मैं सहन नहीं कर सकती। तुम मुझे प्यार करने की बात कहते हो, प्यार मैं भी तुम्हें करती हूं शायद तुमसे अधिक। लेकिन इतना अवश्य है कि तुम्हें मैं वैसा ही देवपुरुष देखना चाहती हूं, जैसे तुम मेरी प्राण-रक्षा के समय थे।'

'परन्तु शुभदा, कुछ कर्तव्य के भार सिर पर आ जाते हैं।'

'क्या वे ऐसे भी हो सकते हैं जो मनुष्य को नीचे गिरा देते हैं ?'

'यह तो मैं नहीं कह सकता।'

'तो तुम्हें सोचना होगा। ऐसा कोई काम कर्तव्य हो ही नहीं सकता, जो मनुष्य की आत्मा की पुकार से परे हो।'

'मसलन नौकरी, नौकरी में तो स्वामी का आज्ञा-पालन ही कर्तव्य हो जाता है।'

'यह कर्तव्य-पालन की तुम्हारी अंग्रेज़ी व्याख्या मैं नहीं स्वीकार करती। मैं तो उसी काम को कर्तव्य समझती हूं, जो न्यायोचित और मानवोचित हो।'

'ओह शुभदा, तुम सेना में भरती होने योग्य नहीं हो।'

'ईश्वर का धन्यवाद है कि मैं उसकी उम्मीदवार नहीं हूं।'

'खैर, तो तुम चाहती हो कि मैं बर्मा न जाऊं ?'

'ज़रूर जाओ। जाना तुम्हारा कर्तव्य है, और वहां जाकर न्यायोचित और मानवोचित कार्य करना भी तुम्हारा कर्तव्य है।'

'खैर, मैं तुम्हें धन्यवाद देता हूं शुभदादेवी। तुम्हारी बातें मैंने धरोहर के रूप में अपने हृदय में धारण कर ली हैं, किन्तु अब मैं तुमसे कुछ निवेदन करूं ?'

'कहो।'

'आगामी वसन्त में मैंने छुट्टी ली है। मैं चाहता हूं कि इस बार बर्मा फ्रण्ट से लौट आते ही हमारा विवाह हो जाए, और फिर हम लोग इंगलैंड चलें।'

'मैं इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहना चाहती। तुम जैसा ठीक समझो, करो। मैंने तो अपने-आपको तुम्हें समर्पित कर दिया है। अब और मैं क्या कहूं !'

'तुम्हारी यह बात कितनी प्यारी है शुभदा, मैं कैसे कहूं ! किसी अंग्रेज़ रमणी के मुंह से मैं ऐसे शब्द नहीं सुन सकता।'

'तुम्हें शायद ये शब्द नये और अनोखे-से प्रतीत होंगे। पर यह तो हमारा, हम हिन्दू स्त्रियों का कुलाचार है। क्रिश्चियन संसार में पलने पर भी मैं यह नहीं त्याग सकती। हम भारतीय स्त्रियां कर्तव्य-पथ पर चुपचाप चलती रहती हैं, कभी थकतीं नहीं। अधिकारों की लड़ाई हमें सिखाई जाती ही नहीं, जैसाकि मैं यूरोपियन

स्त्रियों में देखती हूं।'

'मैं समझता हूं, इससे स्त्री पुरुष के अधिक निकट आती है।'

'निकट क्या, उनमें अभिन्नता उत्पन्न हो जाती है, और वे दोनों एक हो जाते हैं। किन्तु तभी जब पुरुष भी स्त्री के प्रति केवल कर्तव्य ही का पालन करे, अधिकारों का गर्व और स्वत्त्व त्याग दे।'

'ओह, मेरी प्यारी शुभदा, तुमने ये सब बातें कहां सीखी हैं?'.

'सीखी नहीं हैं, ये बातें हमारे रक्त में घुली-मिली हैं। हमारा स्वाभाव बन गई हैं।'

'तो मैं तुमसे सीखूंगा, और कोशिश करूंगा कि तुम्हारा योग्य पति बनूं।'

'खैर, अभी तो तुम योग्य कर्नल, एक सेना का योग्य अफसर अपने को प्रमाणित करो। कर्तव्य को ठीक समझो, और उसीकी राह पर चलो।'

'मैं तुम्हें शिकायत का मौका न दूंगा शुभदा। तो यह तय रहा कि इसी वसंत में हमारा ब्याह हो और हम इंगलैंड चलें। हनीमून हम जहाज़ पर मनाएं।'

'जैसा तुम ठीक समझो।'

'तो मैं फादर से यह बात कह दूं।'

'कह दो।'

'तुम मुझसे और कुछ कहना चाहती हो!'

'हां, तुम अपनी तन्दुरुस्ती का ध्यान रखना।'

'और तुम मुझे हर दूसरे दिन पत्र लिखना।'

'मैं लिखूंगी।'

'मैं तुम्हारी आज्ञा का पालन करूंगा।'

'कर्नल मेकडानल्ड ने शुभदा का हाथ अपने हाथों में लेकर दबाया और कहा, 'विदा, मेरी प्यारी शुभदा।'

'विदा, तुम्हारी यात्रा शुभ हो।'

वह भीतर चली गई। कर्नल बाहर आ पादरी से आवश्यक बातें करने लगा।

८

राधामोहन मजूमदार गांव छोड़ कलकत्ता में आ बसे। अपनी सब ज़मींदारी बेचकर उन्होंने कलकत्ता में एक आलीशान मकान बनवाया और जूट का कारोबार शुरू किया। यह काम अभी-अभी बंगाल में आरम्भ हुआ था और केवल कुछ अंग्रेज़ी कम्पनियां ही यह धन्धा करती थीं। उन्होंने उनसे अपने सम्पर्क स्थापित किए और उनके सहयोग से थोड़े ही समय में उनका व्यवसाय चमक उठा और उन्हें काफी आय होने लगी। तीन साल तक वे एक प्रकार से अज्ञात रूप में रहे। अपनी सारी शक्ति उन्होंने अपने कारोबार में केन्द्रित कर दी। यों तो वे बड़े मिलनसार थे, परन्तु इस समय उन्होंने मिलना-जुलना या किसी सामाजिक कार्य में आना-जाना कतई छोड़ दिया था। वे जातिबहिष्कृत कर दिए गए थे—अकारण, केवल पाखण्ड के कारण। उनका एकमात्र पुत्र अकाल ही में काल-कवलित हुआ था। उनकी बालिका पुत्रवधू को सती होते-होते चिता से हरण कर लिया गया था। इन सब बातों से उनके मस्तिष्क पर गहरा आघात पहुंचा था। वे अपनी जाति के शीर्षस्थानीय थे। उनकी उदारता और सज्जनता अलौकिक थी। कभी किसीका उन्होंने कोई अनिष्ट नहीं किया था। फिर भी न जाने किस पाप की बदौलत उन्हें यह विडम्बना सहन करनी पड़ी थी! परन्तु वे एक मेधावी और हिम्मतवाले व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी सारी ही चेतना व्यापार में लगा दी और देखते ही देखते वे प्रतिष्ठित व्यापारी बन गए।

कलकत्ता में राजा राममोहनराय ने ब्रह्मसमाज की स्थापना की। इस समय राजा राममोहनराय फारसी में धार्मिक लेख लिखा करते थे, तथा फारसी में एक अखबार 'मिरातुल अखबार' निकालते थे। राधामोहन बड़े चाव से उन लेखों और अखबारों को पढ़ा करते थे। वे ब्रह्मसमाज में प्रविष्ट होने का दृढ़ निश्चय कर चुके थे। इसी समय राजा राममोहनराय ने 'बंगदूत' बंगाली में तथा 'बंगाल हेरल्ड' अंग्रेज़ी में निकाला था। राधामोहन इन पत्रों को भी पढ़ते थे। एक दिन वे ब्रह्मसमाज के अधिवेशन में जाकर चुपचाप बैठ गए। उन्होंने देखा, दो तैलगू ब्राह्मण पर्दे में बैठे हुए वेदपाठ कर रहे हैं। पर्दे के बाहर

लिखा हुआ था, 'यहां अब्राह्मण का निषेध है।' वेद-पाठ की समाप्ति पर उत्सवानन्द ने उपनिषद्-पाठ किया और फिर रामचन्द्र विद्यावागीश ने उसका बंगाला में अर्थ समझाया। इसके बाद राजा राममोहनराय का उपदेश फ़ारसी भाषा में हुआ। सभा की समाप्ति पर प्रार्थनागान हुआ।

सब लोग उठ गए, केवल राजा राम मोहनराय बैठे रह गए। वे एक प्रकार से मूक-मौन समाधिस्थ-से बैठे रहे। राधामोहन भी बैठे रहे। जब राजा साहब ने आंखें खोलीं, तो राधामोहन ने उठकर प्रणाम किया और अपना नाम बताकर कहा, 'आपको समय हो तो मैं आपसे कुछ बातें करना चाहता हूं।'

'अवश्य, आइए, बैठिए।'

'मुझे यह कहने की आप आज्ञा दीजिए कि आप उस महासेतु के समान हैं, जिसपर चढ़कर भारतवर्ष अपने अथाह अतीत से अज्ञात भविष्य में प्रवेश कर रहा है।'

'यह तो अधिक से भी अधिक है। मैं तो केवल यही जानता हूं कि अंधविश्वास और विज्ञान के बीच जो दूरी है, प्राचीन जाति-प्रथा और नवीन मानवता के बीच में जो खाई है, बहुदेववाद और शुद्ध ईश्वरवाद के बीच जो भेद है, उन सबको दूर कर भारत को प्राचीन से नवीन की ओर ले जाने का प्रयत्न कर रहा हूं। परन्तु आप कृपा कर अपना थोड़ा और भी परिचय दीजिए।'

राधामोहन ने अपनी सारी करुण दुर्भाग्य-कथा कह सुनाई। फिर कहा, 'मैं तीन साल से कलकत्ता में हूं। और ये साल मैंने सब कुछ भूलकर ज़मींदार से व्यापारी बनने में व्यतीत किए हैं। इस प्रयास में मैंने अपनी मर्म-वेदना और आत्मग्लानि को भी छिपा लिया है। किन्तु मैं जब गांव से चला था तभी मैंने ब्राह्मसमाज में प्रविष्ट होने का संकल्प कर लिया था, परन्तु तब मन में विवशता थी और अब मैं मन से समाज में प्रविष्ट होना चाहता हूं। गत छः माह से मैं सत्संग में आता रहा हूं पर आपसे मिला नहीं।'

'मैंने आपको बहुधा देखा। परन्तु अपनी ओर से टोकना ठीक नहीं समझा। अब आपसे मिलकर तथा आपकी बात सुनकर मैं प्रभावित हुआ हूं। वास्तव में रूढ़िवाद और जाति-परम्परा के दोषों का

भुक्तभोगी आपसे बढ़कर और कौन हो सकता है !'

राजा राममोहनराय का कण्ठ भर आया और वाणी अवरुद्ध हो गई। राधामोहन भी न बोल सके। राजा राममोहनराय ने कहा, 'क्या आपको मालूम है कि आपकी पुत्र-वधू अब कहां है ?'

'नहीं, मैं नहीं जानता। जानने की चेष्टा भी मैंने नहीं की।

'क्या अब भी जानना नहीं चाहते ?'

'चाहता हूं।'

'किसलिए ? यदि वह आपको मिल जाए तो क्या आप उसे ग्रहण करेंगे ?'

'क्यों नहीं ! मेरे पुत्र नहीं है। मैं तो उसीको अपनी सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी बनाऊंगा।'

'और यदि वह विधर्मिणी हो गई हो ? उसने उस अंग्रेज़ से विवाह कर लिया हो, जिसने उसका उद्धार किया था। तब ?'

'तो भी मैं उसे अपनी सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी बनाऊंगा, किन्तु क्या आप उसके सम्बन्ध में कुछ जानते हैं ?'

'जानता हूं।'

'आपने उसे देखा है ?'

'देखा है।'

'क्या उसने विवाह किया है ?'

'अभी नहीं। किन्तु शीघ्र ही एक अंग्रेज़ से उसका विवाह होगा।'

'कोई हर्ज नहीं। क्या आप मुझे उसे दिखा सकेंगे ?'

'मैं उससे पूछूंगा। यदि उसने स्वीकार किया तो आपको ले चलूंगा।'

'क्या आप भी ईसाई धर्म को अच्छा समझते हैं ?'

'सभी धर्मों के समान ईसाई धर्म में भी पौराणिक बातें हैं। रूढ़ियों, चमत्कारों और अंधविश्वासों का ढेर है; परन्तु इस समय जो सैनिक लोग उसे भारत में ले आए हैं वे अंधविश्वासी नहीं हैं, न वे रूढ़ियों के दास हैं। इसके अतिरिक्त ईसाई धर्म हिन्दू धर्म की अपेक्षा कई गुना बलवान प्रतीत होता है।'

'क्या आप यह पसन्द करते हैं कि भारतीय जनता क्रिश्चियन धर्म को ग्रहण करे।'

'कदापि नहीं। मैं तो उसका डटकर सामना करना चाहता हूं। मेरी धारणा है कि उसका सामना करने के लिए आवश्यक है कि भारत यूरोप की वैज्ञानिकता को ग्रहण करे और इस वैज्ञानिकता के साथ अपने धर्म को भी संसार के सामने रखे।'

'इसीसे वैज्ञानिकता का वेदान्त से, उपनिषद् से कांचनमणि संयोग करने में लगा हूं। आशीर्वाद दीजिए कि मैं सफल होऊं।'

'आशीर्वाद देता हूं राजा महोदय, आप सफल हों और मैं आपकी शरण भी आता हूं।'

'बड़ी ही शुभ वार्ता है मजूमदार महाशय। मैंने हिन्दू धर्म, इस्लाम और ईसाइयत, तीनों धर्मों का अध्ययन किया है। हिन्दुत्व की पवित्रता, इस्लाम की रुचि और विश्वास तथा ईसाइयत की सफाई मुझे पसन्द है। ईसाई धर्म से मैंने कुछ प्राप्त नहीं किया है, परन्तु ईसाई देशों के सामाजिक जीवन, राजनीतिक संगठन और विज्ञान से मैं प्रभावित हूं। केवल धर्म से यही प्रमाणित होता है कि सारी मनुष्य-जाति एक परिवार है, अनेक जातियां और राष्ट्र उसकी शाखाएं हैं।'

'मुझे विश्वास है कि आपका यह विश्वास भारतीय उत्थान का एक अंग बन जाएगा।'

'ऐसा ही मैं समझता हूं, क्योंकि भारत के प्राचीनतम सत्यों का यूरोपीय नवीन सिद्धान्तों के साथ सामंजस्य बिठाए बिना भारत का कल्याण नहीं है।'

'मैं देखता हूं कि यूरोप के सम्पर्क से भारत में नई मानवता का जन्म हो रहा है। वैसे ही हिन्दू धर्म भी नया रूप धारण कर रहा है। ब्राह्मसमाज हिन्दू धर्म का अभिनव रूप है। हमारा उद्देश्य सभी धर्मों के लोगों के बीच एकता, समीपता तथा सद्भाव को जन्म देना है।'

'आप ठीक कहते हैं। भारत से सती-प्रथा को उठाने के लिए भी अब क्रियात्मक कदम उठाया जाना चाहिए।'

'मैंने लार्ड विलियम बैंटिक की सरकार का इस सम्बन्ध में समर्थन किया था, और बड़ी ही कठिनाई से लोग सती-प्रथा की रोक-थाम का कानून बनवा सके। अब इस कानून के अनुसार सती होने में सहायक होना कत्ल के बराबर अपराध ठहराया गया है।'

'परन्तु कट्टर हिन्दू तो अभी तक इस काम को धर्म पर आघात

ही समझते हैं। सुना है, उन्होंने प्रिवी कौंसिल में इस कानून के विरुद्ध अपील की है।'

'वह भी खारिज हो गई। अब कानून देश में लागू हो जाएगा।'

'बड़ी प्रसन्नता की बात है, परन्तु केवल सती-प्रथा बन्द होना ही तो यथेष्ट नहीं है। जब तक बाल-विवाह बन्द नहीं हो जाते, हमारे घरों की दुरवस्था नहीं दूर होगी। बाल-विधवाओं से हमारे घर भर जाएंगे। इसलिए पुनर्विवाह और बालिग विवाह की व्यवस्था भी कानूनन होनी चाहिए।'

'इसमें अभी समय लगेगा मजूमदार महाशय।'

'तो तब तक के लिए मेरा यह अनुदान कबूल कीजिए। पचास हज़ार रुपये मैं बाल-विधवाओं की शिक्षा-दीक्षा तथा उनकी सुव्यवस्था के लिए देता हूं।'

'आपका यह कार्य श्लाघनीय है। मैं धन्यवादपूर्वक आपका यह अनुदान स्वीकार करता हूं। इस रकम से कलकत्ता में एक विधवा सहायक संस्था की स्थापना होगी। अभी-अभी हमने इतनी ही रकम शिक्षा-प्रसार के लिए एकत्र की है।'

'मुझे संकोच बहुत है, परन्तु आपसे कुछ कहना चाहता हूं।'

'कहिए।'

'यदि मेरी पुत्र-वधू मेरे साथ रहना स्वीकार करे तो मैं उसे पुत्र की भांति रखूंगा।'

'प्रथम तो वह क्रिश्चियन संगति में पांच वर्ष रही है। उन्हींके संस्कारों में शिक्षा पा रही है। अब वह एक समझदार सुशिक्षिता महिला है। इसके अतिरिक्त उसका विवाह होना ही ज़्यादा ठीक है।'

'आप कोई उदार सत्पात्र ढूंढ़ दीजिए, उसीसे उसका मैं विवाह कर दूंगा।'

'प्रथम तो अभी हमारा ब्राह्मसमाज भी इतना अग्रसर नहीं है। दूसरे, वह अंग्रेज़ तरुण से ब्याह करना चाहती है।'

राधामोहन कुछ देर तक मौन रहे। फिर बोले, 'तब यही सही। हम विश्व की सभी जातियों में एकता स्थापित कर रहे हैं। मैं अपनी सब सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी उसे ही बनाऊंगा। वह चाहे जिस धर्म में रहे, चाहे जिससे ब्याह करे।'

'खैर, तो आप उससे एक बार मिलना चाहते हैं ?'

'अवश्य ।'

'तो मैं आपको ले चलूंगा । परन्तु पहले मुझे उससे पूछना होगा ।'

'क्या वह यहीं कलकत्ता में है ?'

'है, यहीं है ।'

'कहां ?'

'पादरी जानसन के घर में ।'

'तो मेरी दीक्षा कब होगी ?'

'आगामी इतवार को ।'

'धन्यवाद राय महाशय, मैं अपने को इस नये जीवन के सर्वथा उपयोगी प्रमाणित करूंगा ।'

'आपकी कामना सफल हो । यही कामना करता हूं ।'

९

राजा राममोहनराय के अनुरोध से शुभदा ने अपने ससुर राधा-मोहन मजूमदार से मुलाकात की । सम्मुख आने पर उसने पर्दा-घूंघट नहीं किया, परन्तु गले में आंचल डालकर श्वसुर को प्रणाम किया । बातचीत के दौरान में उसने फादर जानसन को भी सम्मिलित किया और अब ये चारों आदमी दिल खोलकर बातें करने लगे ।

राधामोहन ने कहा, 'बेटी, तुझे यहां प्रसन्न और स्वस्थ देखकर मैं बहुत खुश हूं । मुझे जातिवालों ने जो प्रताड़ित किया और मेरा अपमान किया, वह अब तुझे देखकर मुझे खल नहीं रहा है । पर मैं चाहता हूं कि तू मेरे साथ रह और पुत्र की कमी को पूरी कर ।'

शुभदा ने कहा, 'आप मेरे पिता हैं, पूज्य हैं, मेरे लिए आप ही का घर संसार में था, परन्तु मेरे साथ जो घटनाएं घट चुकीं और मैं जहां पहुंच चुकी वहां से लौटकर आपकी चरण-शरण में जाना न आपके लिए श्रेयस्कर होगा न मेरे लिए ।

'मैं तो तुझे अपनी वही पुत्रवधू समझता हूं ।'

'वही तो हूं । बदल कैसे जाऊंगी ।'

'यह तो मैंने तभी देख लिया जब तूने गले में आंचल डालकर मेरी चरण-रज ली। पर मैंने सुना कि तू एक अंग्रेज़ तरुण से ब्याह कर रही है।'

'दूसरी कोई राह नहीं है। परन्तु मेरी आत्मा हिंदू है। संस्कार हिंदू हैं। फिर मैं भारतीय भी तो हूं। आचार मेरे हिंदू हैं। विचार से हिंदू नहीं हूं, क्योंकि हिंदू धर्म में एक दोष है कि वह सदा सोया रहता है और जब उसपर वज्र-प्रहार होता है तब जागता है इसीसे आप उस समय मुझ अबोध को जीवित जला देने में सहमत हो गए थे, परन्तु अब आप इतने उदार बन गए हैं।'

'बेटी, यह मेरा नहीं, हिंदू धर्म का दोष है।'

'वही मैं भी कहती हूं। जहां शून्य होता है, वहीं अवांछित वस्तुएं अपनी राह बनाती हैं?'

'बेटी, तू मुझे एक बात सच-सच बता।'

'पूछिए।'

'क्या तूने ईसाई धर्म पर विश्वास करके धर्म-परिवर्तन करने का निर्णय किया है?'

'नहीं, तनिक भी नहीं। मेरा धर्म-परिवर्तन तो शुद्ध सामाजिक आवश्यकता पर आधारित है, विश्वास तो मेरा हिंदुत्व पर ही है।'

'यह कैसी बात है बेटी?'

'स्पष्ट है कि मैं कोई धर्मात्मा स्त्री नहीं हूं। संसारी स्त्री-मात्र हूं। संसार में रहने के लिए मुझे ईसाई समाज को ग्रहण करना पड़ा, क्योंकि दूसरा उपाय न था। पर हिंदू-संस्कार, आत्मत्याग तो मेरे रक्त-बिन्दुओं में है।'

'क्या तेरी ये बातें फादर जानते हैं?'

'ये बैठे तो हैं। मैं तो इन्हींके सामने कह रही हूं। इस तरह बोलने का साहस और ज्ञान तो फादर ही का दिया हुआ है मुझे।'

पादरी जानसन ने कहा, 'शुभदा ठीक कहती है मजूमदार साहब। मैं तो यह समझता हूं कि धर्म-विश्वास के लिए आवश्यकता से अधिक आग्रह करना ठीक नहीं है। इसके अतिरिक्त मैं यह भी देखता रहा हूं कि यहां की जनता का विश्वास हमें प्राप्त नहीं है। सोचने की बात है कि भारत में ईसाइयत का प्रचार लगातार सन् १५०० से होता

आया है, परन्तु सफलता हमें बहुत कम मिली है। मैं तो यह कह सकता हूं कि भारत में ईसाइयत को फैलने की राह ही नहीं मिल रही है। साठ साल से हम लोग प्रचार कर रहे हैं, परन्तु उच्च हिन्दुओं पर हमारा प्रभाव नहीं के बराबर है। गत तीस वर्षों में हमने कुल तीन सौ लोगों का धर्म-परिवर्तन किया है, जिनमें दो सौ केवल अछूत हैं। भारत में वे ही लोग धर्म-परिवर्तन करने को राज़ी होते हैं जो समाज में अनादृत और त्रस्त हैं। हकीकत तो यह है कि हिंदुओं का धर्म-परिवर्तन आसान काम नहीं है। हिंदुओं में प्रचलित किसी भी रिवाज को छूते ही सारी जनता विरोध में खड़ी हो जाती है। वास्तव में धर्म के क्षेत्र में हिंदू अब भी अपने को संसार का गुरु मानते हैं।'

राजा राममोहनराय अब तक गम्भीरतापूर्वक सब बातें सुन रहे थे। अब उन्होंने कहा, 'परंतु सन् '१३ के बाद, जब से धर्म-प्रचारकों पर से प्रतिबन्ध उठा है, सारा उत्तरी भारत ईसाइयत के प्रहारों से आहत हो रहा है। केरी डफ और विलसन के नेतृत्व में सारा ईसाई धर्म-प्रचारक संघ हिंदू समाज पर टूट पड़ा है और अब उनका लक्ष्य उच्चवर्गीय हिंदू ही हैं। कलकत्ता का बिशप कालेज, डफ कालेज और त्रिचनापल्ली का विलसन और एस० पी० जी० कालेज अब शिक्षा के माध्यम से ईसाई धर्म का प्रचार कर रहे हैं, और यदि मैं भूल नहीं कर रहा हूं तो इस समय समूचे भारत में देशी ईसाइयों की संख्या दो लाख तो अवश्य होगी। अभी उस दिन डाक्टर डफ ने गर्व-पूर्वक कहा था, जिस-जिस दिशा में पाश्चात्य शिक्षा प्रगति करेगी, उस-उस दिशा में हिंदुत्व के कई अंग टूटते जाएंगे और अंत में आकर ऐसा होगा कि हिंदुत्व का कोई अंग भी साबुत न रहेगा। उनके भाषण से प्रभावित होकर लार्ड साफ्टसबरी ने यहां तक कह डाला कि जो भी हिंदू ईसाई परमात्मा का ध्यान करेगा, वह ब्रह्मा-विष्णु को खुद भूल जाएगा।'

शुभदा ने कहा, 'यही तो बात है राय महाशय, क्या किया जाए। प्रहार हो रहे हैं, पर हिन्दुत्व की नींद नहीं टूटती, इसीसे ईसाई धर्म-प्रचारकों के मन्सूबे बढ़ रहे हैं।'

'निस्संदेह शुभदादेवी। अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रवाह में हिन्दू युवक

सभी दिशाओं से मुड़कर केवल पच्छिम की ओर देखने लगे हैं। उन्होंने जो दृष्टि प्राप्त की है उससे पूरब के संसार में उन्हें केवल दोष ही दोष दिखाई देने लगे हैं।'

'परन्तु मैं जानती हूं कि उनके भीतर धार्मिकता के कोई चिह्न नहीं हैं। जिन्होंने धर्म-परिवर्तन किया है वे सांसारिक कारणों से क्रिश्चियन हुए हैं। परंतु भारत में सदा से धर्म के साथ एक प्रकार का चरित्र-बल रहा है। वह न इन नये विचारों के तरुणों में है, न नव ईसाइयों में। इसीसे भारतीय जनता में उनकी कोई प्रतिष्ठा नहीं है। उलटे वे घृणा के पात्र बन रहे हैं।'

'तो बेटी, तू अपने को क्यों उस श्रेणी में रखती है। तेरे ज्ञान के नेत्र खुले हुए हैं, तू अब अपने घर चल कर रह।' मजूमदार ने कहा।

'रह नहीं सकती पिताजी, कारण बता चुकी हूं। इसके अतिरिक्त कुछ और भी बातें हैं।' इतना कहकर उसने फादर जानसन की ओर देखा, फिर आंखें नीची कर लीं।

पादरी जानसन ने कहा, 'इसी सप्ताह शुभदा देवी का शुभ विवाह कर्नल मेकडानल्ड से हो रहा है, मजूमदार महाशय! शुभदादेवी यही कहना चाहती हैं।'

'क्या यह विवाह शुभदा अपनी इच्छा से कर रही है?' मजूमदार ने पूछा।

इसपर शुभदा ने कहा, 'जी हां, परन्तु कदाचित् आपको बुरा लगे।'

'नहीं, मैं तो केवल यह कामना करता हूं कि मेरी बेटी अपने जीवन में सुखी हो। अब तो मेरा इसका पुराना नाता टूट चुका। अब नये नाते से यह मेरी बेटी है।'

'तो पिताजी, आप यदि ऐसी भावना रखते हैं, तो अपने हाथ से ही अपनी पुत्री को सत्पात्र को दीजिए।'

'यह तो विडम्बना की बात होगी। क्योंकि मैं तुम्हारे भावी पति को जानता तक नहीं। फिर भी मैं तुम्हारी किसी इच्छा में बाधक नहीं होऊंगा। पर तुम्हें मेरी एक बात रखनी होगी।'

'कहिए।'

'यह स्वीकार करो। मेरा दानपत्र है। मेरी सम्पूर्ण सम्पत्ति की तुम्हीं उत्तराधिकारिणी हो। विवाह तुम्हारा शुभ हो। ये पांच लाख

रुपये मैं तुम्हें देता हूं। अब मैं राय महाशय के साथ ब्रह्म-उपासना में शेष जीवन व्यतीत करूंगा।'

'आपका यह अनुदान ग्रहण करने में मुझे संकोच हो रहा है। मैं गृह-त्यागिनी हूं।'

'तो इससे क्या, हो तो मेरी बेटी। मैं तुम्हारे ब्याह में अवश्य उपस्थित होता, परन्तु अभी इतना साहस मुझमें नहीं है।'

'क्या आप एक बार मेरे भावी पति से मिलना पसन्द करेंगे?'

'न, न, उसकी आवश्यकता ही अब नहीं है।'

'तो मैं उनसे पूछकर आपका यह अनुदान ग्रहण करूंगी।'

'नहीं, यह तुम्हें अभी, इसी समय ग्रहण करना होगा। इतना साहस और आत्मनिर्भरता तुममें होनी चाहिए।'

'क्या यह रकम मैं धर्म-प्रचार में खर्च कर सकती हूं?'

'नहीं। मैंने तुम्हारे मुंह से सुनने के बाद यह निर्णय किया है कि तुम्हारा धर्म से कोई सीधा सरोकार नहीं है।'

'तो फिर इस धन का मैं क्या करूंगी?'

'अपने जीवन को सुखी और मन को सन्तुष्ट करने के लिए जो चाहे वही करना।'

'और यदि मैं यह धन न लूं?'

'तो मैं इसे राय महोदय को दे दूंगा।'

'यह अधिक अच्छा है। राय महाशय इस धन से देश की मानसिक दरिद्रता दूर कर सकेंगे।'

'बेटी, तुम बड़ी महान हो, बड़ी उदार हो। इस धन की स्वामिनी तुम्हीं हो। अपने हाथ से जिसे चाहे दे सकती हो।'

शुभदा ने वह दानपत्र राय महोदय के हाथ में देकर कहा, 'विवाह से प्रथम ही इसकी लिखा-पढ़ी करा लीजिए राय महाशय, और विवाह में आप ही मेरे पिता का स्थान ग्रहण कीजिए तथा मेरा विवाह हिन्दू रीति पर ही कीजिए।'

'बड़ी ही खुशी से शुभदादेवी, मैं तुम्हारा यह अनुदान और अनुरोध स्वीकार करूंगा। पर एक कठिनाई है। हिन्दू रीति से तुम्हारा विवाह नहीं हो सकता। क्योंकि तुम कुलीन ब्राह्मण-कन्या हो। परिणीता और विधवा हो। धर्मशास्त्र की रीति से तुम्हारा विवाह नहीं

हो सकता ।'

'मैंने इस बात पर विचार किया है । मेरा गांधर्व रीति से विवाह हो सकता है। मेरे पास प्रमाण हैं। प्राचीनकाल में ऐसे विवाह सम्पन्न हुए थे, जिनमें न जाति-पांति का विघ्न था, न विधवा की रोक-टोक ।'

'शास्त्रीय बंधन और रोक-टोक हो तो भी मैं तो इसकी परवाह नहीं करता । पर तुम यदि ब्राह्मसमाज की रीति अपनाओ तो अधिक उत्तम है । हम लोग भी वेद-मन्त्रों का उच्चारण करते हैं । हां, जाति से ब्राह्मण नहीं मानते ।'

'तो यही सही । आप मेरे पिता, अभिभावक और पुरोहित सब कुछ बन जाइए ।'

'मैं स्वीकार करता हूं, परन्तु क्या फादर और कर्नल मेकडानल्ड इसे पसन्द करेंगे ?'

फादर जानसन ने कहा, 'मुझे कोई आपत्ति नहीं है । शुभदा जैसी बेटी पर मैं कोई विचार बलात् नहीं लादना चाहता । उसमें हिन्दू धर्म और ईसाई धर्म के तत्त्व को समझने की पूरी सामर्थ्य है । वह अपने लिए जैसा ठीक समझें वही कर सकती है ।'

'किन्तु कर्नल मेकडानल्ड ।'

'मैंने उनसे बात कर ली है । वे मेरे विचारों की कद्र करते हैं । वे उदार पुरुष हैं । बस हमारे बीच में यह तय हुआ है कि हमारे जो बच्चे होंगे वे क्रिश्चियन होंगे । मैंने यह बात स्वीकार कर ली है ।'

'अच्छी बात है । मैं तुम्हारा अभिभावक और परोहित बनना स्वीकार करता हूं, शुभदादेवी ।'

'तो इसी सप्ताह रविवार को, मेरे ही मकान पर यह शुभ कार्य होगा राय महोदय, मैं आपको आमन्त्रित करता हूं ।'

और यथासमय शुभदादेवी का विवाह अत्यन्त सादगी के साथ सम्पन्न हो गया । विवाह-काल शुभदा ने भारतीय वधू का वेश धारण किया । कर्नल अपनी पूरी वर्दी में थे, बहुत-से अंग्रेज़ अफसर तथा कुछ भारतीय मित्र इस महत्त्वपूर्ण विवाह में सम्मिलित हुए ।

१०

इस बीच बहुत-सा पानी बह गया। दिल्ली का बादशाह जो कभी समस्त भारत के खज़ानों का स्वामी समझा जाता था, अब अपने हज़ारों कुटुम्बियों, आश्रितों, परिजनों और सेवकों का पालन भी नहीं कर सकता था। लालकिले की चहारदीवारी तक उसकी बादशाहत सीमित थी। अंग्रेज़ों ने वे सब आदाब, अलकाब, नज़रें और दरबारी अदब-कायदे, जो शाही प्रतिष्ठा के चले आते थे, बन्द कर दिए थे। वे अब बादशाही पद को तोड़ने की जुगत में थे। बेचारा अकबरशाह बादशाह अपने खर्च की रकम कम्पनी बहादुर से बढ़वाने के लिए हाथ-पैर मारते-मारते ही मर गया। उसने राजा राममोहनराय को अपना एलची बनाकर लन्दन भेजा, पर बेकार। उनकी किसीने नहीं सुनी। उनका वहीं देहान्त हो गया। अन्ततः बेचारा बादशाह भी अपनी हज़ारों आरज़ुओं को संग लेकर कब्र में जा सोया। उसके बाद उसके उत्तराधिकारी बहादुरशाह ज़फर ने डगमग मुगल-तख्त पर अपने कांपते हुए कदम रखे। कैसा विचित्र संयोग था यह कि जिस समय बहादुरशाह ज़फ़र दिल्ली में मुगल-तख्त पर चढ़ रहे थे, उसी समय इंगलैंड की रानी विक्टोरिया इंगलैंड के सिंहासन पर आ बैठी। दोनों ही की आयु लगभग समान थी, परन्तु बादशाह तख्त पर आए थे, अपने बाप-दादों का भारत-साम्राज्य खोने के लिए, और रानी विक्टोरिया आई थी। उसका उत्तराधिकार संभालने के लिए।

इसी समय पंजाब के महाराजा रणजीतसिंह का देहान्त हो गया। अंग्रेज़ों की एक बड़ी सिरदर्दी खत्म हो गई। रणजीतसिंह एक प्रकृत वीर पुरुष था। उसने अपने भुजबल से जो सिख-साम्राज्य स्थापित किया था, उसके उत्तर और ईशानकोण के छोर तिब्बत और हिन्दु-कुश की सीमाओं को छू रहे थे। नैऋत्यकोण की ओर उस्मान खेल, खैबर तथा सुलेमान पर्वत तक उसका अंचल फैल चुका था। मिठन-कोट से अमरकोट तक सिख-साम्राज्य की सीमाएं सिंधुनद के तीर पर छा रही थीं। अग्निकोण की ओर सतलज ने एक रेखा बनाई थी, पर सतलज के इस पार भी पैंतालीस गांव सिख-साम्राज्य के आधिपत्य में थे। आज का काश्मीर और गिलगित प्रदेश भी महाराजा

रणजीतसिंह के साम्राज्य के अन्तर्गत था। आश्चर्य की बात है कि रणजीतसिंह की मृत्यु के पीछे यह साम्राज्य ही पंजाब की स्वाधीनता को मटियामेट करने का कारण बना।

रणजीतसिंह कहा करता था कि मेरे पीछे मेरी जूती भी दस बरस राज करेगी। युद्ध और शासन दोनों में उसकी नैसर्गिक सत्ता थी। वह यद्यपि हैदरअली और शिवाजी के समान ही अपढ़ और रण-पण्डित था, परन्तु उसमें शिवाजी की दूर-दर्शिता और राजनीतिज्ञता न थी, न हैदरअली जैसा प्रचण्ड साहस ही उसमें था। वह यद्यपि भाग्य-शाली योद्धा, चतुर और संगठनकर्ता व्यक्ति था पर तत्कालीन दुर्गुण जो उन दिनों यूरोप और भारत में सर्वत्र राजवर्गियों के गुण बने हुए थे, उसमें भी थे। वह बड़ा भारी पियक्कड़ था। इसके अतिरिक्त वह अफीम भी बहुत खाता था।

एक ओर युद्ध का कठोर जीवन और दूसरी ओर ये दुर्व्यसन और इनसे संलग्न अतिशय स्त्री-संसर्ग, इन सबने उसे उसके अंतिम दिनों में ऐसा जर्जर बना दिया था कि सन् १८३८ में जब उसे फिरोज़पुर में अंग्रेज़ों ने देखा तो वे यह न समझ सके कि यही पुरुष विशाल सिख-साम्राज्य का प्रतिष्ठाता और अजेय योद्धा है। अगले ही वर्ष वह पक्षाघात से मर गया। दुर्भाग्य से उसके उत्तराधिकारियों में ऐसा कोई दूरदर्शी और चतुर संगठनकर्ता न था, जो इस विशाल साम्राज्य के भार को ढो सकता।

महाराज रणजीतसिंह ने अपने जीवन-काल ही में अपने लड़के खड़गसिंह को राजतिलक कराकर उसे राज्य का उत्तराधिकारी घोषित कर दिया था। साथ ही राजा ध्यानसिंह को नायबुल सुलतान-ए-उज़मा खैरख्वाही समीमी दौलत सरकार, वज़ीर मुअज़्ज़िम, दस्तूरे मुखरम मुख्तार वा मुदासल महम कुल की उपाधि से विभूषित कर उसे वज़ीरे-आज़म बना दिया था। राजा की बीमारी की खबर चार साल से पंजाब में फैल रही थी। अब उसके मरने से किसीको आश्चर्य नहीं हुआ। ध्यानसिंह ने शवदाह से पूर्व मृत राजा के चरण छूकर प्रतिज्ञा की थी कि वह महाराज खड़गसिंह और उसके लड़के नौनिहालसिंह की सेवा ईमानदारी से करेगा। परन्तु खड़गसिंह से उसकी बनी नहीं। खड़गसिंह ने उसे पदच्युत करके चेतसिंह को अपना प्रधानमंत्री बनाया।

यह सिख राजा का दुर्भाग्य था।

देखने में रणजीतसिंह का नया राज्य बहुत विशाल था। परन्तु उसकी जड़ खोखली थी। रणजीतसिंह न दुरदर्शी था, न उच्चकोटि का राजनीतिज्ञ ही। न उसके कोई महान राष्ट्रीय आदर्श ही थे, जिनके सूत्र में पिरोकर राष्ट्र-निर्माण किया जाता है। न उसे विश्व की उस प्रगति का कुछ ज्ञान था जिससे जनक्रान्ति होकर नई सभ्यता जन्म ले रही थी। उसकी सारी विजय उसके व्यक्तिगत शौर्य का परिणाम थी। न उसने राज्य-शासन चलाने के लिए शिवाजी के अष्ट प्रधानों की भांति नई संस्था बनाई थी, न खालसा जाति में राष्ट्रीय भावना उसने उत्पन्न की। हकीकत तो यह है कि राष्ट्रीयता का मूल तत्त्व अभी एशिया में कहीं उदय ही न हुआ था। इसीका यह परिणाम हुआ कि सिख-राज्य का आधार एकदम निर्बल रह गया। दूसरे शब्दों में, महाराज रणजीतसिंह ने सिख-राज्य का जो इस्पाती विशाल लौह-यन्त्र तैयार किया था, उसके पुर्जों को जोड़नेवाले पेच लकड़ी के थे, जो यंत्र के भार ही से टूटते चले गए। उसने मरते समय अपने विशाल साम्राज्य का भार खड़गसिंह और राजा ध्यानसिंह इन दो ही व्यक्तियों पर डाल दिया, जिनमें परस्पर न समता थी, न मेल। पंजाब के रक्त में जो प्रचण्ड तीव्रता थी, उसका नियन्त्रण और उपयोग रणजीतसिंह ने अपूर्व योग्यता से किया था, पर उसकी मृत्यु होते ही शक्तिवान सिख-साम्राज्य अपनी शक्ति के धक्के ही से बिखरकर चूर-चूर हो गया। १८३९ में रणजीतसिंह की मृत्यु हुई और १८४९ में सिख-राज्य समाप्त हो गया। इन दस वर्षों का इतिहास अतिशय लज्जाजनक, अतिशय बर्बरतापूर्ण और अतिशय निन्दनीय था।

खड़गसिंह में राजा बनने की कोई योग्यता न थी। वह दिन में दो बार अफीम की गोली चढ़ाता और दिन-भर उसकी पीनक में पड़ा रहता। वह महा आलसी और निर्बुद्धि था। राजनीति में वह कोरा था। साहस उसमें था ही नहीं।

उसने राजा ध्यानसिंह और उसके पुत्र हीरासिंह का दरबार में आना बन्द कर दिया, तथा अपने नये वजीर चेतसिंह के हाथ की कठपुतली बन गया। चेतसिंह पक्का चलता-पुर्जा, खटपटी और दुश्च-

रित्र था। वह दुष्ट प्रकृति का आदमी था। परन्तु राजा ध्यानसिंह भी बड़ा कूटनीतिज्ञ व्यक्ति था। ध्यानसिंह ने खड़गसिंह के पुत्र नौनिहालसिंह और पत्नी चांदकौर को तथा उन सरदारों को जो खड़गसिंह के दुर्व्यवहार के शिकार थे, मिलाकर एक ज़बर्दस्त विद्रोह का संगठन किया और एक दिन सुबह जब खड़गसिंह अफीम की पीनक में झूम रहा था, वह दल-बल सहित किले में घुस गया। पहरेदारों को मारकर उसने खड़गसिंह को कैद कर लिया। चेतसिंह डरकर छिप गया। उसे शयनागार से निकालकर ध्यानसिंह ने अपने हाथ से उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले। कैद में खड़गसिंह को बहुत अपमानित किया गया और बहुत कष्ट दिए गए। नौनिहाल ने अपने असहाय पिता पर मनमाने अत्याचार होने दिए। अन्ततः एक वर्ष जेल-यंत्रणा भोगकर खड़गसिंह मर गया। उसकी दो रानियां तथा दस दासियां उसके साथ सती हुईं। अभी उसका शव जल भी न पाया था कि नौनिहाल एक दोस्त के हाथों में हाथ डाल पैदल ही वहां से चल दिया। नाले में उसने स्नान किया। फिर वह ज्योंही हुज़ूरीबाग के सिंहद्वार से गुज़रा, दीवार उसपर गिर गई। दोनों को सख्त चोट आई। उसका मित्र तो वहीं मर गया, पर नौनिहाल दो घंटे बाद मरा। इस प्रकार केवल एक वर्ष ही राज्य करके इस अभागे और क्रूर तरुण राजा का अंत हो गया।

नौनिहाल की मृत्यु के बाद षड्यंत्रों और हत्याओं की बाढ़ आ गई। नौनिहाल के मरने पर खड़गसिंह की विधवा चांदकौर रानी ने शासन की बागडोर अपने हाथ में ले ली और अपने ज़बर्दस्त समर्थक बना लिए। राजा ध्यानसिंह जम्मू के पहाड़ों में भाग गया और अपने भाई गुलाबसिंह को रानी के पास छोड़ गया। लाहौर-दरबार की इस घटनावली को अंग्रेज़ बड़े व्यग्र होकर देख रहे थे। उनकी लोलुप दृष्टि लाहौर पर थी। जिस रणजीतसिंह से वे डरते थे, वह तो अब मर चुका था। अंग्रेज़ सिखों की वीरता से भी बेखबर न थे। परन्तु उनकी चरित्रहीनता की दुर्बलता वे जान गए थे। अब वह अवसर आ पहुंचा था जिसकी वे ताक में थे। इस समय लाहौर-दरबार में मिस्टर क्लार्क ईस्ट इंडिया कम्पनी के एजेण्ट थे, जो राजा ध्यानसिंह के गहरे मित्र थे। राजा ध्यानसिंह भी पूरी तौर पर अंग्रेजों के दोस्त

थे। अब राजा ध्यानसिंह और मि० क्लार्क ने मिलकर यह शिगूफा छोड़ा कि स्वर्गीय महाराज रणजीतसिंह की विधवा रानी जिंदां ने, जो राजा की मृत्यु के समय गर्भवती थी, रणजीतसिंह की मृत्यु के बाद पुत्र-प्रसव किया है जिसका समाचार जान-बूझकर दरबार के लोगों ने छिपा रखा था। उन्होंने इस बात की सूचना अंग्रेज़ सरकार को दी और इस गहरी चाल से रणजीतसिंह के पुत्र के रूप में चांद-कौर का एक ज़बर्दस्त प्रतिद्वन्द्वी उठ खड़ा हुआ।

परन्तु रानी का एक और प्रतिद्वन्द्वी था, रणजीतसिंह का दूसरा बेटा शेरसिंह, जो मुकेरियां में बैठा सुअवसर की प्रतीक्षा कर रहा था। अब वह बाज़ की तरह लाहौर आ पहुंचा। उसने सरदार ज्वालासिंह को अपना सरदार बनाया और इनाम और लूट में बराबर का हिस्सा देने का प्रलोभन देकर राज्य की सेना को अपने पक्ष में कर लिया। लाहौर के बाहर 'बुद्धू का आवा' नामक टीले पर हज़ारों सिख सैनिक शेरसिंह के झण्डे के नीचे आ खड़े हुए। इस सेना ने खुल्लमखुल्ला जिंदां रानी के पुत्र दिलीपसिंह को अवैध बताया और शेरसिंह को पंजाब का राजा घोषित कर दिया। सेना ने किले पर गोले बरसाना और शहर को लूटना आरम्भ कर दिया। लाहौर में अन्धेरगर्दी मच गई। इसी बीच राजा ध्यानसिंह काश्मीर से सेना लेकर आ पहुंचा। उसने शेरसिंह का पक्ष लिया। शेरसिंह पंजाब का राजा बन गया और राजा ध्यानसिंह सुरक्षा का बहाना कर लाहौर-दरबार का सम्पूर्ण खजाना घोड़ों और गाड़ियों में लादकर काश्मीर ले गया।

परन्तु शेरसिंह खड़गसिंह से भी गया-गुज़रा निकला। वह शराब पीकर शिकार खेलता। राज-काज से उसे कोई सरोकार न था। षड्यंत्र अब और भी बढ़ गए थे। ध्यानसिंह फिर वज़ीर बन गए थे। राज्य का सब भार अब उन्हींपर था, पर उन्हें राज्य या प्रजा की अपेक्षा अपनी ही चिंता थी। पहली कलम उसने अपने प्रतिद्वन्द्वी ज्वालासिंह को ज़ंजीरों से बांधकर जेल में डलवा दिया, जहां वह तड़प-तड़पकर मर गया। अब शेरसिंह का दूसरा शिकार थी चांद-कौर रानी। उसने चांदकौर पर चद्दर डालकर ब्याह करने की इच्छा प्रकट की, पर उसके इन्कार करने पर उसने दासियों को लालच देकर

उसे मरवा डाला। बाद में इसी अपराध में दासियों के नाक-कान और हाथ कटवा दिए। उससे यह भूल हुई कि उनकी जीभ नहीं कटवाई, इससे शेरसिंह की बीभत्स पाप-कथा उन्होंने सारे पंजाब में फैला दी।

अब एक विचित्र, क्रूर और विश्वासघात-भरे षड्यंत्र का सूत्रपात हुआ। इस समय सारे राज्य में फूट पड़ी थी, और दरबार में दो दल बन गए थे। एक का नेता राजा ध्यानसिंह था, दूसरे के लहनासिंह और अजीतसिंह थे। इन्होंने राजा को विश्वास दिलाया कि ध्यानसिंह बड़ा खतरनाक आदमी है, वह आपको मार डालने की फिक्र में है। इसपर राजा ने उन्हें लिखित आज्ञा दे दी कि वे लोग चाहे जिस भी ढंग से ध्यानसिंह को मार डालें। उन्हें अपराधी नहीं माना जाएगा। राजा से वे लोग यह आज्ञा-पत्र लेकर ध्यानसिंह के पास पहुंचे और उसे आज्ञा-पत्र दिखाकर कहा कि राजा आपका जानी दुश्मन है। उसे मारे बिना आपका निस्तार नहीं। राजा ध्यानसिंह ने सुन तथा आज्ञा-पत्र देख उन्हें राजा को मार डालने का आज्ञा-पत्र लिख दिया। अन्ततः उन्होंने राजा शेरसिंह और उसके बारह वर्ष के पुत्र उत्तराधिकारी प्रतापसिंह का निर्दयतापूर्वक वध कर डाला। इस भीषण हत्याकाण्ड से राजधानी में प्रतिहिंसा की ज्वाला भड़क उठी। इस प्रतिक्रिया का नेता था राजा ध्यानसिंह का लड़का हीरासिंह। खालसा सेना तथा सौ तोपों के साथ सांझ के समय हीरासिंह किले से नगर में दाखिल हुआ। अजीत और लहना लड़ते हुए मारे गए। उनके सब साथी भी कत्ल कर डाले गए। चार दिन की लड़ाई और खून-खराबी के बाद बालक राजा दिलीपसिंह को पंजाब का राजा घोषित कर दिया गया। वज़ीर का पद राजा हीरासिंह ने संभाला। इस समय दिलीपसिंह की आयु पांच वर्ष की थी। उसकी माता जिंदां उसकी अभिभावक बनी थी।

बारंबार के इस राज्य-परिवर्तन ने सिपाहियों की शक्ति को बहुत बेकाबू कर दिया था। प्रत्येक नेता को उन्हींका सहारा लेना पड़ता था और उन्हें इनाम के तौर पर शहर और कभी-कभी सरकारी खज़ाने और तोशाखाने को लूटने की भी आज्ञा देनी पड़ती थी। वास्तव में इस समय वास्तविक सत्ता खालसा सिपाहियों की थी। सरदार उनके केवल सिख सेना के संसप्तक समझे जाने लगे थे।

राजा हीरासिंह बड़ा चालाक आदमी था। वह कई भाषाओं का पण्डित और अंग्रेज़ों का क्रीत दास था। उनका प्रधान सलाहकार जल्ला पण्डित था। अभी यह व्यवस्था जम भी न पाई थी कि दिलीपसिंह के मामा जवाहरसिंह ने कई सरदारों को मिलाकर हीरासिंह के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा ऊंचा कर दिया। उस समय सिख-साम्राज्य का प्रत्येक सरदार राजशक्ति हथियाने के जोड़-तोड़ लगा रहा था। आगे-पीछे की बात कौन सोचता। नित्य नये बखेड़े उठ खड़े हो रहे थे और भांति-भांति के अनर्थ रोज़ होते थे। विवेक और दया-माया तो जैसे पंजाब से उठ गए थे। इधर लाहौर षड्यंत्रों का अड्डा बना हुआ था, उधर काश्मीर के राजा गुलाबसिंह अपना उल्लू सीधा करने में लगे थे। लाहौर-दरबार की दुर्व्यवस्था उनके लिए आशीर्वाद बन गई थी। इसी धांधलेबाज़ी में कुंवर पिथौरासिंह और कुंवर काश्मीरासिंह ने अपने को गद्दी का दावेदार घोषित कर विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दिया। ये दोनों नवयुवक अपने को रणजीतसिंह के पुत्र कहते थे। पर इनका वास्तविक किस्सा यह था कि गुजरात के सरदार साहबसिंह की दो विधवाएं थीं—रत्नकौर और दयाकौर। उन दोनों को रणजीतसिंह ने चादर डालने की रीति से घर में डाल लिया था। रानी दयाकौर ने ये दोनों लड़के मोल खरीदे थे। पिथौरासिंह तो लाहौर के एक दुकानदार के यहां से खरीदा गया था, और काश्मीरासिंह जम्मू से खरीदा गया था। दयाकौर ने दोनों को बेटा बनाया हुआ था। इसी नाते से ये इतने बड़े सिख-साम्राज्य के स्वामित्व का दावा करने लगे थे। हीरासिंह और जल्ला पण्डित उनके विरोधी थे, तथा खालसा सेना उनके पक्ष में थी। गुलाबसिंह ने जम्मू बुलाकर उन दोनों को नज़रबन्द कर उनसे एक लाख रुपया तलब किया। उधर मुलतान के दीवान सावनमल के मरने पर उनके लड़के दीवान मूलराज ने लाहौर को खिराज देना ही बन्द कर दिया और मुलतान को स्वतन्त्र राज्य कहने लगे। खालसा सेना को महीनों से वेतन नहीं मिला था। वह धीरे-धीरे नियन्त्रण से बाहर हो रही थी। उसने काश्मीर से राजा सुचेतसिंह को मन्त्री-पद देने के लिए बुलाया, जो हीरासिंह का चचा था। परन्तु हीरासिंह ने खालसा सेना को घूस देकर उसीके द्वारा उन्हें मरवा डाला, परन्तु तुरन्त ही एक नया षड्यन्त्र

उठ खड़ा हुआ जिसका नेतृत्व स्वयं जिंदां रानी कर रही थी। राजा का खज़ांची लालसिंह, जो रानी का प्रेमी भी था, रानी का सहायक था। हीरासिंह और उसके साथी जल्ला पण्डित ने निकल भागने की चेष्टा की, पर विरोधी सेना ने उन्हें घेर लिया। उससे पिण्ड छुड़ाने के लिए उन्होंने थैलियों के मुंह खोल दिए और रास्ते में सोना बिखेर दिया। परन्तु उसकी रक्षा न हो सकी और अन्त में राजा हीरासिंह और उसके सलाहकार जल्ला पण्डित खालसा सेना के हाथों बुरी मौत मरे। उनके शवों की भयानक दुर्दशा की गई। जल्ला का सिर प्रत्येक दुकान के आगे दिखाया गया और सारे शहर में वह सिर दिखाकर कुत्तों को खिला दिया गया। राजा हीरासिंह का सिर तथा राजा गुलाबसिंह के लड़के मियां मोहनसिंह का सिर मोरी दरवाज़े पर लटकाए गए।

हीरासिंह की मृत्यु के बाद जवाहरसिंह वज़ीर हुए। ये रानी जिंदां के भाई और दिलीपसिंह के मामू थे। पिथौरासिंह ने इस समय अटक का किला अधिकृत कर लिया था। जवाहरसिंह ने उसे कैद कराकर और गला घोटकर मरवा डाला। यह खबर सुनकर खालसा सेना एकदम जवाहरसिंह के विरुद्ध हो गई। उसने हुक्म भेजा कि जवाहरसिंह हाज़िर हों। जवाहरसिंह हाथी पर सवार हो और बालक राजा दिलीपसिंह को गोद में बिठाकर तथा दूसरे हाथी पर अपनी बहन रानी जिन्दां को बिठाकर सोना बरसाते हुए खालसा सेना के सामने पहुंचा और सेना को बहुत लोभ-लालच दिया। पर खालसा सेना ने बालक राजा को तो उसकी गोद से छीन लिया और जवाहर-सिंह को हाथी से उतरने को कहा। उसने बहुत हाथ-पैर जोड़े पर उसे वहीं मार डाला गया। उसका सारा धन लूट लिया गया और जब उसकी लाश हाथी से नीचे गिरी तो सिपाहियों ने उसे लातों से खूब रौंदा। जब जवाहरसिंह की दो रानियां और तीन दासियां सती होने लगीं तो खालसा सेना के सिपाहियों ने उनके शरीर के गहने नोच लिए। उनकी नाक की नथ नोच ली। यहां तक कि जरी के लालच से उनके पायजामे तक पर हाथ फेंका। इन स्त्रियों को वास्तव में ज़बरदस्ती सती किया गया था। बहुत दिन तक भाई के मरने से रानी जिन्दां शोक से पागल रही। वह प्रायः सिर के बाल खोले लाहौर

की गलियों में घूमती हुई सर्वसाधारण के सामने बिना किसी पर्दे के भाई की समाधि पर भाटी दरवाज़े पहुंचती और सिर धुनती रहती।

इधर तो पंजाब में ये सब वीभत्स काण्ड हो रहे थे, उधर अंग्रेज़ सिख-साम्राज्य को हड़पने की तैयारी में थे। प्रबल खालसा सेना से उन्हें टक्कर लेनी होगी, यह वे जानते थे। उन्होंने लुधियाना और फ़ीरोज़पुर में तो अपनी छावनियां डाली हुई थीं ही, अब अम्बाला में भी छावनी डाल दी थी और उसकी पीठ पर मेरठ में भी छावनी डालकर भारी सेना का संगठन एकत्र कर लिया था। इस समय सतलुज में अंग्रेज़ी जहाज़ घिरे रहते थे। देशद्रोही सरदार सिख-सेना को अंग्रेज़ों से भिड़ने को भड़का रहे थे, क्योंकि खालसा सेना की बढ़ती हुई शक्ति से सभी भयभीत थे। राजकोष खाली था और रानी जिन्दां अब जैसे-तैसे बालक राजा दिलीपसिंह की प्रतिपालिका बनकर काम चला रही थी। उसने लालसिंह को अपना सलाहकार मन्त्री बनाया हुआ था और उसे राजा का खिताब दे दिया था। अफ़वाह थी कि रानी से उसके अनुचित सम्बन्ध थे। खालसा सेना लालसिंह से भी बिगड़ रही थी और अब किसी भी समय अंग्रेज़ों से भयंकर युद्ध हो सकता था। सारे पंजाब में अफ़वाह फैली थी कि अंग्रेज़ सतलुज पर नावों का पुल बनाने के लिए बम्बई से नावें मंगा रहे हैं और मुलतान पर आक्रमण करने को सिन्ध पर सेना एकत्र कर रहे हैं।

११

वाटरलू संग्राम ने अंग्रेज़ों के सिर से फ्रांस का भूत तो उतार दिया था, परन्तु अब उनके सिर पर रूस का भूत सवार था। साम्राज्यवाद का यही रूप है कि वह सदा शत्रुओं के भय से कांपता रहता है। जिस समय सन् १८३६ में लार्ड आकलैंड हिन्दुस्तान के गवर्नर-जनरल बनकर आए तब अंग्रेज़ अफ़गानिस्तान के रास्ते रूस के भारत पर आक्रमण करने के सपने देख रहे थे और बारम्बार उनकी नज़र रणजीतसिंह पर जाती थी, जिसकी प्रबल बाहिनी के भरोसे वे उधर से बेफ़िक्र थे। परन्तु अब रूस मध्य एशिया में अपना प्रभाव बढ़ा रहा

था। सन् १८३७ में ईरान की सेनाओं ने हिरात पर आक्रमण कर दिया। अंग्रेज़ों ने समझा कि इसमें रूस का हाथ है। हिरात पर कब्ज़ा होने से वे भारत में आसानी से प्रविष्ट हो सकते थे। इस समय अफगानिस्तान की स्थिति भी बहुत डांवाडोल हो उठी थी। अहमदशाह अब्दाली के वंशधर शाहशुजा को हराकर बरुकज़ाई वंश का दोस्तमुहम्मद अफगानिस्तान का अमीर बन गया था और शाहशुजा भागकर भारत में आ अंग्रेज़ों की संरक्षकता में लुधियाना में रह रहा था। जब ईरान ने आक्रमण किया तो इससे अंग्रेज़ और दोस्तमुहम्मद दोनों ही डर गए। दोनों ने सन्धि की बात की। दोस्तमुहम्मद रूस के विरुद्ध अंग्रेज़ों के गुट्ट में मिलने को तैयार था, पर उसने यह पख लगाई थी कि अंग्रेज रणजीतसिंह से पेशावर छीनकर उसे वापस दिला दें। पर रणजीतसिंह को अंग्रेज नाराज़ नहीं कर सकते थे। इससे दोस्तमुहम्मद ने रूस की ओर रुख किया और तुरन्त ही रूस का राजदूत काबुल में जा पहुंचा। बस, इसी बात पर आकलैंड ने काबुल पर आक्रमण करने का निर्णय कर लिया। उसने सोचा, इस समय वहां आन्तरिक स्थिति डांवाडोल है, अतः यह अच्छा अवसर है। अंग्रेज़ों ने सन् '३८ में रणजीतसिंह से एक सन्धि की और यह ठहरा कि शाहशुजा को फिर अफगानिस्तान की गद्दी पर बिठाया जाए। शाहशुजा ने प्रतिज्ञा की कि वह अंग्रेज़ी सरकार का फर्माबरदार रहेगा। सन् '३९ में जब रणजीतसिंह अन्तिम सांस ले रहा था, ब्रिटिश सेनाएं सिन्ध की राह अफगानिस्तान में घुस गईं और गज़नी को फतह करती हुई काबुल जा धमकीं। दोस्तमुहम्मद भाग खड़ा हुआ और शाहशुजा को अंग्रेज़ों ने काबुल का अमीर बना दिया। इस विजय को बहुत महत्त्व मिला। आकलैंड को अर्ल का खिताब मिला। मार्शल कीन को लार्ड बना दिया गया। सेक्रेटरी मैकनोटन को सर की उपाधि दी गई।

पर अभी यह धूमधाम खत्म भी नहीं हुई थी कि रंग बदलने लगा। अफगानिस्तान की स्वतन्त्र और लड़ाकू जाति ने अंग्रेज़ों की इस संगीनों की सत्ता को सहन नहीं किया। वे शाहशुजा से भी घृणा करते थे। अफगानिस्तान का बच्चा-बच्चा अंग्रेज़ों का और उनके पिट्ठू शाहशुजा का दुश्मन हो उठा। अंग्रेज सिपाहियों के अत्याचारों ने अफगानों को बुरी तरह उत्तेजित कर दिया। अपनी विजय में

उन्मत्त गोरे सिपाही काबुल की सुन्दर स्त्रियों की खोज में घूमने लगे और उन्होंने कई प्रतिष्ठित अफगान परिवारों की पवित्रता को भंग कर दिया। अफगानिस्तान में जगह-जगह उपद्रव होने लगे। चारों ओर विद्रोह की आग भड़क उठी। उस समय अंग्रेज़ी सेना के सेनापति प्रसिद्ध एलफिंस्टन थे, पर वे बहुत बूढ़े हो गए थे और रोगी भी थे। उन्होंने यह एक भूल की कि वालाहिसार का साधन-सम्पन्न दुर्ग तो उन्होंने शाहशुजा को दे दिया और अंग्रेज़ी सेना को खुले मैदान में कैंप लगाकर रखा।

बस, एक दिन अफगान अंग्रेज़ी सेना पर टूट पड़े। अंग्रेज़ राजदूत अलैक्ज़ेण्डर को घर से घसीटकर लाया गया और उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले गए। फिर अफगानों ने अंग्रेज़ी सेना का स्टोर लूट लिया। अब घबराकर अंग्रेज़ सेनापति ने अफगानों से संधि की याचना की। पर जब संधि की बातचीत करने सर मेकनाटन गए तो उन्हें भी कत्ल कर दिया गया। आखिर अंग्रेज़ अपना बहुत-सा सामान अफगानों को भेंट कर सोलह सौ सिपाहियों के साथ भारत की सीमा की ओर रवाना हुए। इस लौटती हुई अंग्रेज़ सेना पर पठान कबाइलिये ऐसे टूट पड़े, जैसे लाश पर गीध। अन्त में सेनापति एलफिस्टन और अंग्रेज़ अफसरों को स्त्री-बच्चे बन्धक के तौर पर दोस्तमुहम्मद के हाथ सौंपने पड़े। शेष सिपाही मरने के लिए बर्फीली सड़कों पर कबाइलियों की दया पर छोड़ दिए गए। ६ जनवरी को काबुल से जो सोलह सौ सिपाही जलालाबाद की ओर चले थे, उनमें से बचकर केवल एक अंग्रेज़ डाक्टर ब्राइडन एक सप्ताह बाद भूखा और घायल अर्द्धमृत अवस्था में जलालाबाद पहुंचा था। इस भयानक समाचार से अंग्रेज़ों पर मातम छा गया। बेतहाशा रुपया खर्च करके और हज़ारों जानें गंवाकर यह भीषण पराजय उन्हें मिली। बोर्ड ने आकलैण्ड को वापस बुला लिया और लार्ड एलिनबरा गवर्नर-जनरल बनकर हिन्दुस्तान में आए। इस समय भी अंग्रेज़ी सेना अफगानिस्तान के हर मोर्चे पर हार रही थी। हलकज़ाई में जनरल इंगलैण्ड और गज़नी में जनरल पामर मार खा रहे थे। कंधार की सेनाएं मुसीबत में फंसी थीं। इन सब बातों से घबराकर लार्ड एलिनबरा ने ब्रिटिश सेना को अफगानिस्तान खाली करने की आज्ञा दे दी। परन्तु इसी समय पठानों ने शाहशुजा

को मार डाला और अफगानिस्तान में अव्यवस्था फैल गई। इस परिस्थिति से लाभ उठाकर लार्ड एलिनबरा ने दूसरा हुक्म भेजा कि यदि जनरल नॉट ठीक समझें तो कंधार से जलालाबाद सीधे न आकर गजनी और काबुल होते हुए और पठानों को एक ठोकर लगाते हुए आएं। इस समय जलालाबाद की सेनाओं को लेकर जनरल पोलक भी जनरल नॉट से जा मिला। इन दोनों सेनाओं की सम्मिलित शक्ति ने अफगानों की बिखरी हुई सेनाओं को परास्त करके बालाहिसार के किले पर फिर यूनियन जैक फहरा दिया। एक बार उन्होंने प्रतिहिंसा का फिर नंगा नाच नाचा और अतिशय क्रूर और नृशंस अत्याचारों से काबुल को रौंद डाला। मस्जिदों तक को मिस्मार कर दिया। सारा काबुल शहर लूट-मार कर नष्ट कर दिया गया। जब वे लौटे तो अपने साथ सोमनाथ के तथाकथित फाटक, जिन्हें महमूद गज़नी ले गया बताते थे, उठा लाए। दोस्तमुहम्मद को कैद से छुड़ाकर अमीर बना दिया। लार्ड एलिनबरा ने इस विजय की बड़ी शानदार जयन्ती मनाई। उसने इस विजयिनी सेना का स्वागत करने को कलकत्ता से फीरोज़पुर तक दौड़ लगाई और गाजे-बाजे के साथ बड़ी धूमधाम से उस सेना का स्वागत किया, जिसके सेनापति जनरल नॉट और जनरल पोलक थे।

अफगानिस्तान पर आक्रमण करने के लिए जो अंग्रेज़ी सेनाएं आई थीं, वे सिंध की राह सिंधनद के मार्ग से आई थीं। सन् १७३१ ही में अलेक्ज़ैण्डर बर्न्स ने काबुल से लौटते हुए सिंधनद के प्रवाह को सैनिक महत्त्व दे दिया था। अब इस अभियान के बाद उनका ध्यान सिंध के सैनिक महत्त्व की ओर गया और सिंध पर अधिकार करने को वे व्यग्र हो उठे। सिंध में इस समय बलूच अमीरों का राज्य था। उनकी तीन राजधानियां थीं : हैदराबाद, खैरपुर और मीरपुर। अहमदशाह दुर्रानी के शासन-काल में वे अफगानिस्तान के अधीन थे; परन्तु अब स्वतन्त्र हो गए थे। सिंध पर रणजीतसिंह की भी नज़र थी, पर अंग्रेज़ों ने उसके मन्सूबे पूरे नहीं होने दिए। सन् '३८ से सिंध में एक अंग्रेज रेज़ीडेण्ट भी रहने लगा था। तय यह हुआ था कि अंग्रेज सिंध में केवल व्यापारी जहाज़ चलाएंगे, लड़ाई के जहाज नहीं। परन्तु जब उन्होंने अफगानिस्तान पर अभियान किया तो सब सन्धि

की शर्तें तथा अन्तर्राष्ट्रीय नियम ताक में रखकर लड़ाई के जहाज़ सिंध में ठेल दिए गए। जब अफगानिस्तान में अंग्रेज़ों की पहली हार हुई तो उसका खमियाज़ा पूरा करने को लार्ड एलिनबरा ने सिंध को अपना शिकार बनाया। सिंध पर आक्रमण का बहाना तो भेड़ और भेड़िये की कहानी थी। लार्ड एलिनबरा ने पहला काम यह किया कि सिंध के रेज़ीडेण्ट मेजर जेम्स औटरम को हटाकर सर चार्ल्स नेपियर को रेज़ीडेण्ट नियुक्त किया। नेपियर एक योग्य सेनापति था। पर वह उग्र और झगड़ालू था। जेम्स औटरम नरम आदमी था। वह लार्ड एलिनबरा के मतलब का आदमी न था। नेपियर ने आते ही अपना काम शुरू कर दिया और अंग्रेज़ी फौजों ने बिना ही पूर्वसूचना के सिंध के प्रसिद्ध दुर्ग ईमानगढ़ पर चढ़ाई करके उसपर अधिकार कर लिया। इस सीनाज़ोरी से बेचारे अमीर घबरा गए। सब प्रजा भड़क गई, भीड़ ने रेज़ीडेन्सी पर आक्रमण कर दिया। अब नेपियर को पूरा बहाना मिल गया और सिंध के विरुद्ध खुली युद्ध-घोषणा कर दी गई। मियनी के मैदान में दोनों सेनाओं की मुठभेड़ हुई। अमीर की सेना में तीस हज़ार सिपाहियों की भीड़ थी, जबकि जनरल नेपियर की कमान में तीन हज़ार व्यवस्थित योद्धा थे। सिंध की सेना पूरी तौर पर परास्त हो गई और भेड़ों पर भेड़िया जीत गया। अन्त में हैदराबाद को जी भरकर लूटा गया, अमीरों के महल और ज़नानखानों में घुस-घुसकर लूटा गया, कत्लेआम और बलात्कार किया गया। उनके सोने-चांदी और जवाहरात से लबालब खज़ाने लूट लिए गए। लूट का अनुमान इसीसे किया जा सकता है कि उसमें से पन्द्रह लाख से भी ऊपर की रकम चार्ल्स नेपियर की जेबों में रह गई थी। इस समय नेपियर ने कहा था, हमारा यह काम साहस और बदमाशी से भरा हुआ है। हमारे हाथ अफगानों के खून से भरे हुए हैं। अमीरों को इसलिए सज़ा दी गई क्योंकि हम अफगानों से पिट गए थे, और अब हमने अमीरों को पीट दिया। छुट्टी हुई। इस प्रकार अंग्रेज़ों ने सिंध को चुपचाप अपनी जेब में डाल लिया और अब कलकत्ता में सिंध और अफगानिस्तान के लूटे हुए सोने-चांदी और हीरे-मोतियों के अम्बार लगे पड़े थे।

१२

सन् १८४२ के जून का अंतिम सप्ताह था। अभी बारह की तोप दगी थी। गवर्नर-जनरल लार्ड एलिनबरा अपनी मूंछों और भौंहों में सावधानी से खुशबूदार खिज़ाब लगा रहे थे। खिज़ाब लगाकर उन्होंने सामने के कद्देआदम शीशे में अपनी छवि देखी। मन ही मन हंसे और अकड़कर खड़े हो गए। अपनी मूंछों की नोक बनाई और कुछ देर कमरे में इधर से उधर टहलते रहे। फिर उन्होंने घंटी बजाने की रस्सी खींची। उनका खास खितमतगार चट आ हाज़िर हुआ। खिदमतगार एक दोगला पोर्चुगीज़ था। उसने झुककर सलाम किया और अदब से सिर झुकाकर खड़ा हो गया। गवर्नर-जनरल ने उसे पोशाक पहनाने का हुक्म दिया। खिदमतगार पोशाक पहनाने लगा। उन्होंने अपनी पूरी सैनिक वर्दी पहनी। गवर्नर-जनरली का आसमानी पट्टा नफासत से धारण कर उसपर स्टार लगाया और भारत के सर्वोच्च सेनापति के तमगे लटकाए। खूब सजधजकर और अकड़कर उन्होंने कद्देआदम आईने में अपनी धज देखी। फिर मूंछों की नोक बनाते हुए खिदमतगार से कहा, 'मेरे पर्सनल अटेची कर्नल लेग्फोर्ट को भेज दो। और याद रखो, लंच मैं ठीक एक बजे लूंगा। इसमें एक मिनट भी इधर-उधर न हो।'

'बहुत अच्छा योर एक्सेलैन्सी, मगर···'

'यह मगर मुझे पसन्द नहीं है। मैंने जो हुक्म दिया है उसका ध्यान रखो। जाओ, कर्नल को भेज दो।'

खिदमतगार सिर झुकाकर चला गया और थोड़ी देर बाद कर्नल ने आकर फौजी सैल्यूट किया। लार्ड एलिनबरा उसकी ओर घूमे। उन्होंने कहा, 'कर्नल, क्या वह डिस्पैच तैयार हो गया ?'

'यस योर एक्सेलैन्सी।'

'तो देखो, ठीक तीन बजे मीटिंग होनी चाहिए और इसकी कुल कार्यवाही एकदम पोशीदा रहनी चाहिए।'

'ऐसा ही होगा योर एक्सेलैन्सी।'

'जनरल नॉट और जनरल पोलक आ गए हैं न ?'

'यस, योर एक्सेलैन्सी।'

'ठीक है। देखो, डिस्पैच लेकर तुम्हें खुद ही लंदन जाना होगा। एक खास तेज़ चाल का जहाज़ तुम्हें ले जाएगा। क्या तुम कल रात को रवाना हो जाओगे ?'

'निश्चय ही योर एक्सेलैन्सी।'

'लेकिन याद रखो गफलत न हो। काम जोखिम का है। लंदन में मैं चार बार बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स का प्रेसीडेण्ट रह चुका हूं। ऐसा न हो कि इस बुढ़ापे में मेरी मिट्टी ख्वार हो।'

'आप इत्मीनान रखिए योर एक्सेलैन्सी।'

'खैर, तो तुम कैप्टेन मूर को मेरे पास भेज दो और तमाम काग-ज़ात तैयार रखो।'

कर्नल सिर झुकाकर चला गया। थोड़ी देर बाद कैप्टेन मूर ने गवर्नर-जनरल के आगे आकर सिर झुकाया।

गवर्नर ने कहा, 'कैप्टेन मूर, इस बार तुम्हें ऐसा जोखिम का काम सौंपा जा रहा है, जैसा शायद ही कभी किसी अफसर को सौंपा गया हो। मैं आशा करता हूं तुम इसे बखूबी अंजाम दोगे।'

'विश्वास रखिए योर एक्सेलंन्सी, मैंने ग्यारह बार अटलाण्टिक पार किया है। एक बार भी चूक नहीं हुई। इस बार भी न होगी।'

'तुम्हारे पक्ष में मैंने बोर्ड आफ डाइरेक्टर को बहुत कुछ लिख दिया है और भरोसा रखो कि इस यात्रा के बाद तुम्हारी पैंशन हो जाएगी। इसके अतिरिक्त तुम्हें एक अच्छी रकम इनाम में मिलेगी।'

'मैं आपकी कृपा का सदा आभारी रहूंगा योर एक्सेलैन्सी।'

'तुम्हारे जहाज़ में तोपें कितनी हैं ?'

'इक्कीस योर एक्सेलैन्सी।'

'सब लम्बी मार की हैं ?'

'सब।'

'और सैनिक ?'

'तीन सौ। सुरक्षित और हथियारों से चाकचौबन्द।'

'मैं चाहता हूं जहाज़ की रवानगी पोशीदा रहे। तुम तैयारी के लिए कितना समय चाहते हो ?'

'केवल छः घंटा योर एक्सेलैन्सी।'

'ठीक है। छः घंटा पूर्व तुम्हें सूचना दे दी जाएगी।'

'लेकिन खज़ाना बारह घंटा पहले जहाज़ पर पहुंच जाना आवश्यक है।'

'ऐसा ही होगा।'

'जनरल नॉट तुम्हारे साथ जा रहे हैं।'

'बहुत अच्छा योर एक्सेलैन्सी।'

'क्या तुम समझते हो कि तुम्हारा जहाज़ सब प्रकार की दुर्घटनाओं का सामना करने में समर्थ है?'

'मैं तो ऐसा ही समझता हूं, योर एक्सेलैन्सी।'

'खैर, तो अब तुम जा सकते हो।'

'कैप्टेन सलाम करके चला गया। उसी समय खिदमतगार ने लंच की सूचना दी। गवर्नर-जनरल महोदय लंच को चले गए।

१३

सन् १८४२ के अगस्त का अन्तिम सप्ताह था, जब ठीक साढ़े आठ बजे गंगासागर के बन्दरगाह से वह अथाह गुप्त खज़ाना लेकर अंग्रेज़ी जहाज़, 'ट्यूटानिया' रवाना हुआ। समुद्र स्तब्ध था और संध्या के अंधकार में समुद्र का जल काला प्रतीत हो रहा था, आकाश में तारे टिमटिमा रहे थे। यह जहाज़ खास तौर पर ऐसा बनाया गया था कि बाहर से वह एक साधारण व्यापारी जहाज़ प्रतीत होता था, परन्तु उसमें एक मजबूत लड़ाके जहाज़ के सब साधन उपस्थित थे। नीचे के हिस्से में इक्कीस तोपें रखी हुई थीं जो ज़ंजीरों से जकड़ी हुई थीं। वे इस ढग पर रखी हुई थीं कि एकाएक उन्हें कोई नहीं देख सकता था। जहाज में खलासी से कप्तान तक सब अंग्रेज़ थे, और सब जंचे हुए विश्वासी व्यक्ति थे। जहाज़ का कप्तान कैप्टेन मूर मंजा हुआ नाविक था। उसका सहायक भी अनुभवी नाविक था। कैप्टेन मूर की आयु पचास के पार होगी। वह दृढ़, कष्ट-सहिष्णु और धैर्यवान था। परन्तु जहाज़ पर जो विशिष्ट व्यक्ति था, वह कद में लम्बा एक वृद्ध पुरुष था। उसके सिर के बाल सफेद थे। पर वह तीर की भांति सीधा खड़ा होता था। आंखें उसकी बड़ी पैनी थीं।

वह साधारण पोशाक पहने था। लबादे के नीचे ढीली-ढाली पैंट और चमड़े की वास्कट। सिर पर बड़े छज्जे की टोपी। उसकी ठोड़ी मोटी थी और उससे उसकी दृढ़चित्तता टपकती थी। यही अफगानिस्तान का प्रसिद्ध विजेता जनरल नॉट था, जिसका यश इस समय घर-घर गाया जा रहा था। जहाज़ पर तीन सौ सैनिक थे। वे सब अंग्रेज़ थे और उनमें से प्रत्येक की व्यक्तिगत जांच कर ली गई थी।

आधी रात हो गई थी और जहाज़ अब खुले समुद्र में भरपूर गति से जा रहा था। हवा कुछ तेज़ हो गई थी। समुद्र की लहरें ज़ोर से उठ रही थीं। पर जहाज़ पर इसका कुछ भी असर न था। जनरल नॉट शांति के साथ डेक पर टहल रहे थे। उनके साथ कैप्टेन मूर थे। दोनों आदमी रुक-रुककर धीरे-धीरे बातें करते जा रहे थे। कप्तान अत्यन्त विनीत भाव से जनरल की प्रत्येक बात का उत्तर दे रहा था। दोनों ही व्यक्तियों के सामने भारत से इंगलैंड तक का लम्बा सफर था और उनके सिर पर बहुत ही जबर्दस्त ज़िम्मेदारी थी, क्योंकि वे इस समय इतिहास के एक अत्यन्त गुप्त और सबसे बड़े खज़ाने को इंगलैंड ले जा रहे थे, जिसके इंगलैंड पहुंचने पर सम्पूर्ण इंगलैंड के यन्त्रोद्योग में भारी क्रांति की सम्भावना थी।

दस बजने पर जनरल ने अपनी घड़ी पर नज़र डाली और कहा, 'कैप्टेन, सावधान रहिए, सब बातें गुप्त और यथावत रहे। इस समय हमारे साथ समूचे इंगलैंड का भाग्य है।'

'भले ही प्राण चले जाएं, पर असावधानी न होने पाएगी जनरल।'

'कोई बात हो तो मुझे खबर देना, और याद रखना कि समुद्र में रहना शत्रु के मुकाबले में रहने के बराबर है। खुले समुद्र में एक जहाज़ उस स्थिति में होता है जिस स्थिति में रणक्षेत्र में सेना।'

'मैं प्रत्येक बात याद रखूंगा जनरल।'

बूढ़ा जनरल अपने केबिन में चला गया। कप्तान बड़ी देर तक फैली जलराशि को देखता रहा।

१४

अरब सागर में एक जहाज़ तेज़ से तेज़ चाल पर जा रहा था। इस जहाज़ पर कोई झंडा न था और यह सदैव इस ढंग पर चल रहा था कि जिससे वह दूसरे जहाज़ों की नजर में न चढ़ जाए।

सुन्दर प्रभात था। प्रकृति की अपूर्व शोभा चारों ओर छाई हुई थी। समुद्र शांत था। डाकू मोशिए अकेले डेक पर टहल रहे थे। उनकी नज़र रह-रहकर सामने समुद्र में उठी चट्टानों की ओर उठ जाती थी, जो कुछ मील के अन्तर पर थीं। उनके चेहरे पर गम्भीर रेखाएं उभर रही थीं। अभी सूर्य के उगने में विलम्ब था। जो मांझी काम पर लगे थे, उनके अतिरिक्त सब सो रहे थे। परन्तु मैडम कुछ बहुत ही ज़रूरी काम में लगी थीं। वह जल्दी-जल्दी कुछ लिख रही थीं। लिखकर टेबल से सिर उठाकर मैडम ने व्लॉडक को तलब किया। व्लॉडक के आने पर उसे मोशिए को बुलाने का हुक्म दिया। मोशिए तत्काल ही केबिन में आ गए। व्लॉडक केबिन का द्वार बंद करके चला गया।

मैडम ने कहा, 'तो हम उस जहाज़ के निकट पहुंच गए।'

'नहीं, अभी वह हमसे दूर है। लेकिन कार्यवाही हमें अभी तुरंत ही करनी चाहिए। उन चट्टानों के उस पार खुले समुद्र में वह जहाज़ लंगर डाले खड़ा है। उसमें कुछ खराबी आ गई है।'

'तो क्या आप तैयार हैं मोशिए ?'

'यस मैडम।'

'क्या आप व्लॉडक को साथ रखना पसंद करेंगे ?'

'नहीं, वह जख्मी है, इसके अतिरिक्त तुम्हें उसकी आवश्यकता होगी। मैं हेनरी को ले जाना चाहता हूं।' उन्होंने भेद-भरी नजर से मैडम की ओर देखा। मैडम ने मोशिए का अभिप्राय समझ लिया।

उसने कहा, 'और वह छोकरी ?'

'आज ही रात को उसे समुद्र में फेंक देना। मैं समझता हूं मुठ-भेड़ कल दोपहर तक होगी।'

'कल दोपहर तक ?'

'बेशक। अपनी तैयारी के लिए मुझे इतना ही समय चाहिए, तब

तक तुम्हारे जहाज़ पर उनकी नज़र नहीं पड़नी चाहिए। तुम अच्छी तरह उन चट्टानों की आड़ में छिप सकती हो।'

'तो एक बार सब बातों पर फिर विचार कर लो मोशिए। उस जहाज़ पर इक्कीस तोपें हैं और तीन सौ सिपाही, सब हथियारबंद। जनरल नॉट की कमान में। जनरल नॉट प्रसिद्ध सेनापति हैं। उन्होंने काबुल को फतह किया है।'

'खैर, तो अब उन्हें मुझसे हाथ मिलाना है, देखूंगा।'

'हमें क्या करना होगा, मोशिए ?'

'जब तक मेरा संकेत न मिले, खामोश रहना। जिससे तुम्हारे जहाज़ का कुछ भी गुमान उन्हें न हो। वे पहाड़ियां तुम्हें मदद देंगी। इसके बाद इशारा होते ही जहाज़ पर टूट पड़ना। आगे जो होगा मैं देख लूंगा।'

'उनके पास इक्कीस तोपें और तीन सौ सिपाही हैं। हमारे पास नौ तोपें और डेढ़ सौ आदमी हैं।'

'बस ?'

'और कुछ बात है मोशिए ?'

'यदि विपरीत परिस्थिति हो तो मैडम, तुम अपना बचाव कर सकती हो। परन्तु खरीता और सब कागज़ात नष्ट कर देना।'

'ओह, उसका प्रबन्ध मैंने कर लिया है मोशिए। मुझे तुम कमज़ोर मत समझना।'

'तो मैडम, अब ज़रा हेनरी को बुलाओ।'

हेनरी के आने पर मोशिए ने कहा, 'हेनरी, तुमने कहा था कि तुम साहसिक नाविक हो।'

'आज़माकर देखिए मोशिए।'

'तुम डूब मरना पसंद करते हो या गोली खाना ?'

'गोली खाना मोशिए।'

'यह अच्छा है। वे सामने खड़ी चट्टानें देख रहे हो ?'

'खूब अच्छी तरह।'

'क्या तुम खुले समुद्र में एक डोंगी लेकर वहां तक जा सकते हो ?'

'क्यों नहीं, क्या यह आवश्यक है ?'

'मेरे दोस्त, हमें वहां पहुंचना है।'

'आप मोशिए, मेरे साथ चलेंगे ?'

'बेशक।'

'वाह, तब तो मैं खुशी से चलने को तैयार हूं।'

'अच्छा, तो तुम पांच मिनट में पिनी से विदा लेकर तैयार हो लो, डोंगी नीचे तैयार है।'

हेनरी चला गया।

मोशिए ने अपना लबादा संभाला, मैडम से हाथ और आंखें मिलाईं और चल दिए।

१५

कुछ ही क्षणों में हवा और लहरों का रुख पाकर कुहरे और लहरों में छिपती हुई नाव जहाज़ से बहुत दूर निकल गई। नाव पर कोई हथियार न था। कुछ खाने-पीने की चीज़ें और एक पीपा पानी था।

हेनरी ने कहा, 'यह क्या मोशिए, बिना हर्बे-हथियार ?'

मोशिए ने हंसकर कहा, 'बिना हथियार क्यों, हमारी पिस्तौलें तो हैं।' हेनरी हंस दिया।

नाव बहती चली। पहाड़ियां निकट आने लगीं। बीच समुद्र में ये पहाड़ियां सीधी खड़ी थीं। इनके बीच एक तंग रास्ता था, जिसमें होकर नाव खुले समुद्र में पहुंच सकती थी। हेनरी बड़ी होशियारी से नाव लिए जा रहा था। धीरे-धीरे नाव चट्टानों के पास पहुंच गई और उस गली में घुसी। इसी समय मोशिए ने पिस्तौल निकालकर गोली दाग दी। हेनरी की खोपड़ी चकनाचूर हो गई। डांड उसके हाथ से छूट गए, वह चक्कर खाकर समुद्र में गिर पड़ा। एक बार मोशिए ने अपने पीछे समुद्र-गर्भ में जाते हुए इस तरुण अंग्रेज़ को देखा। फिर उन्होंने पीने का पानी और खाने का सामान भी समुद्र में फेंक दिया, पिस्तौल भी फेंक दी।

वे अब दोनों हाथ-पैर फैलाकर नाव पर लेट गए। नाव अब खुले समुद्र में बिना दिशासूचक यन्त्र और बिना किसी प्रकार के अन्य साधन

के इधर-उधर लुढ़कनेवाले घोंघे के समान घूम रही थी।

सामने ही अंग्रेज़ी जहाज़ लंगर डाले पड़ा था। थोड़ी ही देर में जहाज़ के लोगों की नज़र नाव पर पड़ी। नाव असहाय है। उसपर एक आदमी भी पड़ा है। मृत है या जीवित, यह नहीं कहा जा सकता। कप्तान मूर ने तत्काल ही सहायता की नाव भेज दी और मोशिए बहुत आसानी से अंग्रेजी जहाज़ पर आ गए। दुर्घटना का एक किस्सा उन्होंने सुना दिया, और बीमारी और कमज़ोरी का बहाना करके पड़े रहे।

इस समय अंग्रेज़ों और फ्रैंचों में कहीं भी युद्ध नहीं हो रहे थे। इसलिए मोशिए का अंग्रेजी जहाज़ पर अच्छा सत्कार हुआ। अपने सौजन्य, शिष्टाचार तथा व्यक्तिगत विशेषताओं के कारण वे थोड़ी ही देर में कप्तान मूर और जनरल नॉट के मित्र बन गए। उन्होंने एक बैरन कहकर अपना परिचय दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि डिनर की टेबल पर प्रसिद्ध डाकू मोशिए फ्रांक फोर्ते जनरल नॉट और कैप्टेन मूर के साथ डिनर ले रहे थे। वे प्रत्येक बात का शालीनता से उत्तर देते और सभ्य-शिष्ट अंग्रेज़ी भाषा बोल रहे थे। बारम्बार अपनी प्राणरक्षा के लिए कैप्टेन और जनरल को धन्यवाद दे रहे थे।

अस्वस्थ और कमज़ोर होने का बहाना करके मोशिए जल्द ही अपने केबिन में सोने को चले गए। किसीको उनपर डाकू होने का सन्देह नहीं हुआ। जहाज़ का पूरा नक्शा मोशिए के पास था। उसे निकालकर उन्होंने ध्यान से उसे देखा। बड़ी देर तक वे उसे देखते रहे।

समुद्र शांत था और जहाज़ पर सन्नाटा था। एक सिपाही पहरा दे रहा था। रात-भर इतमीनान से मोशिए सोए। इससे वे तरोताज़ा हो गए। पिछली रात वे चुपचाप उठे। पहरेदार को देख उसके पास जा खड़े हुए। पहरेदार ने उनकी आवभगत देख ली थी। उसने उन्हें सलाम किया। मोशिए ने उसे एक उम्दा सिगरेट दिया। ज्योंही वह सिगरेट जलाने को झुका मोशिए का छुरा उसकी पीठ में घुसकर कलेजे को पार कर गया। एक शब्द भी उसके मुंह से नहीं निकला। मोशिए ने लाश समुद्र में धकेल दी। खून के दाग मिटा दिए। अब वे तेज़ी से नीचे उतर गए। वे सीधे वहां पहुंचे जहां तोपें ज़ंजीरों से बंधी हुई

थीं। उन्होंने अपने गुप्त औज़ारों की सहायता से एक तोप के बंधन खोल दिए और दबे पांव ऊपर अपने केबिन में घुस गए। किसीने भी उन्हें देखा नहीं, न किसी का ध्यान पहरेदार के गायब हो जाने पर था।

जहाज़ की आवश्यक मरम्मत हो चुकी थी और सूर्योदय के साथ ही जहाज़ मन्थर गति से अपनी राह चल दिया था। कैप्टेन के केबिन में जनरल नॉट, कैप्टेन मूर और मोशिए नाश्ता कर और इधर-उधर की बातें कर रहे थे।

कैप्टेन कह रहे थे, 'आसार अच्छे नज़र नहीं आते। हवा तेज़ हो रही है। आसमान में बादल छा रहे हैं। तूफान आएगा।'

'लेकिन आपके जहाज़ को क्या भय है कैप्टेन, जहाज़ काफी मज़बूत है। और आप तो बड़े-बड़े तूफानों का मुकाबला कर चुके होंगे। मोशिए ने हंसते हुए कहा।

'ओह, बहुत।'

'तो एकाध के हालात सुनाइए, मुझे इन बातों से बहुत दिलचस्पी है।'

'तो आप भी समुद्री यात्राओं के शौकीन हैं। अच्छा, सुनिए। एक बार...'

कैप्टेन की बात मुंह में रह गई। एक ज़ोर का धड़ाका हुआ। सारा जहाज़ बुरी तरह हिल गया।

कप्तान और जनरल लपककर बाहर आए। देखा सारे गोलेबाज़ ऊपर की ओर भागे आ रहे हैं।

कप्तान ने सरदार मेट से पूछा, 'माजरा क्या है वाटसन ?'

'ओह कैप्टेन, गज़ब हो गया। तोपखाने की एक तोप न जाने कैसे खुल गई, वह बुरी तरह लुढ़क रही है। किसी तरह कब्ज़े में नहीं आ रही।'

कप्तान का मुंह भय से पीला पड़ गया। जनरल के माथे पर भी चिन्ता की रेखाएं उभर आईं। मोशिए ने चटपट खड़े होकर कहा, 'हमें धैर्य से इस विपत्ति का सामना करना चाहिए।'

'निश्चय मोशिए,' जनरल नॉट और कैप्टेन नीचे की ओर दौड़ चले। मोशिए भी चले। परन्तु उन्होंने जहाज़ के एक ओर जाकर सबकी नज़र बचाकर एक संकेत किया, फिर उन्होंने आकाश की ओर

देखकर हाथ मले, और लपकते हुए नीचे को झपटे।

एक भयंकर विनाशक दृश्य सम्मुख था। बंधन से खुली हुई तोप भयानक राक्षसी रूप धारण कर चुकी थी। उसके पहिये चारों ओर तेज़ी से घूम रहे थे और वह गेंद की तरह लुढ़ककर दूसरी तोपों तथा जहाज़ की दीवारों को आहत कर रही थी। वह इधर से उधर जाती, जहाज के एक सिरे से दूसरे सिरे तक लपकती, और मस्त हाथी की तरह दीवारों से टक्कर मार रही थी। डेढ़ सौ मन की वह भयानक वज़नी चीज़ बच्चों की गेंद की तरह उछलकर धड़ाम से किसी दूसरी तोप से या दीवार से टकराकर उसे चकनाचूर कर रही थी। सबसे पहला वार उसने गोलंदाज़ों पर किया था, जो वहां काम कर रहे थे। वे सब पहली ही चपेट में चटनी हो गए थे।

जहाज़ बुरी तरह हिल रहा था। इसी समय तूफान का वेग भी बढ़ चला और समुद्र की लहरें पहाड़ की चट्टानों की भांति जहाज़ से टकराने लगीं। सारे जहाज़ पर चीख-पुकार मची हुई थी, और सब व्यवस्था भंग हो गई थी। जहाज बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो चुका था तथा सारी ही तोपें नष्ट-भ्रष्ट हो गई थीं। कैप्टेन और जनरल सीढ़ी पर हक्का-बक्का मुंह बाए खड़े थे। उन्हें कुछ करते नहीं बन पड़ रहा था। जो लोग मर गए थे, उनके शवों को निरन्तर तोप के पहिये पीस रहे थे। बड़ा ही भयंकर दृश्य था। लोग रस्से, पाल, गांठें, लकड़ी, लोहा जो हाथ लगे फेंक रहे थे, जिससे पहिया लुढ़कने से रुके। इन वस्तुओं की चिंदियां उड़ गई थीं। अब तूफान में ज़ोर भर गया था। भीतर तोप चोट कर रही थी, और बाहर तूफान गज़ब ढा रहा था। सबके सामने प्रलय का दृश्य था। इसी समय बाहर एक धड़ाका हुआ। ऐसा प्रतीत हुआ कि जहाज अब अतल में धंसा।

प्रधान मेट ने आकर इत्तला दी, 'कप्तान, समुद्री डाकुओं ने जहाज़ पर हमला किया है।' कप्तान और जनरल ऊपर दौड़ चले।

१६

ऊपर जाकर सरदार मेट ने दूरबीन लगाई। उसने कहा, 'कैप्टेन,

जहाज़ को हमारी ओर घुमाने का क्या अभिप्राय हो सकता है ? ये तो समुद्री डाकुओं का जहाज़ प्रतीत होता है ।'

कैप्टेन ने कहा, 'ऐसा ही मेरा अनुमान है । देखो फुर्ती करो, रस्सों और तारों का ढेर लगा दो, जिससे मस्तूल कमज़ोर न होने पाए । घायलों के लिए अलग जगह बना दो और जो तोपें ठीक हैं, उन्हें तैयार कर लो । बारूदखाना खोल दो और मल्लाहों तथा सिपाहियों को गोली-बारूद और बन्दूकें बांट दो ।

इस बीच डाकू जहाज़ और नज़दीक आ गया । कैप्टेन ने देखा, उसपर के सब आदमी हर्बा-हथियार से लैस थे तथा जहाज़ के सिरे पर एक भयंकर आदमी अंग्रेज़ी जहाज़ को पकड़ने के लिए हाथ में कांटा लिए मुस्तैद खड़ा था ।

कैप्टेन मूर ने कहा, 'जनरल, बड़ी मुसीबत है । हमारे पास सिर्फ दो तोपें ही काम लायक हैं ।' इस समय भी तोप अपना उपद्रव कर रही थी तथा तूफान जहाज़ को झकझोर रहा था । जहाज़ चाहे जब डूब सकता था । जनरल ने माथे का पसीना पोंछकर कहा, 'खैर, तुम पहले उनसे बात करो ।'

कैप्टेन ने मुंह में यन्त्र लगाकर कहा, 'तुम क्या चाहते हो और कौन हो ?'

डाकू-जहाज़ से जवाब आया, 'सब झण्डों को उतार दो । पालों को खोल डालो, हथियार फेंक दो । और ज़मानत के तौर पर जनरल नॉट हमारे जहाज़ पर फौरन आ जाएं ।'

'लेकिन तुम हो कौन ?'

'व्यर्थ बकवाद मत करो । जो कहते हैं वही करो ।'

इसी समय जनरल ने फायर का हुक्म दिया । दोनों गोले डाकुओं के जहाज़ के बीचोबीच आ गिरे । इससे डाकू-जहाज़ में आग लग गई । परन्तु इसी समय डाकू-जहाज़ अंग्रेज़ी जहाज़ से आ भिड़ा और गोलियां चलाते हुए डाकू दबादब अंग्रेज़ी जहाज़ पर कूदने लगे ।

जहाज़ की हालत बहुत ही खतरनाक हो रही थी । तोप की प्रत्येक टक्कर उसे ऐसा धक्का दे रही थी कि वह उलटते-उलटते रह जाता था । जनरल यथासम्भव अपने सैनिकों को संभाल रहे थे । पर अब युद्ध की बात छोड़ दोनों पक्ष जहाज़ों की रक्षा के लिए चिन्तित

हो रहे थे। दोनों ही जहाज़ों के डूबने की सम्भावना उठ खड़ी हुई। मोशिए ने ज्योंही मैडम को कूदकर इस जहाज़ पर आते देखा, उन्होंने पिस्तौल लेकर कैप्टेन को गोली मार दी। जनरल ने देखा, और कहा, 'तो मोशिए यह सब आप ही की योजना है ?'

'हां जनरल, बेहतर हो कि लड़ाई-झगड़ा बन्द कर दीजिए और जहाज़ हमारे हवाले कर दीजिए।'

'इस काम में अभी कुछ क्षणों की देर है मोशिए। लेकिन क्या आप मेरे तावे होते हैं ?'

'नहीं जनरल, मैं आपका सम्मान करता हूं। परन्तु...'

इसी समय डाकू-जहाज़ के बारूदखाने में आग लग गई और वह एक धड़ाके के साथ तीन टुकड़े होकर जलमग्न होने लगा।

इसी समय अंग्रेज़ी जहाज़ के पेंदे में तोप ने दो छेद कर दिए और जहाज़ में तेज़ी से पानी भरने लगा। जहाज़ बुरी तरह एक ओर को झुक गया। मोशिए ने कहा, 'जनरल, क्या आप जहाज़ मेरे हवाले करते हैं ?'

'नहीं, क्या आप मेरे तावे होते हैं !'

'नहीं।'

'खैर, तो बेहतर है अब लड़ाई बन्द कर दी जाए।'

'जहां आप खड़े हैं, जहाज़ का वह भाग आप ही के कब्ज़े में रहे और शेष जहाज़ पर आप मेरा अधिकार स्वीकार कर लें। अब हमारे पास केवल पांच मिनट ही का समय है। आप समझते हैं न मोशिए ?'

'समझ गया जनरल, आपका प्रस्ताव मैं स्वीकार करता हूं।' उसने अपने आदमियों को तुरन्त युद्ध बन्द करने का आदेश दिया फिर पुकार-कर कहा, 'मैडम, तुम यहां मेरे पास आओ।'

मैडम ने मोशिए के पास आकर कहा, 'अफसोस, यह अलभ्य खजाना समुद्र गर्भ में जा रहा है।'

'हम भी वहीं चल रहे हैं मैडम। क्या तुम घबरा रही हो ?'

'तनिक भी नहीं मोशिए। देखिए, मेरे दिल पर हाथ रखिए।'

'तो हाथ दो मैडम, अच्छे-बुरे में हम साथ रहें।'

जनरल ने चिल्लाकर कहा, 'महाशय, सब कोई नेशनल गीत गाओ।' उन्होंने यूनियन जैक हाथ में लिया और नेशनल गीत गाना

आरम्भ किया।

इस समय तक सब कोई कंठ तक जल में डूब चुके थे। तूफान की गरज, बिजली की कड़क, गीत की लय, मरतों की चीत्कार, सब कुछ एकाकार हो गई और क्षण-भर बाद इन सब जीवित-मृत पुरुषों तथा उस अतोल स्वर्णरत्न के भंडार को लेकर वह अविस्मृत जहाज़ समुद्र-गर्भ में लीन हो गया।

○ ○ ○

मुद्रक : रायसीना प्रिंटरी, दिल्ली-६

लेखनी के धनी आचार्य चतुरसेन का सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास···१८५७ के विद्रोह का विशद वर्णन और व्याख्या··· आदि से अंत तक रोचक और हृदयग्राही—

भारत की सर्वप्रथम पॉकेट बुक्स

हिन्द



पॉकेट

बुक्स